Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ॐ

वन्दे विश्वेश्वरं विभुम् ।

महेश्वर-ग्रन्थमाला का प्रथम पुष्प

LIBRARY
No. 11170
Shri Shri Ma Anandamayee Ashram

दक्षिण तीर्थ-यात्रा ।

(पूज्यपाद-अनन्त श्रीविभूषित-कनखल-बंगला मठाधीश्वर-आचार्यप्रवर १०८ स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजी महामण्डलेश्वर-महाराजकी दक्षिण-तीर्थ-यात्राका विशद-वृत्तान्त)

लेखक—ब्रह्मचारी रामकृष्णानन्द

प्रकाशक—कोठारीजी महाराज—
स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

4170
२८९.
Shri Shri Anandamayee Ashram
Varanasi

❀ हरिः ॐ तत्सत् ❀

महेश्वर-ग्रन्थमाला का प्रथम-पुष्प-

श्रीविश्वनाथो विजयतेतराम् ।

दक्षिण-तीर्थ-यात्रा

(श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य-वर्य्य-दार्शनिक-सार्वभौम-विद्यावारिधि-न्यायमार्तण्ड-वेदान्तवागीश-श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ कनखल-सुरतगिरि-बंगला (गिरीशानन्दाश्रम) मठाधीश्वर पूज्यपाद १०८ स्वामी श्री महेश्वरानन्द जी महामण्डलेश्वर महाराज का दक्षिण-तीर्थ-यात्रा का विशद वृत्तान्त)

मण्डलेश्वरपादानां शास्त्रोपदेशसंयुता ।
दक्षिणतीर्थयात्रेयं, श्रवणेन सुखावहा ॥

लेखक—ब्रह्मचारी रामकृष्णानन्द

प्रकाशक—कोठारीजी महाराज स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती ।

(प्राप्तिस्थान—(१) सुरतगिरि बंगला, मुँ० कनखल (हरिद्वार)
जि० सहारनपुर, उत्तर प्रदेश ।
(२) संन्यासाश्रम, विले-पारला-बम्बई

(मूल्य ०॥) आठ आना (मूल लागतसे भी कम)
पोस्ट व्यय अलग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

❋ दक्षिण-तीर्थ-यात्रा की विषय सूची ❋

(विषय)	(पृष्ठ)	(विषय)	(पृष्ठ)
वैद्यनाथधाम ··· ··· ··· ···	२	तिरुमलवाडि ···	५६
भुवनेश्वरमहादेव ··· ··· ···	५	जम्बूकेश्वरं ···	५६
जगदीशपुरी ··· ··· ··· ···	६	श्रीरंगम् (प्रवचन) ···	५७
साक्षीगोपाल ··· ··· ··· ···	६	त्रिचिनापल्ली ···	८८
श्रीकृष्ण-गंगा-मंगल-		चेट्टीनाड़ ···	९२
गिरि-पन्ना-नृसिंह ··· ··· ···	१२	कोविलूर ···	९५
मद्रास ··· ··· ··· ··· ···	१३	कालियार कोविल ···	
कांचीवरम् ··· ··· ··· ···	१४	एवं नवग्रह-देवता ···	१०३
कालहस्तीश्वर ··· ··· ··· ···	२२	रामेश्वर-एवं धनुष्कोटि-	१०४
व्यास-आश्रम ··· ··· ··· ···	२२	मदुरा-मीनाक्षी ···	१०८
तिरुपति-बालाजी ··· ··· ···	२६	पलनी-कुत्तालं एवं ···	
अरुणाचल ··· ··· ··· ···	२८	दक्षिण-काशी	११४
चिदम्बरं ··· ··· ··· ···	३२	पद्मनाभ-जनार्दन ···	
मायावरं ··· ··· ··· ···	३४	एवं कन्याकुमारी ···	११६
कुम्भकोणं ··· ··· ··· ···	३६	तिन्नेवेली-पोल्लाची एवं त्रिचुर	१२६
पापनाशक्षेत्रं ···	४२	कालटी-तीर्थ ···	१३०
तञ्जावरं ···	४६	कोयंबत्तुर एवं मैसूर ···	१३६
पञ्चनदक्षेत्रं ···	५२	बेंगलूर (प्रवचनसार) ···	१४५
पोनवासल् ···	५४	बम्बई से हरिद्वार-कनखल ···	१५४

—:❋०❋:—

पञ्चाक्षरं पावनमुच्चरन्तः, पतिं पशूनां हृदि भावयन्तः ।
भिक्षाशिनो दिक्षु परिभ्रमन्तः, कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥

—:❋०❋:—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

11/70

अवतरणिका ।

सत्तीर्थसेवा मनसः प्रसादिनी, देशस्य वीक्षा विविधा च कौतुकम् ।
क्षिणोत्यनर्थान् सुजनेन संगमस्तस्मान्न कस्मै भ्रमणं विरोचते ?॥

अच्छे- तीर्थोंका सेवन मनको प्रसन्न करता है, विविध-देशोंको देखना मनके कौतूहलको शान्त करता है, सज्जनोंका समागम अनर्थों का विनाश करता है, इस लिए तीर्थों में घूमना किसे अच्छा नहीं लगता ? ।

प्रथम—सुरतगिरि-बंगलामठके अधीश्वर-पूज्यपाद महामण्डलेश्वर महाराज श्री दक्षिण-तीर्थ-यात्राके अनेक-अंश काशीसे प्रकट होने वाले 'विश्वनाथ' मासिक-पत्र में क्रमशः प्रकाशित हो चुके थे । जिनमें अनेकविध धार्मिक-प्रश्नोंके उत्तर-प्रवचन-तीर्थ वर्णन आदि बहुत ही मनोरम-आनन्दप्रद-सामग्री भरी थी, इसलिए धर्मस्नेही पाठकोंने इसे बड़ा पसन्द किया था । अतएव अनेक महात्माओंने तथा भक्तोंने इसका पुस्तकाकार रूपसे प्रकट करने का आग्रह चालु रक्खा था । भगवत्कृपासे तथा बम्बई-निवासी-उदारहृदय-धर्मनिष्ठ-श्रीमान् एक सेठजी (नाम प्रकाशन की अनुमति नहीं) के प्रशस्तद्रव्यकी सहायता से इसका पुस्तकाकार रूप से प्रकाशन करने का विचार किया गया । प्रथम श्रीमान् सेठजीने पूज्यपाद मण्डलेश्वर-महाराज की गीता-प्रवचन सुधाका कई हजारों रुपयोंका व्यय करके-प्रकाशन कराया था । पश्चात् प्रवचन-सुधापानके आह्लादके वशीभूत होकर-पूर्वोक्त- अनिर्दिष्ट-नामवाले श्रीमान् सेठजी ने श्री पूज्य महामण्डलेश्वर महाराजके अन्यान्य-अप्रकाशित ग्रन्थोंके क्रमशः प्रकाशन के लिए प्रेमसे अमुक द्रव्यराशि समर्पण करके कहा कि- पूज्य महाराजके शुभनाम से समलंकृत 'महेश्वरग्रन्थमाला' का प्रकाशन करना चाहिये । और इसके अनेकविध- ग्रन्थ रूपीपुष्प क्रमशः प्रकाशित होते जाँय, एवं इन ग्रन्थों का मूल लागत से भी कुछ कम सस्ता मूल्य रक्खा जाय । जिससे इन अमूल्य ग्रन्थोंका दुरुपयोग भी न होगा एवं सर्व साधारण जनता भी इसका अनायासतः लाभ उठा सकेगी । श्रीमान् सेठ जी की इस प्रेरणा का एवं व्यवस्था का सन्मानकर 'महेश्वरग्रन्थमाला' का 'दक्षिण-तीर्थ-यात्रा' नाम का यह प्रथम पुष्प कनखल के प्रेस द्वारा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकाशित किया गया। अतः इसे धर्मस्नेही-भावुक-नरनारियों के तथा सन्तमहात्माओंके हाथ में समर्पण कर हमें आह्लाद का अनुभव होता है।

इस पुनीत ग्रन्थमें अनेक-प्रशस्त तीर्थों के वर्णन हैं, यात्राका मनोहारी वृत्तान्त है। जिज्ञासुओंके विविध प्रश्न हैं, एवं पूज्य महामण्डलेश्वर महाराजके शास्त्रीय-युक्तियुक्त उनके सदुत्तर हैं। मनोरम युक्तिसंगत प्रवचन भी हैं। शास्त्रीय-उपदेश भी युक्ति-युक्त एवं तर्कानुकूल ही होने चाहिये। तर्क-विरुद्ध शास्त्रीय-उपदेश भी प्रेक्षावान्-पुरुषों के लिए उपादेय नहीं होते। इसप्रकार की इसमें रसमयी रोचक-सामग्री होनेसे, यात्राप्रेमी धार्मिक-जिज्ञासुओंको इससे बड़ा आनन्द प्राप्त होगा, ऐसा विश्वास है।

इसके पश्चात् पूज्यपाद महामण्डलेश्वर महाराजके-श्रीमद्भागवत-संहितोपनिषत्-अध्यात्मज्योत्स्ना विवृत्ति—समलंकृत हिन्दी—अनुवाद सहित, प्रवचन सुधाका गुजराती अनुवाद, चातुर्वर्ण्यमीमांसा, सामवेदसंहितोपनिषत्-अध्यात्मज्योत्स्नाविवृत्ति-समलकृत, इत्यादि अनेक ग्रन्थ पुष्प-महेश्वरग्रन्थमाला के क्रमशः भगवत्कृपासे समयानुकूल प्रकट होते रहेंगे। अतः इस ससाररूपी अतिशुष्क-उत्तप्त-मरुभूमि में पड़े हुए-व्याकुल-पिपासुओं के लिए इस सुशीतल-मधुर-ज्ञानामृत की प्रपा--(प्याऊ-परब) का स्थायी प्रबन्ध करनेवाले-पूर्वोक्त-श्रीमान्सेठजीको जितना धन्यवाद दिया जाय, उतना कम ही है। धर्मात्मा-उदार मानव, ईश्वर-कृपा, महापुरुषोंका अनुग्रह, पुण्य का संभार, तथा शिष्ट-लोगोंका धन्यवाद प्राप्त करता ही है। तथापि इस ग्रन्थमालाके क्रमशः प्रकाशनके लिए शुभप्रेरणा एवं द्रव्य सहायता देने वाले-धर्मकार्यमें गुप्त रहकर नामरूपकी आसक्तिका त्याग करने वाले-तथा निष्काम-भावमें विशेष आदर रखने वाले-उक्त श्रीमान् सेठजी को परिवार सहित, भगवान् श्री विश्वनाथ जी सदा सुखी रक्खें और सुमति स्वास्थ्य, समृद्धि, चिरायु, यश, धर्म,-भक्ति-ज्ञान आदि दैवीगुणोंके लाभ द्वारा भगवान् अभ्युदय एवं निःश्रेयस प्रदान करें। ऐसी प्रार्थना है, एवं पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज का शुभाशीर्वाद है। हरिः ॐ तत्सत् शुभं भूयात् सर्वेषां—

स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती
(सुरतगिरि-बंगला मठके पूज्य कोठारी जी महाराज)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीमत्परमहंस--परिव्राजकाचार्य-दार्शनिक-सार्वभौम-विद्यावारिधि-न्यायमार्तण्ड
वेदान्तवागीश-श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ-बंगलामठाधीश्वर-प्रातः स्मरणीय-पूज्यपाद १०८

पता—सुरतगिरि बंगला (गिरीशानन्दाश्रम) पु०—कनखल (हरिद्वार) जि० सहारनपुर, उत्तर-प्रदेश।

श्री स्वामी महेश्वरानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

पूज्यपाद १०८ श्री स्वामी महेश्वरानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वरजी सहित

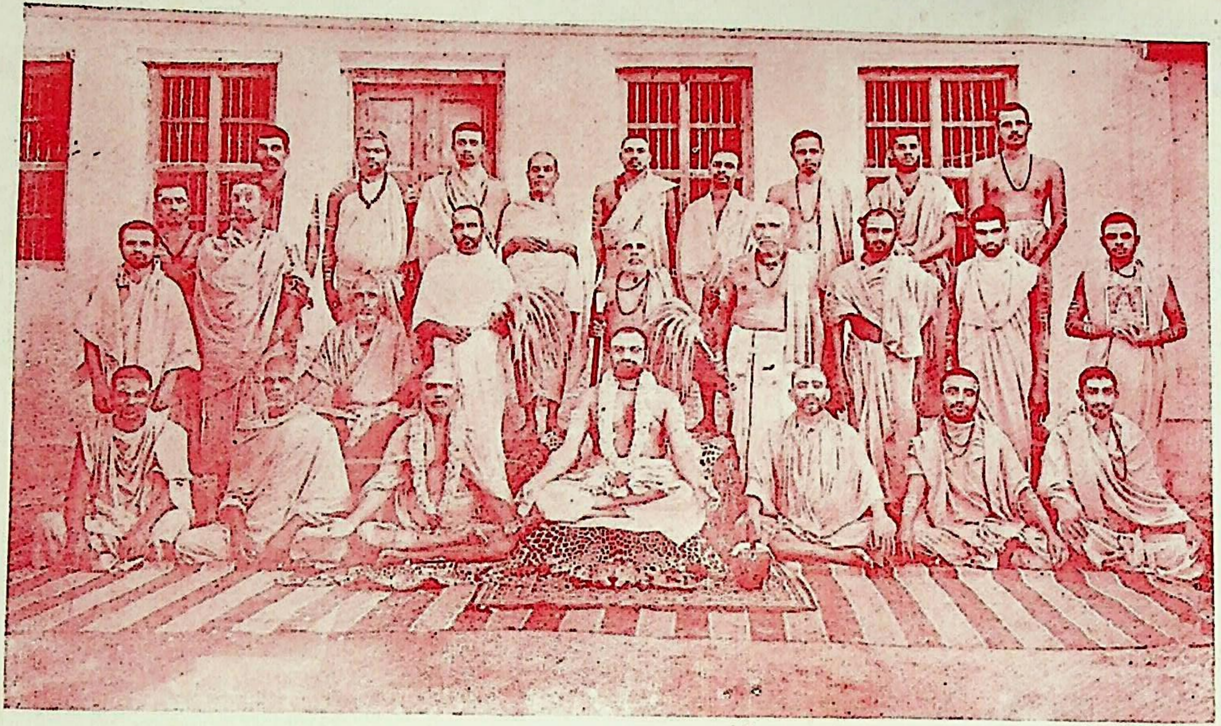

मण्डलीके अनेक सन्त महात्माओंके भव्य दर्शन

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

11/70

हरिः ॐ तत्सत्

दक्षिण-तीर्थ-यात्रा ।

(लेखक— श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य—श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ—दार्शनिकसार्वभौम—विद्यावारिधि—न्यायमार्तण्ड वेदान्तवागीश—पूज्यपाद—स्वामीश्री १०८ महेश्वरानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वरजी की मण्डली निवासी, ब्रह्मचारी रामकृष्णानन्द जी ।)

नमः शिवाय साम्बाय सगणाय ससूनवे ।
सनन्दिने सगङ्गाय सवृषाय नमोनमः ॥
अम्बागृहीतवामार्धं वन्दे चन्द्रकलाधरम् ।
लावण्यमधुराकारं कारुण्यरस—वारिधिम् ॥
जगदङ्कुरकन्दाय सच्चिदानन्दमूर्तये ।
गलिताखिलभेदाय नमः शान्ताय विष्णवे ॥
पराकृतनमद्बन्धं परं ब्रह्म नराकृति ।
सौन्दर्यसारसर्वस्वं वन्दे नन्दात्मजं महः ॥
आरामः कल्पवृक्षाणां, विरामः सकलापदाम् ।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ॥
विघ्नेश्वरः सदा भूयात्, विघ्नध्वान्तदिवाकरः ।
श्रेयसां निधिरानन्द–श्रेयसे भूयसे मम ॥
शरणागत–दीनार्त--परित्राण—परायणे ! ।
सर्वस्यार्तिहरे ! देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥
सर्वस्वरूपे ! सर्वेशे ! सर्वशक्तिसमन्विते ! ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दूर्गे ! देवि ! नमोऽस्तु ते ॥

विक्रम सं० १९९५ के आषाढ़ मासमें हरिद्वार-कनखल-सुरतगिरि-बंगला-मठसे करीब ३५ महात्माओं के समुदाय सहित श्रीस्वामीजी (महामण्डलेश्वर) महाराज दक्षिण-तीर्थयात्राका उद्देश्य लेकर चल पड़े। हरिद्वारसे ही कलकत्ता की टिकटें ले ली गईं। कुछ प्रेमी-भक्तोंके अनुरोधसे मण्डलीका चातुर्मास कलकत्ता-माहेश्वरी-भवनमें ही निश्चित हो गया था। मार्गमें श्रीकाशीजीमें उतर कर श्रीविश्वनाथ भगवान् के दर्शन किये। काशीसे हम लोग गया-धाम गये। फल्गु-गंगामें स्नान कर, विष्णु भगवान्के चरण-कमलोंका दर्शन किया। पश्चात् बुद्ध-गया-मठसे महात्माओंको लेने के लिये मोटरें आईं थीं, इसलिये हम लोग बुद्ध गया मठमें चले गये। वहां दो दिन रहे। भगवान् बुद्धके अत्युन्नत-प्राचीन मंदिरका दर्शन किया। वहां से श्रीवैद्यनाथ-धाम गये।

वैद्यनाथ-धाम।

यह बड़ा प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमें वैद्यनाथ जी की गणना है। वैद्यनाथ जी का ज्योतिर्लिङ्ग कैलाससे रावण लाया था। मंदिरके सामने भगवती पार्वतीका मंदिर है एवं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चारों तरफ देवी-देवताओंके भी अनेक मन्दिर हैं। समीपमें ही शिवगंगा नामका सरोवर है। प्रथम उसमें स्नान कर पूजाकी सामग्री लेकर भगवान् शंकरकी विधिवत् पूजा करनी चाहिये, मंदिरमें ही महात्माओंने स्तुति-महिम्न-स्तोत्र-पाठ आदि किये। पश्चात् श्रीबालानन्द-ब्रह्मचारीजी के आश्रममें गये, वहीं मण्डलीका निवास था। ब्रह्मचारीजीका आश्रम अतीव विशाल एवं दर्शनीय है। संस्कृत-विद्यालय आयुर्वेदीय-औषधालय आदि अनेक परोपकार-परायण-संस्थाएँ आश्रममें ही सम्मिलित हैं। आश्रमके वर्तमान अधिष्ठाता ब्र०मोहनानन्द जी सुशील-विद्यारसिक एवं अतिथि-प्रिय हैं। अपने लोग उस आश्रम में ४ रोज बड़े आनन्दसे रहे। ब्रह्मचारीजीने महात्माओंकी अच्छी सेवा की। आश्रममें ही महामण्डलेश्वरजी महाराजका प्रवचन होता था। दो रोज वैद्यनाथ भगवान् के मंदिरमें भी प्रवचन हुआ। कई हजार जनताने स्वामीजी महाराजके उपदेशसे लाभ उठाया। आश्रमसे १० माईलकी दूरी पर तपोवन नामका एक रमणीय स्थान है। वहां जाकर ब्रह्मचारीजीकी सुन्दर-शान्त गुफाका दर्शन किया। तपोवन से ४-५ माईलकी दूरी पर त्रिकूटाचल नामका एक सुन्दर पहाड़ है। वहां भगवान् श्रीशंकरका एक प्राचीन मंदिर एवं एक छोटा-सा पानीका झरना है, वहां भी दर्शनके लिये गये। ऋषि-मुनियोंकी तपः स्थलियोंको देखकर किस भावुक-हृदयमें आह्लाद न होगा?

पश्चात् वैद्यनाथजीसे कलकत्ता गये, वहां २॥ मास रहे, मण्डली में पठन-पाठन सत्संग प्रवचन आदि प्रतिदिन होता रहा। कलकत्ता एक बड़ा नगर है, मारवाड़ी सेठ यहां बिशेष संख्यामें रहते हैं। कलकत्तासे कटक गये। कटक-शहरके दोनों तरफ दो विशाल नदियाँ बहती हैं, एक का नाम है, महानदी तथा द्वितीयका नाम काठपाड़ी। वहां १०-१५ दिन रहे। सनातन-धर्मका उपदेश भिन्न-भिन्न अनेक स्थानों पर हुआ। लोग कई प्रकारके धर्म सम्बन्धी प्रश्न करते रहे,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वामी जी महाराज बड़ी ही शान्तमुद्रासे उन सभी प्रश्नों का सप्रमाण सयुक्तिक समाधान कर देते थे। कटक से 'भुवनेश्वर' गये।

कटकमें श्रीस्वामी जी महाराजसे किसी जिज्ञासु-भक्तने कुछ उपदेश देने के लिए प्रार्थना की। श्रीस्वामीजीने उसको निमित्त बना कर इस प्रकार उपदेश दिया—'कल की खबर नहीं, काल शिर पर खड़ा है, जो समय गया, वह पुनः हाथ में नहीं आता। अतः इस अमूल्य-समयका सदुपयोग करना चाहिये, आत्म-कल्याणके लिए प्रयत्न करना चाहिये, सत्संग एवं भजन में विशेष-रुचि बढ़ानी चाहिये। जो इस सुवर्णावसरको व्यर्थमें ही बिताता है—उसको अन्त में हाथ मल कर पश्चाताप करना ही शेष रहता है। भगवान्से इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये कि—हे भगवन्! यह मेरी वाणी सदा आपके पावन-नामोंका एवं दिव्य-गुणोंका गान करती रहे, ये मेरे नेत्र विश्वमें अनेक-रूपोंसे विद्यमान आपको ही सदा देखें, ये मेरे कान, सदा आपके दिव्य-सदुपदेशोंको सुनें, यह मन सदा आपके ही सच्चिन्मय-सुखघन चरण-कमलों का ही चिन्तन करता रहे। और मेरा यह शरीर जनता-जनार्दनकी यथाशक्य निष्काम सेवा में ही लगा रहे। कृपया प्रभो! यही मुझे आपसे वरदान मिलना चाहिये।

सदा सत्य, मधुर, एवं हितकारी-भाषण करो, संकुचित-हृदय मत रक्खो, निष्कपट-उदार एवं प्रेमसद्भाव-पूर्ण हृदय बनाओ, ऐसे प्रशस्त-हृदयवाले मनुष्यको अदृष्ट-दैवी-शक्तियां सहायक होती हैं। हमेशा नम्र एवं विनयशील रहो, विनय वशीकरण मन्त्र है, इससे संसारके समस्त प्राणी वशमें हो जाते हैं। किसी भी निर्णय के लिए जल्दबाजी मत करो, गम्भीर-विचार करो, शिष्ट-प्रामाणिक-मनुष्योंकी सम्मति पर ध्यान रक्खो, दयालु बने रहो, तुमसे कोई किसी भी प्रकारकी यदि सहायता चाहता है, तो उसको यथाशक्ति सहायता पहुँचाओ, तुम्हारे भले-कार्योंसे विश्वनियन्ता भगवान् प्रसन्न होता है। अन्दरमें पवित्रता एवं बाहर में स्वच्छता रक्खो, आन्तरिक-पवित्रता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से ही बाहर की स्वच्छता सुशोभित होती है। किसी भी बातका (धन, विद्या, परोपकार, जाति, कुल, आश्रम आदि का) अभिमान मत करो। जो कुछ तुम देख रहे हो, जिनके लिए अहंकार करते हो, वह सब क्षणभंगुर-विनाशी है, अहंकारी मनुष्य स्वयं ही तुच्छ हो जाता है। अपनी प्रतिष्ठा एवं प्रामाणिकता की रक्षा के लिए सदा प्रयत्नशील रहो। प्रतिष्ठा-शून्य, अप्रामाणिक मनुष्य जीवनके किसी भी क्षेत्रमें सफल नहीं हो सकता।

सादगीसे रहो, अपनी फिजूलकी आवश्यकताओं को कम करो, विलासके गुलाम मत बनो, विलासी बन कर आवश्यकताओंके बढाने पर तुम किसी भी प्रकारसे सुखी नहीं रह सकते। स्वस्थ रहो, अपने स्वास्थ्यका पूरा ध्यान रक्खो, स्वास्थ्यनाशक आहार-विहारादि से सावधान रहो। स्वास्थ्य लाभ के लिए शुद्ध वायु शुद्ध-जल पथ्य-भोजन, व्यायाम, संयम एवं शान्तिकी बड़ी आवश्यकता है। सबसे अनासक्त रहो, असंग भावना दृढ़ करो, यह संसार चलाचलीका मेला है, किसी न किसी समय हमें इस संसारकी रंग-भूमिसे सदाके लिए बिदा लेनी ही पड़ेगी, ऐसा समझो, इसलिए अभी से ही धर्म और भगवद्भजन की मजबूत गठड़ी बांधकर तैयार रक्खो, अन्तिम घण्टा कब बजता है, यह कोई नहीं जान सकता। प्रसन्नता एवं उत्साह के साथ अपनी ड्यूटी बजाते रहो, परन्तु चिन्ता मत करो, विश्वास रक्खो कि भगवान् विश्वनाथ सभी प्रकारसे आनन्द मंगल करेगा।

भुवनेश्वर-महादेव।

भुवनेश्वर-महादेवका बहुत प्राचीन एवं पौराणिक-स्थान है। पद्मपुराण, ब्रह्मपुराण आदि पुराणोंमें इस स्थानका बड़ा महत्त्व गाया गया है। स्टेशनसे भुवनेश्वरजीका मंदिर तीन मील दूर है। रास्ते में बड़ा ही सुहावना-बन देखनेमें आता है. इस बनमें कोचलेके वृक्ष बहुत हैं, इसलिए स्वास्थ्यके लिएभी भुवनेश्वरका स्थान अच्छा माना जाता है। इस बनमें अनेक प्राचीन मंदिर मिलते हैं। आगे चलने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पर भुवनेश्वर मंदिरके समीप एक बड़े विशाल-सरोवरका दर्शन होता है। सरोवरका जल अतीव निर्मल रहता है। यह 'बिन्दु-सरोवर' के नामसे प्रसिद्ध है। यहां पर मारवाड़ी सेठोंकी दो विशाल धर्म-शालाएँ भी हैं। प्रथम सरोवरमें स्नान, संध्या, तर्पण आदि करके पूजनकी सामग्री लेकर भगवान् भुवनेश्वर महादेवके विशाल-मंदिरमें पूजा की। मंदिर क्या है ? देखते ही दर्शक का हृदय आनंद से लबा-लब भर जाता है, भारतवर्षकी प्राचीन कलाका जीता जागता नमूना है, मंदिरका शिखर विशाल एवं गगन-चुम्बी है। भुवनेश्वरका पौराणिक नाम 'एकाम्रकानन' है। इस स्थानमें भगवान् भुवनेश्वरके अतिरिक्त और भी सैंकड़ों प्राचीन मंदिर हैं। कपिलेश्वर, अनन्त-वासुदेव, केदा-रेश्वर, मुक्तेश्वर, ब्रह्मेश्वर, परशुरामेश्वर इत्यादि प्रधान मंदिर माने जाते हैं। बिन्दु-सरोवरके अतिरिक्त अनेक सरोवर एवं कुण्ड भी हैं। जिनके नाम 'पापनाशिनी, गङ्गायमुना, कोटि-तीर्थ, गौरीकुण्ड, रामकुण्ड, केदारकुण्ड' इत्यादि हैं।

भगवान् भुवनेश्वरजीका लिङ्ग-विग्रह बड़ा विशाल है, लिङ्गकी आकृतिभी कुछ विचित्र-सी है। उस लिङ्गमें तीन विभाग-से नजर आते हैं, जो ब्रह्मा विष्णु एवं शिव के द्योतक माने गये हैं।

महामण्डलेश्वरजी महाराज सहित सभी महात्माओंने इस पवित्र स्थानमें ३-४ दिन रहकर सर्वत्र भ्रमण कर, अनेक मंदिरोंके दर्शन कर बड़ा आनन्द उठाया। इतने महात्माओं के समुदायको देखकर भावुक भक्तोंके हृदयमें श्रद्धाभक्तिका संचार हो जाता था। भगवान्-भुवनेश्वर महाराजके मंदिरमें जब तक रहे, तब तक पूजा, स्तुति-पाठ आदि बड़े प्रेमसे होता रहा। भुवनेश्वर जी से जगन्नाथ पुरी गये।

जगदीश-पुरी।

चारों धामोंमें यह एक प्रसिद्ध धाम है। स्टेशन पर पहुंचते ही मंदिरका शिखर दृष्टिगोचर होने लगता है। भावुकोंके हृदयमें अपूर्व-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हर्षका अनुभव होता है। महात्माओंने बड़े हर्षके साथ 'नमः पार्वतीपतये' की हर्षध्वनिसे स्टेशनको गुञ्जायमान कर दिया। स्टेशन पर ही पण्डोंके झुण्ड यात्रियोंको घेर लेते हैं। स्टेशनसे मंदिर डेढ़ मील दूर है। पुरीमें अनेक अच्छी २ धर्मशालाएँ हैं। अपने लोग मारवाड़ी सेठ रामचन्द्र गोयनकाकी धर्मशालामें ठहरे थे। यहां चन्दन तालाब नामका सरोवर बड़ा सुन्दर एवं दर्शनीय है। उसमें प्रथम स्नान करना चाहिये। पश्चात् पूजन सामग्री लेकर मंदिर में भगवान् के दर्शनार्थ जाना चाहिये। मंदिरके समीप काष्ठ-निमित षोडश-पहियों वाला विशाल एवं अत्युन्नत रथ देखने में आता है। रथयात्रा के दिन इस रथमें विराजमान होकर भगवान् जनकपुर पधारते हैं। इससे आगे जाने पर मंदिर का विशाल द्वार आता है। मंदिर की अद्भुत एवं सुन्दर रचना है, मंदिरके देखनेसे भारतवर्षकी प्राचीन स्थापत्य-कला की समुन्नति समझमें आ जाती है। मंदिरमें मुख्य विशाल मंडपके अतिरिक्त और भी अनेक मण्डप हैं। मंदिरमें काष्ठ-ब्रह्मके विशाल विग्रहसे जगन्नियन्ता भगवान् जगन्नाथजी, श्रीबल-भद्रजी एवं श्रीसुभद्राजीका परमानन्दमय दर्शन होता है। श्रद्धाभक्ति पूर्वक पूजन-अर्चन-वन्दन, स्तुति-पाठ आदि करके भगवन्नाम उच्चारण पूर्वक भगवान् की परिक्रमा करनी चाहिये।

भगवदनुग्रहसे सन्तोंको पूजन-स्तुति-पाठ आदि के लिए पूरा समय; एवं पूरी अनुकूलता मिल जाती थी। काशी-हरिद्वार के महात्माओं का नाम सुनकर सभी लोग आदर कर प्रसन्न होते थे।

यहां के लोग एकादशी नहीं मानते; कहते हैं—यहां एकादशी औंधी टांग रक्खी है। अतएव एकादशीके दिन भगवान्को एक अधिक भोग लगता है। मंदिरमें एक प्राचीन वट-वृक्ष भी है। मंदिरके बाह्य भागमें कुछ अश्लील पाषाण निर्मित चित्र भी देखने में आते हैं। विद्वान् लोग उन चित्रोंके विषयमें अनेक विध-तात्पर्य बतलाते हैं। कुछ-लोग पौराणिक-गाथा के अनुसार कहते हैं कि-इन्द्रने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मंदिरकी रक्षाके लिए इन चित्रोंका निर्माण कराया था। कुछ लोग कहते हैं—कि जब तक मनुष्य इन अश्लील-चित्रोंसे बोधित-कामादि दोषोंका परित्याग नहीं करता; तबतक वह भगवद्दर्शनका अधिकारी नहीं हो सकता। जो कुछ रहस्य हो, परन्तु पवित्र-धार्मिक मंदिरमें इन अश्लील-चित्रों की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। अश्लील दर्शनों से अश्लील भावों की उत्पत्ति स्वाभाविक है।

श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजने इन चित्रोंके विषयों में कुछ समझदार पण्डोंसे कहा था। उन पण्डोंने कहा कि—महाराज जी! शनैः शनैः हम लोग इन अश्लील चित्रोंको हटाते जाते हैं।

मंदिरकी-बाह्य परिक्रमामें भी अनेक मंदिर हैं, समीपमें ही भगवान् का प्रासादागार (रसोई–घर) है, यहां एकके ऊपर एक ऐसी अनेकों भात की हांडियां चढ़ी रहती हैं, विविध शाक, दाल, पकवान पूरी आदि दिन भर बनते ही रहते हैं। भगवान् को भोग लगा कर इन सब भात आदि खाद्य-पदार्थोंका एक छोटा सा बाजार लगता है। सभी जातिके लोग इस प्रसादको खरीदने दौड़ते हैं। अगुलियोंसे इन पदार्थों का स्वाद चखते जाते हैं, अनेकों की उच्छिष्ट अंगुलियां अनेक हंडियों में परीक्षार्थ प्रविष्ट होती हैं, विशिष्ट-स्वाद-युक्त पदार्थ खरीद लिये जाते हैं। यहां भगवत्प्रसादमें जाति-पांतिका कुछ भेद नहीं माना जाता। उच्छिष्ट अनुच्छिष्ट का कुछ ख्याल नहीं रक्खा जाता, 'सर्वं ब्रह्ममयं रे! रे! सर्वं ब्रह्ममयम्'। का विशाल सिद्धांत यहां पूर्ण चरितार्थ हो जाता है। भावुकलोग बड़े प्रेमसे गाते हैं कि—'जगन्नाथके भातमें जगत् पसारे हाथ'। कुछ पण्डितोंसे इस विषय में स्वामीजी महाराजने पूछा था, उत्तर मिला कि-स्वामीजी महाराज! पौराणिक-माहात्म्य ही ऐसा है-जगन्नाथजीके प्रसादमें उच्छिष्टकी एवं छुआछूतकी कल्पना करनी ही नहीं चाहिये, जो कल्पना करता है, वह अपराधी माना जाता है; ऐसा पुराणोंमें लिखा है। स्वामीजी महाराज इस प्रकारका उत्तर सुनकर मुस्करा कर बोले—सन्तो! कहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तो सक्रियरूपसे अद्वैतवाद घटना चाहिये। अपना तो सिद्धान्त है कि-'भावाद्वैतं सदा कुर्यात् क्रियाद्वैतं न कर्हिचित्।' परन्तु इस पुनीत-भगवद्धाममें भावाद्वैत एवं क्रियाद्वैतका गंगायमुनाकी तरह संगम होकर डबल अद्वैतवादका प्रचार हो रहा है, यह बड़े सौभाग्यकी बात है।

मंदिरसे करीब तीन मील दूर पर 'जनकपुर' है, रथयात्राके समय भगवान् यहां रहते हैं, यहांकी दीवालें अद्भुत-चित्रोंसे चित्रित हैं। समीप ही एक विशाल सरोवर है। मार्कण्डेय-महादेव बेड़ी-हनुमान् आदिके यहां दिव्य प्रसिद्ध दर्शन हैं। इस धाममें आद्य जगद्गुरु भगवान् आचार्य श्रीशंकर स्वामीजीका 'गोवर्धनमठ' है, इस प्राचीन पीठमें शंकर स्वामीजीकी तथा गोपाल-भगवान्‌की अद्भुत प्रतिमाएँ हैं, इस मठका अवश्यमेव दर्शन करना चाहिये। यहां समुद्रका स्नान भी करना चाहिये चंचलानन्द भगवान् समुद्रके स्नानके समय जलके उत्तालवेगके गमनागमनसे विलक्षण-आह्लादका अनुभव होता है।

कुछ विशिष्ट-पण्डितोंकी प्रेरणासे श्रीस्वामीजी महाराजका दो रोज भगवान् जगन्नाथजीके मंदिरमें ही सनातन धर्म-महत्त्व, अद्वैतवाद एवं स्मार्तसिद्धान्तकी विशिष्टता पर बड़ा जोरदार व्याख्यान हुआ। व्याख्यानके समय कई हजार श्रद्धालु जनता उपस्थित होती थी। ७-८ रोज यहां धर्मशालामें बड़े आरामसे तीर्थ दर्शन करते रहे, पश्चात् साक्षी-गोपाल चले गये।

साक्षी-गोपाल

स्टेशनसे साक्षी गोपालजी एकमील दूर हैं। यहां एक धर्मशाला भी है, समीप तीर्थ-सरोवर भी है। यहां भगवान् मुरलीधर-श्याम-सुन्दर श्रीकृष्णके पुनीत दर्शन होते हैं। एक कदम्बका वृक्ष भी है। कहते हैं कि-भगवान् श्रीश्यामसुन्दर वृन्दावनसे अपने अनन्यभक्तके किसी विशिष्ट कार्यमें राजाके समक्ष गवाही देनेके लिए यहां पधारे हुए थे, इसलिए भगवान्‌का तबसे साक्षी-गोपाल नाम पड़ा, और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्तके आग्रहसे भगवान् यहां रहने लगे। सच है—"भक्तके वशमें हैं भगवान्" 'भक्तिमान् मे प्रियो नरः। (गीता)

साक्षी-गोपालमें पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराजसे किसी न्यूलाईट एम० ए० डिग्री पास तर्कवादी व्यक्तिने इस प्रकारके अनेक प्रश्न किये, और श्रीस्वामीजीने बड़ी शान्ति एवं प्रसन्नताके साथ तर्कोंके इस प्रकार उत्तर दिये।

प्रश्न—ईश्वर-परमात्मा, निराकार है, व्यापक है, तो निराकारकी साकार मूर्ति कैसी ?

उत्तर—'अ इ उ' आदि शब्द निराकार हैं, तथापि जो तुम पढ़ रहे हो, वह क्या निराकार-शब्दकी साकार मूर्तियां नहीं हैं ?।

प्रश्न—निराकार की साकार-कल्पनासे क्या लाभ ?, क्या आवश्यकता ?।

उत्तर—प्राथमिक-साधकोंको परमार्थ-पथमें अग्रसर होनेके लिए साकार-कल्पनाकी आवश्यकता है। जैसे किसीने कहा—अग्नि ले आओ, तब वह काष्ठ आदिके अवलम्बन द्वारा अग्नि ले आता है; केवल अग्नि नहीं ले आ सकता। वैसे निराकार-परमात्माकी उपासना साक्षात् नहीं हो सकती किन्तु साकार-मूर्तिकी कल्पना द्वारा ही सिद्ध होती है। इसलिए हमारे शास्त्रोंमें कहा है कि-निराकार ब्रह्म ज्ञेय (ज्ञानगम्य) है, और साकार-ब्रह्म उपास्य है। संसारकी स्त्री-पुत्र धनादि साकार मूर्तियों में भ्रमण करने वाला एवं आसक्त रहनेवाला चित्त एकदम निराकार ब्रह्ममें कैसे लग सकता है ? नहीं लग सकता अतः प्रथम वह चित्त, साकार-भगवान्की मूर्तिमें लगाया जाता है, यही लाभ है।

प्र०—मूर्ति नकल है, नकलकी पूजासे असलकी प्राप्ति कैसे होगी ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उ०—नकलसे असलकी भी प्राप्ति होती है भारतका नकली नक़्शा देखनेसे असली भारतका परिचय प्राप्त होता है। घोड़ेके नकली पदचिह्नोंसे असली घोड़ेकी प्राप्ति हो जाती है।

प्र०—ईश्वरकी मूर्ति कल्पनासे चेतन ईश्वर जड़ बन जाता है इसलिये ईश्वर नाराज होता होगा ?

उ०—मनुष्य क्या अपने फोटोसे नाराज होता है? मूर्ति कल्पना से चेतन जड़ नहीं होता, किन्तु जड़ चेतन हो जाता है। मूर्तिमें चेतन ब्रह्मकी भावना की जाती है; अतः भावना की सिद्धि है।

प्र०—जड़में चेतनकी भावना करनेसे क्या वह जड़ चेतन हो जायगा ?, तब तो सभी लोग पत्थरमें हीरेकी भावनाकर माला-माल हो जाने चाहियें ?

उ०—जब चेतन ईश्वर सर्वव्यापक है, तब वह मूर्तिमें भी तो विद्यमान है। अतएव चेतन भावना प्रामाणिक है, वह व्यर्थ नहीं हो सकती, यद्यपि पत्थर हीरेका दृष्टान्त विषम है, पत्थरमें हीरा विद्य-मान नहीं है। तथापि दृढ़-भावनामें अलौकिक शक्ति है, पत्थर भी हीरा हो सकता है।

प्र०—मूर्ति निरा पत्थर है, उसमें कोई तत्त्व देखनेमें नहीं आता ?

उ०—सरकारी नोटों में क्या तत्त्व है ? कागज के टुकड़ोको लाख-करोड़ क्यों समझते हो ? नादान लडका नोटको केवल कागज माने, परन्तु सयाना केवल कागज नहीं मान सकता, उसी प्रकार नास्तिक-मूर्तिको निरा पत्थर माने, परन्तु आस्तिक-श्रद्धालुके लिए वह मूर्ति चेतन भगवान् है, उसीकी उपासनासे चेतन-भगवानके दर्शन हो जाते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीस्वामीजी महाराजके ऐसे युक्ति-युक्त उत्तर सुनकर वह जन्टलमेन नमस्कार कर चलता बना।

साक्षी गोपालजीसे मद्रास जानेको हम तैयार हो गये, क्योंकि जगन्नाथजीसे ही सीधी मद्रासकी करीब ४० टिकटें लीं थीं। खुरदा-रोड़से मद्रास जाने वाली सीधी रेलकी सड़क विशिष्ट-वर्षासे टूट जाने के कारण अपने लोगोंको बड़े टेढ़े रास्तेसे मद्रास जाना पड़ा, पांच दिन एवं पांच रात्रि गाड़ीमें रहना पड़ा, स्नान, भिक्षा आदिके लिए बीचमें उतर जाया करते थे। खड़गपुर, बिलासपुर, रायपुर, वलटीयर, विजयानगर और बिजवाड़ा होकर मद्रास जाना पड़ा। उडीसा बंगाल, बिहार, मध्यप्रान्त, तैलंग एवं द्रविड इन छः देशोंके इस सफरमें दर्शन मिले। बीचमें गोदावरी गंगाका दर्शन मिलता है। स्नानार्थी को यहां उतरना चाहिये।

श्रीकृष्ण-गंगा एवं मंगलगिरि-पन्नानृसिंह।

गोदावरीसे रवाना होकर 'बिजवाड़ा' स्टेशन पर उतरना चाहिये। यहां पर श्रीकृष्णगंगा तीर्थ है। कृष्णानदी बड़ी विशाल है, जल भरपूर रहता है, वेगसे चलता है, इसमें स्नान करनेका बड़ा महत्त्व है, स्टेशनसे पौन मील दूर है। ठहरनेके लिए समीप ही हैदराबाद वाले एक सेठ की धर्मशाला भी है। यह कृष्णा तैलंग देशमें है। छोटी २ पहाड़ियोंके कारण यहां का दृश्य मनोहर है। मण्डलीका यहां दो दिन निवास हुआ।

पश्चात् बिजवाड़ासे छोटी लाईन द्वारा मंगलगिरि पहाड़में गये। यहां पन्नानृसिंह भगवान्के दर्शन होते हैं। पहाड़की चढ़ाईके लिए पक्की पत्थरोंकी सीढ़ियां बनी हैं उनकी संख्या करीब ४७५ है। यहां नृसिंह-भगवान्को गुड़ एवं चीनीके शरबतका भोग लगाया जाता है। दर्शन-पूजन स्तुति पाठ आदि करके सभी महात्मा लोग वापिस बिजवाड़ा लौट आये।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मद्रास (मद्रपुरी-चेन्नपुरी)।

बिजवाड़ासे मद्रास मेलमें सवार होकर मद्रास पहुँचे। यह एक प्रसिद्ध नगर है। इसका संस्कृत नाम है मद्रपुरी एवं चेन्नपुरी। यहाँ मारवाड़ी सेठ रायबहादुर बँशीलालजी अबीरचन्द्रजीकी स्वतन्त्र धर्मशालामें ठहरे थे। करीब दो-अढ़ाई मास तक यहाँ मण्डलीका निवास हुआ। पूज्यपाद महामण्डलेश्वरजी महाराजका प्रतिदिन गीता-प्रवचन होता रहा। बीकानेरके मारवाड़ी सेठ तथा गुजरातके खेड़ावाल ब्राह्मणोंने सत्संगका एवं महात्माओंकी सेवाका विशिष्ट लाभ उठाया। जहां मण्डलीका निवास था उस स्थानको 'साहूकार पेठ' कहते हैं। इसके समीप ही दक्षिणकी तरफ श्रीएकाम्रेश्वर-महादेवका तथा सुब्रह्मण्य-कातिकेय-स्वामीका भव्य दर्शनीय एवं विशाल मंदिर है। पश्चिमकी तरफ बालाजी भगवान्का मंदिर है। इन मंदिरोंके भी श्रद्धा भक्ति पूर्वक दर्शन करने चाहिये। 'तिरुवलकेनि' नामक स्थानमें पार्थसारथि भगवान्के मनोहर एवं भव्य दर्शन होते हैं, यह स्थान ५-७ मील दूर है इसलिये ट्राम तथा मोटर द्वारा वहां जाना चाहिये। नैलापुर नामक स्थानमें कपालीश्वर-महादेवका विशाल मंदिर है। उत्तर-भारतके मंदिरोंकी अपेक्षा दक्षिण भारतके मंदिर बहुत बड़े विशाल एवं चित्ताकर्षक होते हैं, मंदिरके साथ एक छोटा बड़ा सरोवर भी होता है, मंदिर के गोपुर गगनचुम्बी अत्युन्नत होते हैं। उनमें अनेक देव-देवियोंके विशिष्ट विग्रह निर्माण किये हुए होते हैं। 'तिरवयूर' नामक स्थानमें भगवान् शंकरका एवं जगन्माता पार्वतीका भव्य विशाल मंदिर है, इन स्थानोंके भी हमने बड़े प्रेमसे दर्शन किये। इस स्थानमें एक सिद्ध महात्माका समाधि मंदिर है। उस मंदिरके पृष्ठभागमें कान लगानेसे ॐ ॐ मन्त्रकी स्पष्ट ध्वनि सुननेमें आती है। सम्भव है कि-इस स्थानमें उस विशिष्ट-महात्माने ॐ मन्त्रकी सुदृढ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आराधना की होगी, अतएव अब तक भी उस 'ॐ' मन्त्रकी आश्चर्यमय अलौकिक-प्रतिध्वनिका प्रभाव सबको श्रवण-गोचर होता होगा। भगवन्नाममन्त्रोंमें विलक्षण शक्ति होती है। जब हम सर्प-बिच्छुओंके मन्त्रोंमें शक्ति मानते हैं, तब क्या भगवन्मन्त्रोंमें विशिष्ट शक्ति न होगी ? सभी महात्माओंने इस चमत्कारिक-नादका अच्छी प्रकारसे अन्वेषण किया; परन्तु उसमें किसी भी प्रकारकी नकल उपलब्ध न हुई।

मद्राससे जाते समय, हरिनाम संकीर्तनके साथ महामण्डलेश्वर जी महाराजको भव्य बिदाई देनेके लिए साहुकारपेठके मारवाड़ी, गुजराती, हिन्दुस्थानी, सिन्धी, मुलतानी, तथा दक्षिणी भक्तोंने मिल कर बड़ा भारी जलूसका आयोजन किया था। एकादशीकी रात्रिमें बाजे गाजेके साथ नगरके अनेक विशिष्ट स्थानोंमें भ्रमण करता हुआ जलूस ४-५ घण्टेके बाद निवास स्थान पर पहुँचा और रात्रि भर संकीर्तन होता रहा। जलूसमें कमसे कम ५-७ हजारसे भी अधिक जन-समुदाय था। सभी भक्तोंने मिलकर अभिनन्दन-पत्र भी श्रीस्वामी जी महाराजकी सेवामें समर्पित किया।

शिवकांची-विष्णुकांची (कांचीवरम्)

मार्गशीर्ष सुदी १३ सोमवारको ४ बजे मोटरमें सवार होकर सभी महात्माओंने शिवकांची-विष्णुकांची जानेके लिए प्रस्थान किया। मद्रास और कांचीके बीचमें भूतपुरी नामका श्रीरामानुजाचार्यजीका जन्मस्थान है। यहां आदिकेशव भगवान्‌के दर्शन किये। काषांयवस्त्र-भस्म-रुद्राक्ष-धारी महात्माओंको देखकर यहांके एक विशिष्टाद्वैतावादी पण्डितने व्यङ्ग्यसे पूछा-क्या आप लोग अद्वैतवादी हैं ?

श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजने उत्तर दिया-हम ही केवल अद्वैत-वादी हैं, यह बात नहीं, किन्तु वेदोंकी संहिताएँ ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, व्याकरण-शास्त्र, दर्शन-शास्त्र, भगवद्गीता; मन्वादि-स्मृति,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एवं समस्त-पुराण एवं महाभारतादि इतिहास भी अद्वैतवादी हैं ?

विशिष्टाद्वैतवादी—क्या आप अद्वैतको सिद्ध कर सकते हैं ?

श्रीमण्डलेश्वरजी-महाराज—अद्वैत तो स्वतः सिद्ध है, फिर स्वतः-सिद्धकी सिद्धि क्या ?

वि०—जब अद्वैत स्वतः सिद्ध है तब सब उसको क्यों नहीं मानते ?

म०—दिवान्ध-उलूकगणके न माननेसे क्या सर्व-प्रकाशक सूर्यकी असिद्धि हो सकती है। न ह्येष सूर्यस्यापराधो यदेनमन्धो न पश्यति, तद्वत् न ह्येष अद्वैतस्य स्वतःसिद्धस्यापराधो यदेनं द्वैतिनो न पश्यन्ति।

अर्थात् सूर्यको अन्धा न देखे, इसमें सूर्यका क्या अपराध ? उसी प्रकार द्वैती लोग स्वतः सिद्ध अद्वैतको न मानें, उसमें अद्वैत-वादका क्या दोष ?

वि०—(बड़े-अभिमानके साथ) आपलोगोंसे हम शास्त्रार्थ करेंगे।

म०—(कुछ मुस्कराकर) बड़े सौभाग्यकी बात है! हमलोग वीर-महारथियोंकी तरह अपने प्रतिद्वन्द्वीकी खोज करते ही रहते हैं। सो आप बड़े सुअवसर पर मिल गये। कुछ रोज यहां ही निवास कर लिया जायगा। परन्तु आप देखते हैं—साथमें संन्यासी, ब्रह्मचारी, ब्राह्मण एवं रसोइया नौकर आदि करीब ४५ से भी अधिक सज्जन हैं। उन सबके भोजन आदिका प्रबन्ध होना चाहिये। हम लोग केवल भात, इमली खानेवाले नहीं हैं, किन्तु हिन्दुस्तानी रोटी-पुरी आदि भोजन करते हैं, इसका भी ख्याल रखना होगा।

वि०—यह सब हमसे नहीं होगा ?

म०—तुम शास्त्रार्थ करना तो जानते हो, परन्तु क्या नारायण-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वरूप संन्यासी-अतिथियों की सेवा करना नहीं जानते ? तुम नारायणके कैसे (दास) सेवक हो ? शास्त्रमें कहा है—

नारायणस्य द्वे रूपे चलमचलमेव च ।
चलं संन्यासिनो रूप मचलं प्रतिमादिकम् ॥

नारायणके दो रूप हैं, एक चल तथा दूसरा अचल; चल संन्यासीका रूप है, और अचल प्रतिमादि है ।

वि०—हम तुमको नारायणस्वरूप नहीं मानते ?

म०—क्या तुम अपने नारायणको सर्वव्यापक नहीं मानते ? एकदेशी मानते हो ?

वि०—नारायणको सर्वव्यापक मानते हैं, परन्तु सर्वको नारायण नहीं मानते ?

म०—मालूम होता है-आपको उपनिषद् एवं गीताका भी कुछ परिचय नहीं है, आप शास्त्रार्थ किस बल पर करेंगे ? उपनिषद् और गीता तो कहती है कि-'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' 'वासुदेवः सर्वमिति ।' सब कुछ ब्रह्म है, सब कुछ वासुदेव है । (छां.) (गी०)

वि०—तब क्या ईंट, पत्थर, कूड़ा, कर्कट, सब कुछ वासुदेव हो जायगा ?

म०—हो जायगा क्या ? है ही । तुलसीदासजी जैसे पक्के वैष्णव भी तो यही गाते हैं—

सियाराममय सब जग जानी । करहुँ प्रणाम जोरि युगपानी ।

वि०—हम विशिष्टाद्वैतवादी हैं । सबको नारायण नहीं मानते किन्तु सबको नारायणका शरीर मानते हैं ?

म०—तब तो तुम्हारा नारायण परिच्छिन्न-अल्प हो जायगा ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और शरीर कहते हैं—कर्मफल-भोगके स्थानको, क्या शरीरधारी तुम्हारा नारायण भी कर्मफल भोगता है, ? अन्यथा उसे शरीरधारी होनेका क्या प्रयोजन ?

वि०—(झुंझला कर) आप विशिष्टाद्वैतको खूब समझिये ।

म०—खूब समझते हैं ? जो आपके सिद्धांत में आपत्ति दी है, उसका समाधान कीजिये ; अन्यथा 'प्रतिज्ञा-संन्यास' नामक निग्रह स्थान प्राप्त होगा ?

परन्तु वह कब सुनने वाला था ? अपने 'विशिष्टाद्वैत' विशिष्टाद्वैतको ही चिल्लाता रहा। पश्चात् स्वामीजी महाराजने कहा—आप अपने 'विशिष्टाद्वैत' को सिद्ध कीजिये। अद्वैतके साथ विशिष्टका क्या सम्बन्ध है ?

वि०—केवल अद्वैत नहीं होता। किन्तु विशिष्ट अद्वैत होता है।

म०—कहने मात्रसे क्या होगा ? स्वपक्षका प्रमाण एवं युक्तियोंसे उपपादन करना चाहिये। जब कि-वह अद्वैत है. यानी 'अविद्यमानं द्वैतं यत्र तदद्वैतम्'। अर्थात् द्वैतका जिसमें अत्यन्ताभाव है, उस द्वितीय-शून्य अद्वैतमें द्वैतरूप-विशेषणका सम्बन्ध क्यों कर होगा ? और जबतक विशेषणका सम्बन्ध न हो, तबतक वह अद्वैत विशिष्ट क्यों होगा ?

वि०—चित् एवं अचित्से वह अद्वैत विशिष्ट है।

म०—तब तो वह अद्वैत नहीं रह सकता, क्योंकि-उसमें चित्-अचित् रूप अनेक पदार्थोंका सम्बन्ध हो गया है।

वि०—अनेक द्वैत पदार्थोंका सम्बन्ध होनेपर भी वह अद्वैत ही रहता है।

म०—यह तो बात ऐसी हुई, जैसे कोई कहे—मेरी माताने दश पुत्र उत्पन्न किये, परन्तु वह जन्मवन्ध्या ही रही। मेरे मुखमें जिह्वा न

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होनेपर भी मैं २॥ घंटे लेक्चर झाड़ता रहा।

प्रश्नोत्तरके इस सिलसिलेमें हमारी मण्डलीके वयोवृद्ध स्वामी शान्तानन्दजी महाराज बोल उठे—अच्छा पंडितजी ! आपका विशिष्टाद्वैत प्रामाणिक-एवं शास्त्र प्रतिपाद्य है, तो आप किसी भी शास्त्र-(वेद-उपनिषद् गीता, पुराण आदि) में 'विशिष्टाद्वैत' ऐसा आनुपूर्वीपद दिखलाईये।

वि०—शास्त्रोंमें बहुत जगह मिलेगा।

शा०—'मिलेगा' यह मत बोलो, तुम्हें यदि मिला हो तो दिखलाओ।

वि०—तुम खोजो मिलेगा।

शा०—हमने खोजा, किन्तु नहीं मिला, इसलिये तुम्हारा 'विशिष्टाद्वैत' सिद्धांत अप्रामाणिक है। खोजनेमें तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है, इसलिए तुम उसे प्रामाणिक सिद्ध नहीं कर सकते।

वि०—अच्छा हम खोजकर दिखलायेंगे।

शा०—अब तक तो जब तुमने स्वसिद्धान्तका मूल खोजा ही नहीं, तब तुम अपने आपको विशिष्टाद्वैती पण्डित कैसे कहने लगे ?

इतनेमें सोमेश्वर-भट्टजीने तथा अन्य महात्माओंने कहा—कि स्वामीजी महाराज ! चलिये यहांसे, मोटरवाले चिल्लाते हैं, कहते हैं—कांचीमें कब पहुँचेंगे ? ये पण्डित जी तो ऐसे हैं कि—

मियांजी गिर पड़े, परन्तु टांग ऊंचीकी ऊंची ही।

पश्चात् सभी महात्मा लोग 'ॐ नमः पार्वतीपतये' की हर्ष-ध्वनिके साथ कांची जानेके लिए चल पड़े, तथापि नजाने वह पण्डित मनमें कुछ गुनगुनाता ही रहा, किसी महात्माने हास्यमें कहा कि—पण्डितजी कांचीमें पधारना, वहां शास्त्रार्थ आनन्दसे होता रहेगा।

उस समय सोमेश्वर भट्टजीने उपेक्षाके स्वरमें कहा—अरे ! क्या वह शास्त्रार्थ करेगा खाक।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(यह सब वाद-प्रतिवाद प्रायः संस्कृतमें होता रहा, हिन्दी-पाठकोंके सुभीतेके लिए उसका हिन्दी-अनुवाद कर दिया है)

'कांची' की काशी आदि सप्तपुरियोंमें गणना है। कांचीके दो भाग हैं—एक शिवकांची एवं द्वितीय विष्णु कांची। शिवकांच को लोग बड़ी कांची कहते हैं, और विष्णुकांचीको छोटी-कांची। पुरातत्त्वान्वेषी-लोग शिवकांची को प्राचीन एवं विष्णुकांचीको अर्वाचीन बतलाते हैं। शिवकांचीमें 'एकाम्रेश्वर' महादेवका विशाल एवं भव्य मंदिर है। मंदिर का गोपुर मानो आसमानको छू रहा है, ऐसा प्रतीत होता है। समीपमें कोटि-तीर्थ नामका एक विशाल सरोवर भी है। वहां स्नान करके पश्चात् पूजनकी सामग्री लेकर भगवान् भूतनाथ भवानीपतिके दर्शन पूजन वन्दन स्तुति-पाठ आदि करने चाहियें। दक्षिण-भारतके मद्रास प्रान्तमें पञ्चमहाभूतोंके नामसे श्रीमहादेव-जीके जो पांच लिङ्ग (१ पृथिवी-लिङ्ग कांचीमें, २ जललिङ्ग-जम्बुकेश्वरमें, ३ तेजोलिङ्ग अरुणाचलमें, ४ वायुलिङ्ग कालहस्तीश्वरमें तथा ५ आकाशलिङ्ग चिदम्बरमें) प्रसिद्ध हैं, इनमेंसे शिवकाञ्चीका एकाम्रनाथ क्षितिलिङ्ग है। यह भगवती-पार्वती द्वारा प्रतिष्ठित स्थावर-लिङ्ग है। इस मूर्ति पर जल नहीं चढ़ाया जाता, किन्तु चमेलीके तैलसे स्नान कराया जाता है। दक्षिणके मंदिरोंमें अनेक परिक्रमाएँ होती हैं उनमें अनेक देव-देवियोंके मंदिर होते हैं। भक्तोंको उन सबका दर्शन करना चाहिये। मंदिरमें एक आम्रका वृक्ष बहुत पुराना एवं विशाल है। पण्डे-लोग इसका बड़ा महत्त्व बतलाते हैं, इसी वृक्षके नीचे भगवती पार्वतीजी जटावल्कल धारण कर सर्वाङ्गमें विभूति रमाकर बालुका-लिङ्ग बनाकर उसकी विधिपूर्वक पूजा कर तपस्या करती थी। पार्वतीके भक्तिमय-पूजन एवं तपके प्रभावसे भगवान् शंकर यहां प्रकट होकर इस बालुका निर्मितलिङ्गमें तबसे निवास करने लगे। अतएव इस आम्रवृक्षमें हर समय आम्रफल लगे रहते हैं, महात्माओं ने वृक्षको देखा तो ५-१० कच्चे आम्र लटकते हुए दीख पड़े। पश्चात्

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सोने चांदी के बने हुए वृषभ, हस्ती, सिंह, अश्व आदि अनेक बड़े बड़े वाहन देखे, जिनके लिए भक्तोंने कई लाख रुपया खर्च किया होगा ? दक्षिण भारतकी देव-श्रद्धा प्रशंसनीय है।

शिवकांचीमें महादेवजीके १०८ मंदिर बतलाये जाते हैं, परन्तु उनमें कूर्मेश्वर, ज्वरहरेश्वर, कैलासनाथ आदि मुख्य एवं विशाल मंदिर हैं। यहां कामाक्षीदेवीका प्रसिद्ध एवं प्राचीन मंदिर है। काशी-विशालाक्षी, मदूरा-मीनाक्षी और कांची-कामाक्षीकी प्रसिद्धि है। भगवान् आद्य आचार्य श्रीशंकर स्वामीजीने इस कामाक्षी-मंदिरमें श्रीयन्त्रकी स्थूल सूक्ष्म एवं कारणरूपसे त्रिविध स्थापना की है। पण्डे-लोग इसे अनेक प्रकारसे बतलाते हैं। अद्वैत-पीठोंमें 'कामकोटि-पीठ' काञ्चीके इस मंदिरमें स्थापित है। यहां आचार्य-शंकर-स्वामीजीकी एक प्राचीन मूर्ति भी है। 'कांचीमें मरनेसे काशीकी तरह मुक्ति प्राप्त होती है' ऐसा भावुक लोग मानते हैं।

शिवकांचीके पूर्ण-दर्शन कर अपने लोग विष्णुकांची गये। शिवकांचीसे विष्णुकांची करीब तीन मील दूर होगी। मार्गमें एक काष्ठ-निर्मित विशाल रथका दर्शन होता है, जो बहुत ऊंचा है, तीन मंजिलका एक प्रकारका मकान ही उसे समझना चाहिये। शिवकांचीकी अपेक्षा विष्णु कांचीका मंदिर बहुत छोटा है, परन्तु है यह भी विशाल एवं सुन्दर। मंदिरके नीचेके भागमें नृसिंह भगवान्के तथा ऊपरके भागमें वरदराज भगवान्के दर्शन होते हैं। समीपमें लक्ष्मीदेवीका मंदिर है, एक सरोवर है, कई सैंकड़ों खम्भोंका एक सभा मण्डप है इत्यादि मंदिरोंकी यात्रा बड़े प्रेमसे एवं आनन्दसे सभी महात्माओंने की। अच्छे-अच्छे संस्कृतके विद्वान् पंडित श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजसे मिलते थे, आपसमें शास्त्र-चर्चा होती थी, जिसे सुननेसे चित्त बड़ा आह्लादित होता था। सच है, पक्षपात-रहित-विद्वानोंका वार्तालाप आनन्दकारी होता ही है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किसी अज्ञात व्यक्तिने उस समय पूज्यपाद-स्वामीजी महाराजसे इस प्रकार प्रश्न किया।

प्रश्न—क्या आप शैव हैं? भस्म-रुद्राक्षसे तो ऐसा मालूम होता है, तब आप विष्णुके दर्शन क्यों करते हैं?

उत्तर—हम स्मार्त हैं? स्मार्त परम-शैव एवं परम-वैष्णव होते हैं। अद्वैत-सिद्धान्त तथा शिव-विष्णुका अभेद मानते हैं, अतएव अद्वैत-सम्प्रदायके आद्याचार्य भगवान् नारायण माने गये हैं।

प्रश्नका उत्तर सुनकर वह व्यक्ति प्रसन्न हुआ, और कहने लगा—महाराज! आप धन्य हैं, पक्षपातसे दूर रहते हैं, यहां तो शैव-वैष्णवोंकी खींचातानी समय २ पर बन उठती है।

श्रीस्वामीजी महाराजने कहा—हमारे दशनामी-संन्यासी-संप्रदायके परम-गुरु आद्य आचार्य-श्रीशंकर स्वामीजीने शिव, विष्णु, देवी, आदि सभी देवोंकी परब्रह्मरूपसे स्तुति की है, सभी देव एक हैं, सभीका महत्त्व एक-सा ही है। अद्वैतवादके विशाल—झण्डेके नीचे देवताओं का भेद फटक नहीं सकता। जो शिव-विष्णुमें भेद बुद्धि करता है, वह अपराधी एवं नरकगामी होता है। शिव-विष्णुका शास्त्रसे एवं युक्तियोंसे जो वास्तविक-भेद प्रतिपादन कर सकता है, उस पण्डितको हम शास्त्रार्थके लिए चैलेंज देते हैं। वह हमारे सामने आये, हम प्रतिज्ञाके साथ कहते हैं कि—कोई भी पण्डितमानी शिव विष्णुका वास्तविक भेद किसी भी प्रमाणसे सिद्ध नहीं कर सकता, तमाम शास्त्रोंमें शिव-विष्णुका अभेद ही प्रतिपादन किया है।

इस प्रकार श्रीस्वामीजीका यथार्थ एवं प्रभावशाली भाषण सुन कर वह व्यक्ति बड़ा खुश हुआ। काशी एवं हरिद्वारके निवासको सुन करके वह बहुत ही आनन्दित हुआ। विनय पूर्वक प्रणाम कर वह भी चल पड़ा, सभी महात्मा लोग भी 'ॐ नमः पार्वतीपतये' की ध्वनिके साथ अपने निवास स्थान पर गये।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

काल-हस्तीश्वरमहादेव ।

काञ्ची-पुरीसे रेनीगुण्डा स्टेशनपर गाड़ी बदलकर महात्मा लोग काल-हस्तीश्वर महादेव पहुँचे। कालहस्तीश्वर-महादेव वायु-लिङ्गरूप से स्वर्णमुखी-नदी के तट पर विराजमान हैं। मंदिर बहुत ऊँचा लम्बा चौड़ा एवं सुन्दर है, स्टेशनसे करीब एक मील-दूर नदी के उस पार है। नदीमें बहुत थोड़ा पानी बहता है। चारों तरफ छोटी छोटी पहाड़ियों-का अच्छा दृश्य है। समीपके एक पहाड़ पर चढ़कर दूर-दूरका अच्छा दृश्य देखने में आता है।

मन्दिरमें छोटी बड़ी कई प्रदक्षिणाएँ करनी पड़ती हैं, मंदिरके मध्यवर्ती गर्भ-गृहमें वायु और प्रकाशका सर्वथा अभाव है। दीपकके सहारे ही भगवान्‌के दर्शन होते हैं। भक्तोंका विश्वास है कि—यहां एक विशेष वायुके झोंकेके रूप में भगवान् सदाशिव विराजमान रहते हैं इसीलिए मूर्तिके समीप जलता हुआ एक दीपक बार-बार चलायमान एवं अन्य सब दीपक स्थिर देखनेमें आते हैं। यहां का शिवलिङ्ग गोल नहीं है, किन्तु चौकोर एवं कुछ उन्नत है। इस शिव-मूर्तिके सामने एक मूर्ति कण्णप्प भीलकी है। कण्णप्प-भील एक बड़ा शिवभक्त हो गया है, इसने भगवान् शङ्कर को अपने दोनों नेत्र निकालकर अर्पण कर दिये थे! इसने आत्मनिवेदन-भक्ति द्वारा भगवान् आशुतोष श्रीशङ्करको प्रसन्नकर सब समय सेवार्थ सामने रहने का वर मागा था। पासकी पहाड़ी पर भगवती-दुर्गाका एक मंदिर तथा साधुका एक छोटासा आश्रम भी है।

व्यास-आश्रम ।

कालहस्तीश्वरके समीप दो-चार स्टेशनों की दूरी पर 'व्यास-आश्रम' नामका एक सुन्दर स्थान है, इस स्थान के संस्थापक हैं-'मलयार स्वामी' नामसे प्रसिद्ध श्रीस्वामी असंगानन्द गिरिजी महाराज। स्वामीजी बड़े विरक्त, मितभाषी, विद्वान् एवं श्रद्धेय हैं, आपने तैलंग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भाषामें अनेक धार्मिक ग्रन्थ लिखे हैं, तथा एक छोटासा मासिक-पत्र भी प्रकाशित करते हैं। आश्रममें एक संस्कृत विद्यालय है-जिसमें सैंकड़ों की तादाद में विद्यार्थी पढ़ते हैं, छः सात संस्कृतके अध्यापक पंडित हैं, इनके अन्न-वस्त्रादिका सभी इन्तजाम आश्रमकी तरफसे होता है, और आश्रममें करीब ५०-६० साधुवेष–जैसी ब्रह्मचारिणी स्त्रियां रहती हैं, २०-३० ब्रह्मचारी संन्यासी भी रहते हैं इन सबके रहने के लिए अपनी अपनी मर्यादाके अनुसार भिन्न-भिन्न स्थान बने हैं, व्यास आश्रम बहुत बड़ा कमसे कम १०० बीघा जमीनमें फैला हुआ है, अनेक छोटे-बड़े स्थानोंसे सुशोभित है, एक-छोटासा स्वतन्त्र-ग्राम ही इसे समझना चाहिये। यहांसे दो मीलकी दूरीपर ग्राम तथा स्टेशन है। आश्रमका नियम अतीव व्यवस्थित एवं पवित्रता पूर्ण है। स्त्रियोंके अलग कम्पाउण्डमें कोई पुरुष नहीं जा सक्ता, अधिकारीके बिना स्त्रियों से अन्य कोई पुरुष वार्तालाप भी नहीं कर सकता; आश्रमके नियम बड़े पक्के हैं, एक भी नियमका उल्लंघन करनेवाला इस आश्रममें नहीं रह सकता। नियम से सबको प्रातःकाल ३ बजे ऊठना पड़ता है, शौच स्नानके अनन्तर सब आश्रमवासी एकत्रित होकर, वेद-मन्त्र तथा स्तुति-श्लोकोंके द्वारा प्रार्थना करते हैं, पश्चात् गीता पारायण होता है, एवँ अन्तमें आश्रमके अध्यक्ष मलयार स्वामीजीका उपदेश होता है।

मलयार स्वामीजीको किसी व्यक्ति के द्वारा यह पता चला था कि—कनखल-हरिद्वारके महामण्डलेश्वर श्रीस्वामीजी ४०-४५ महात्माओंके साथ कालहस्तीश्वर महादेवके दर्शनार्थ आये हैं, इसलिए मलयार स्वामीजीने कालहस्तीश्वर में ही अपने दो ब्रह्मचारियोंको मंडलीको आश्रममें लिवा लाने के लिए भेजा था, भला महात्माओंका प्रेमपूर्ण निमन्त्रण कौन टाल सकता है ? श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराज सभी महात्माओंके सहित उस आश्रममें चार दिन रहे। महामंडलेश्वरजीका भाषण (उपदेश) संस्कृतमें ही होता रहा, तैलंगदेश होने के कारण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी-भाषा आश्रमवासी नहीं जानते थे। पंडित लोग संस्कृत भाषण का तैलंग भाषामें अनुवाद करके सुना देते थे। आश्रमवासियोंने विशुद्ध-प्रेम से मंडलीका बड़ा आदर सत्कार किया, तथा दो मील चलकर भगवन्नाम-संकीर्तनके साथ स्टेशन तक पहुँचानेके लिए आये थे।

व्यासाश्रममें पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराज ने जो उपदेश दिया, उसका सार यह है—'साकार-ब्रह्म एवं निराकार-ब्रह्ममें वस्तुतः कुछ भेद नहीं. जिस प्रकार जल और बर्फ में। जलमें बर्फ रहता है, और बर्फ में जल। उसी प्रकार साकार में निराकारत्व एवं निराकार में भी साकारत्व रहता है। जिस प्रकार शैत्य की अधिकता होने पर जल बर्फ रूपसे प्रतीत होता है। उसी प्रकार जो एक अद्वैत, निर्गुण; निराकार निर्विकार, अविचल-नित्यशुद्ध बुद्ध-मुक्त-सच्चिदानन्दघन-निरञ्जन परब्रह्म है, वही भक्तोंके निर्मल-उत्कृष्ट-प्रेमवश, अपनी मायाशक्ति द्वारा दिव्यातिदिव्य, सौंदर्य-माधुर्य-लावण्य-निधि-सगुण-साकाररूपसे प्रकट हो जाता है। जिसप्रकार अव्यक्तरूपसे जो अग्नि काष्ठोंमें रहता है, वही व्यक्त-दीपरूपसे औष्ण्य-प्रकाश युक्त हुआ प्रकट दिखाई देता है। इसी प्रकार निराकार-साकार-ब्रह्मका व्यक्ताव्यक्तरूपसे काल्पनिक-भेद होने पर भी वास्तविक भेद नहीं माना जाता।

वस्तुतः वह ब्रह्म अविभक्त है, किसीसे भी उसका विभक्तत्व नहीं हो सकता। वह सबका अपना आप है। वही तूँ है, तूँ ये देहादि नहीं, यह देहादि विनाशी हैं, जड़ हैं और तू अविनाशी चेतन है। श्रुति भगवती मां यही उपदेश देती है–'अहं ब्रह्मास्मि' (बृ० उ० १।४।१०) 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' (छां० उ० ३।१४ १) मैं वस्तुतः ब्रह्म हूँ। यह सब जगत् भी निश्चय से ब्रह्म ही है, ब्रह्मसे भिन्न कुछ भी नहीं, इस प्रकार अखण्ड-ब्रह्माकार-वृत्तियो का प्रवाह गंगा प्रवाह की तरह बनाये रखना ही ब्रह्माभ्यास है। देदाहि में आत्मभाव का तथा नामरूपात्मक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जगत् में सत्यत्वभावका त्याग करना ही वैराग्य है। इस प्रकारके त्याग एवं ब्रह्माभ्याससे पूर्ण-ब्रह्मके परम-आनन्द का अनुभव होता है। श्रीस्वामीजी महाराजने यह एक अच्छा श्लोक कहा था—

'श्रद्धाभक्तिभृतां विशेषविदुषां शिक्षावतां योगिनां,
मिथ्यावस्तुनि वस्तुतां विजहतां त्यागे गते गाढताम् ।
सत्ये सत्यतया स्फुरत्यविरतं चित्ते चमत्कारिणि,
स्वैरं स्फूर्जति निर्विकल्प-परमानन्दस्वरूपो हरिः ॥'

आचार्य-वचन एवं वेदान्त-वाक्योंमें जिनकी पूर्ण श्रद्धा है, सर्वान्तर्यामी सर्वात्मा भगवान्‌में जिनकी अनपायिनी-अनन्य भक्ति है, जिन्हें विवेकादि-साधनोंकी शिक्षा-दीक्षा मिल चुकी है, जो अनात्म-चिन्तनके निरोधरूप योगाभ्यास करते हैं, जिन्होंने मिथ्या-पदार्थों को सत्य मानना छोड़ दिया है। जिनका त्याग परिपक्व हो चुका है, जिनके शान्त एवं एकाग्ररूप चमत्कारी चित्तमें ब्रह्मात्म-तत्त्व ही सदा परमार्थ-सत्यरूपसे प्रतीत होता है। उनके ऐसे विशुद्ध-तन्मय चित्तमें निर्विकल्प-परमानन्दस्वरूप सर्वात्मा श्रीहरि सदा स्वच्छन्दरूपसे विहार करते हैं।

प्रत्यगात्मासे बढ़ कर अन्य कोई देव नहीं है, स्वात्मानुसंधान से बढ़ कर और कोई परा-पूजा नहीं है, प्रणवसे बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है, और विषय-लालसाकी निवृत्तिरूप- आत्मानुभवकी निरंकुश-तृप्तिसे बढ़ कर और कोई सुख नहीं है। यह देह देवालय है, साक्षात् सदा-शिव भगवान् इसमें प्रत्यगात्मारूपसे बिराजमान हैं। अज्ञान एवं मिथ्याज्ञानरूपी-निर्माल्यका परित्याग कर 'सोऽहं' भावसे इसकी पूजा करनी चाहिये। अभेददर्शन ही ज्ञान है, मनके राग-द्वेषादि मलोंका त्याग करनाही स्नान है, इन्द्रिय-संयम ही शौच है। इस प्रकारके साधनोंसे सम्पन्न होकर अखण्ड-एकरस ब्रह्मामृतका ही सतत

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पान करना चाहिये। देहरक्षाके लिए मधुकरी भिक्षा है, और रहनेके लिए गंगा तट का एकान्त पवित्र स्थान है। वीतराग-विवेकी मुमुक्षु इन साधनों से अनायास ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

व्यग्रता त्यागकर एकाग्रता से 'ॐ' मन्त्रका आनन्दमय-मस्तराग हरदम गाते रहो। सर्वत्र बाहर भीतर आनन्दका ही अनुभव करो। आनन्द ही 'ॐ' का अर्थ एवं आत्मा का स्वरूप है। अतः सभी रूपोंमें, शब्दोंमें एवं रसों में आनन्द को ही देखो, सुनो और चक्खो। आनन्द में ही सोओ एवं जागो, आनन्दकी ही भावना करते रहो, हृदयमें दुःखके एवं स्पृहाके भाव ही मत उठने दो। सदा निश्चिन्त, निर्द्वन्द्व-निःस्पृह एवं निर्भय रहो।

समस्त दुःख-भय एवं शोकोंका मूल-कारण अविद्या है। अविद्या-की निवृत्ति, तत्त्वज्ञानके विना अन्य किसी भी साधनसे नहीं हो सकती। ज्ञान ही मिथ्या-ज्ञानमयी-अविद्याका निवर्तक है। तत्त्वज्ञानका प्रादुर्भाव उपनिषदादि-मोक्षशास्त्रोंके श्रद्धा एवं एकाग्रता पूर्वक आलोचनसे होता है। जैसे चिकित्साशास्त्र, रोग, रोगका हेतु, रोगनिवृत्ति, एवं उसका कारण औषध, ये चार व्यूह (विभाग) वाला है। तद्वत् मोक्ष शास्त्र भी हेय, हेय का हेतु, हान और हानोपाय, इन चार-व्यूहोंवाला है। दुःख-बहुल-संसार हेय है, हेयका कारण है-मिथ्याज्ञानमयी अविद्या, अविद्या की अत्यन्त- निवृत्ति हान है, और उस हान का उपाय है तत्त्वज्ञान। यहाँ रोगके स्थानापन्न हेय-संसार है, रोगका कारण-धातुवैषम्य के स्थान में अविद्या है। हानपद-वाच्य अविद्यानिवृत्तिरूप मोक्ष है। और औषधके स्थानापन्न-तत्त्वज्ञान है।

तिरुपति-बालाजी (वेङ्कटेश्वर)

व्यास-आश्रम से तिरुपति बालाजी आये। स्टेशन के समीपकी एक धर्मशालामें ठहरे। धर्मशालासे दो मीलकी दूरीपर एक विशाल-पर्वत है, उस पर्वतके ऊपर विस्तृत-भूमिमें बालाजी-भगवान्‌का मन्दिर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है. पहाड़ के नीचे भी एक बालाजी भगवान्का मन्दिर है, उनका भी दर्शन तथा कपिल-धारा कुण्ड में स्नान, तथा कपिलेश्वर-महादेवके दर्शन करने चाहिये। पश्चात् पहाड के ऊपर चढ़ना चाहिये, पहाड़का चढ़ाव करीब २००० सीढ़ियोंका है, करीब एक मीलकी चढ़ाई होगी, सीढ़ियां खतम करने पर करीब ५ मील बहुत सीधा तथा कहीं कहीं चढ़ाई-उतराईका रास्ता तय करना पड़ता है। पहाड़की सुन्दरता एवं वृक्षलताओंका हरा-हरा दृश्य चित्ताकर्षक है। इस पहाड़का नाम है, 'वेंकटाद्रि'। दक्षिण-भारतके लोग बालाजी भगवान्को 'वेङ्कटेश्वर' नामसे पुकारते हैं, परन्तु उत्तर भारतके लोग श्रीलक्ष्मण-बालाजी कहते हैं। यात्रीलोग मार्ग में चलते हुए बड़े जोरोंसे 'गोविन्दा गोविन्दा' के नामकी ध्वनि लगाते हैं। बालाजीके मंदिरके समीप ही एक बड़ा अच्छा सरोवर है, तथा वैरागी-सन्तोंका एक बड़ा स्थान और एक छोटासा बाजार, पण्डोंके अनेक मकान, एवं धर्मशालाएँ आदि हैं।

सरोवर में स्नान कर, पूजन सामग्री लेकर सभी महात्मा लोग श्रीमण्डलेश्वरजीके साथ 'ॐ नमः पार्वतीपतये' की जय ध्वनि करते हुये भगवान् बालाजी के मन्दिर में दर्शन करनेके लिए चल पड़े, श्रद्धाभक्ति पूर्वक—भगवान्का पूजन-स्तुति पाठ प्रदक्षिणा आदि बड़े प्रेम से किये. पश्चात् भगवान्का तुलसी शर्करा मिश्रित प्रसाद ग्रहणकर एक धर्मशालामें (जिसका प्रथमसे ही इन्तजाम किया था) निवास किया। भिक्षा आदिसे निवृत्त होकर सांयकाल भगवान्के तथा तत्समीपस्थ अन्यान्य-स्थानों के दर्शन किये। यहां बालाजी भगवान्को तिलक बड़े विलक्षण ढंगसे लगाया जाता है, भगवान्के दोनों नेत्र तिलकसे दब जाते हैं, महात्माओंने वहांके एक पण्डे से पूछा—तिलक तो ललाट में होना चाहिये, न कि—आँखोंके ऊपर ?। पण्डेने कहा—परम्परा ऐसी चली आई है।

महात्मा—परन्तु, इस परम्परामें कुछ शास्त्रका प्रमाण भी तो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होना चाहिये। ऐसा कहीं लिखा है कि–तिलक से भगवान्के दोनों नेत्र बंद करदो ?।

पण्डा—ऐसा तो कहीं नहीं लिखा है।

महात्मा–तब अशास्त्रीय तथा लोकविरुद्ध यह कार्य क्यों किया जाता है ?।

तब तक दूसरा पण्डा बोला–

प्रथम यहाँ एक अन्धा पुजारी भक्त था, उसकी चलाई हुई यह तिलक-प्रथा है।

उसका उत्तर सुनकर एक महात्माने कुछ उपहासके तौर पर कहा–ठीक है 'अंधेनैव नीयमानाः यथा अन्धाः' यह श्रुति पूर्वोक्त प्रथा में चरितार्थ हो जाती है।

यहांसे चार मील दूर पापमोचनी-गंगा है। पहाड़से पानी बड़े जोरोंसे गिरता है। यह एकान्त निर्जन एवं प्रसन्न स्थानमननके लिए बड़ा उपयुक्त है, गहन जंगल है, हरा भरा दृश्य अत्यन्त सुहावना है, पाताल गंगा, आकाश-गंगा, जाफलिया हनुमान्, गोमुख-तीर्थ आदि (जो कुछ दूर-दूर पर हैं) इन सब तीर्थों में मज्जन-दर्शन करते हुए सभी महात्मा लोग अपने निवास स्थानपर आये, यहां पहाड़के ऊपर तीन-रात्रि निवास करके नीचे उतर आये। पश्चात् एक-रात्रि नीचे निवास कर अरुणाचलेश्वर तेजोलिङ्गमहादेवके दर्शनार्थ गाड़ीमें सवार हुए।

अरुणाचल महादेव।

यह स्थान 'विल्लुपुरम्'से आगे कटपटी जानेवाली लाइनपर स्थित है। तामिल-भाषामें इसे 'तिरुवण्णमल्ले' कहते हैं। यहां श्रीशङ्कर महादेवका तेजोलिङ्ग है। सृष्टिके आदिमें इस स्थानमें अग्निशिखाके-रूपमें एक तेजोमय-लिङ्गका आविर्भाव हुआ था, जिसके आदि, अन्तका पता लगाने के लिए ब्रह्मा हंसारूढ होकर ऊपर चले, एवं विष्णु-गरुड़ारूढ़ होकर नीचे चले, परन्तु वे दोनों समर्थशाली देव भी उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्योतिर्मय महालिङ्गके आदि-अन्तका पता न लगा सके, तब ब्रह्मा एवं विष्णुने श्रद्धाभक्तिपूर्वक उस लिङ्गकी स्तुति एवं ध्यान किया। भगवान् श्रीशङ्करने उस लिङ्गसे प्रकट होकर दर्शन दिया। महिम्नस्तोत्रमें इस ज्योतिर्लिङ्गका इस प्रकार वर्णन है—

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः,
परिच्छेतुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः।
ततो श्रद्धाभक्तिभरगुरुगृणद्भ्यां गिरीश यत्,
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति॥

अर्थात् हे कैलासवासी प्रभो! ज्योतिर्मय देदीप्यमान—अग्नि पुञ्जरूप-महालिङ्गात्मक आपके दिव्य- ऐश्वर्य की अवधि जानने के लिए बड़े प्रयत्न के साथ ऊपर की ओर ब्रह्मा और नीचेकी ओर विष्णु गये, परन्तु वे भी पार नहीं पा सके। पश्चात् उन्होंने भक्ति-श्रद्धा से भरी हुई-स्तुतिके द्वारा आपको जब प्रसन्न किया, तब आप स्वयं ही उनके समक्ष दिव्यरूपसे प्रकट होगये, अर्थात् आपने अपने यथार्थ अनन्त स्वरूप का ज्ञान दिया। आपकी भक्तिमयी-सेवा क्या सफल नहीं होती? अवश्य होती ही है।

प्रतिवर्ष मार्गशीर्ष शुक्ल पूर्णिमामें इस अरुणाचल-पर्वतके शिखर पर कई मनों कपूर-घृत, आदि-एक बड़े गोल-कुण्डके समान स्थानमें रखकर जला दिये जाते हैं। कहते हैं कि—शिखरका यह प्रकाश कई दिन रात बराबर जलता रहता है, इस ज्योतिके दर्शनके लिए कई लाख दर्शकोंकी भीड़ जमा होती है। १०-१२ दिन तक उत्सव होता रहता है। यह अरुणाचल-पर्वत समूचा ही भगवान् श्रीशङ्करका तेजोलिङ्ग माना जाता है, इसके पांच शिखरोंको पांच-मुख मानते हैं। यात्री लोग बड़ी श्रद्धापूर्वक इस पर्वतकी प्रदक्षिणा करते हैं, मंडलीके महात्माओंने भी श्रीमण्डलेश्वरजी सहित इसकी प्रदक्षिणा की। दक्षिणकी प्रथाके अनुसार भगवान् श्रीशंकरका तथा श्रीपार्वतीका; गणेश एवं कार्तिकेय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वामीका, लीला-मानुष-विग्रह बड़े-बड़े सोने-चांदीके नन्दी, कल्पवृक्ष, कामधेनु, रथ आदि वाहनोंमें प्रतिदिन उत्सव समाप्ति पर्यन्त घुमाया जाता है, उत्सवके समय बड़ा गान-वाद्य होता है, देव-दासियोंका नृत्य इत्यादि भी होता है। दक्षिण-भारतके महादेव, उत्तर-भारत के महादेवके समान-दिगम्बर विरक्त नहीं हैं, किन्तु महाराजेश्वर एवं विविध ऐश्वर्य सम्पन्न हैं। अस्सी २ हजार रुपयोंके बने हुए एक-एक नन्दी आदि अनेक उन्नत-मनोहर सोने चांदी के वाहन यहां विद्यमान हैं, मन्दिर, विशाल-उन्नत-गगन चुम्बी अनेक गोपुरोंसे सुशोभित, सैकड़ों बीघा लम्बा चौड़ा है, दक्षिणके मन्दिरोंको देखकर आश्चर्य चकित होना पड़ता है, दाक्षिणात्योंकी शिवभक्तिकी जितनी प्रशंशा की जाय उतनी थोड़ी ही है।

अपने लोग यहां ईशान-मठमें ठहरे हुए थे। इस मठके अध्यक्ष नटेशस्वामी बड़े शान्त, उदार एवं सच्चरित्र भद्रपुरुष हैं, उन्होंने मंडलीका बड़ा आदर सत्कार किया, प्रसिद्ध-प्रसिद्ध द्रष्टव्य स्थानोंका तथा अनेक वाहनोंका दर्शन कराया, चार-पांच दिन तक मंडलीकी सेवा की। मठ एकान्त स्थानमें होनेसे रमणीय एवं भजनानन्दियोंके लिये उपयुक्त है, यहां इस समय २५-३० महात्मा निवास करते हैं। अरुणाचलकी समग्रयात्रा कर चिदम्बर-महादेवके दर्शनार्थ हम सब गाड़ीमें सवार हुए।

अरुणाचलमें किसी जिज्ञासु-साधक भक्तने श्रीस्वामीजी महाराजसे साधनोंके विषयमें इस प्रकार प्रश्न किये, और श्रीस्वामीजीने उनके उत्तर संक्षेपमें इस प्रकार दिये थे—

प्रश्न—भगवन्! कृपानिधान! ऐसा कोई सरल-सहज साधन बतलाइये कि—जिसके अभ्याससे हमारा शीघ्र कल्याण होजाय।

उत्तर—आलसी-प्रमादी के लिए कोई भी साधन सरल-और सहज नहीं होता। लोकमें भी परिश्रम एवं उत्साह के विना कोई भी कार्य सिद्ध होता देखा नहीं गया। अतः विवेकी साधक, आलस्य-रहित

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होकर, वैराग्यके भावों को हृदय में भरकर सद्‌गुरु-उपदिष्ट-साधनों का अनुष्ठान नियम से करता रहे, दुष्ट-संगतिसे बचता रहे, दुर्वासनाओं को हटाता रहे, श्रद्धा के साथ एकाग्रचित्तसे सद्‌गुरु-दत्त मन्त्रका जप एवं इष्टदेव का ध्यान करता रहे। और वेदान्त-वाक्योंकेद्वारा अपने वास्तविक-स्वरूपका भी अनुसंधान करता रहे। यह कल्याण-प्राप्ति का सरल उपाय है।

प्र०—गुरुमहाराज ! मनका निग्रह कैसे करें ? यह मन बड़ा बली एवं हठी है।

उ०—मनसे विपरीत चले, मन जैसा चाहता है, वैसा कदापि न करे, विवेकवर्ती-बुद्धि के अनुसार चले, मन जिधर जाने लगे, विचार एवं वैराग्य द्वारा उधर से हटावे, और सत्यानन्दनिधि-परमात्मा के चिन्तन मेंलगावे, बली हठीके साथ हमें भी बली एवं हठी बनना चाहिये।

प्र०—भगवन् ! यह मन बड़ा उत्पात मचाता है, क्या करें ?

उ०—मनके उत्पातों का साक्षी बनना चाहिये। मनकी ऊटपटांग-कल्पनाओं के पीछे हमें पागल नहीं होना चाहिये। निश्चय करना चाहिये कि- मैं मन से पृथक् हूं। असग-निर्विकार-स्वयंप्रकाश आनन्द रूप हूं। सुखदुःखादिजितने दृश्यधर्म हैं, वे सब अन्तःकरणके हैं। दृष्टा आत्माके नहीं, उनधर्मोंका अपने नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-आत्मामें आरोप करके दुःखी होना बड़ी भारी मूढता है।

प्र०—दयासागर ! प्रभो ! मनकी एकाग्रता की रक्षा कैसे हो ?

उ०—किसी भी प्रकारकी इच्छा न करे, संसारको स्वप्नवत् जाने, ब्रह्मभावना बढ़ाता रहे, एकान्तमें निवास करे, सदा विचारशील रहे, उपनिषद् एवं गीता का मनन करता रहे, प्रयोजन मात्र भाषण करे. विशेष-आहार एवं निद्रा न ले, अभ्यासमें सदा सावधान रहे, बहिर्मुख-अमीरोंकी संगतिसे सदा बचता रहे; स्त्रियोंसे सदा अलग रहे, स्थानआदिके प्रपञ्चमें न पड़े, वीर्य रक्षा करता रहे, तिक्त, अम्ल-अत्युष्ण-आदि-उत्तेजक-पदार्थों का सेवन न करे; सदा निर्भय एवं निर्द्वन्द्व रहे, अपने आपको देह नहीं किन्तु सच्चिदानन्दरूप देव माने,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रारब्धके अनुसार जो भी कुछ इष्टानिष्ट प्राप्त हो-उसमें हर्ष-विषाद न करे, इस नामरूपात्मक-मिथ्या संसारको दुःखालय जानकर इससे सदा उपराम रहे। अलमस्त एवं निश्चिन्त बना रहे। वैराग्य की अभि-वृद्धि करे, इसके द्वारा तत्त्वज्ञान एवं अनन्य-भक्ति को परि-पुष्ट बनाता रहे।

प्र०—स्वामिन्! करुणानिधे! नाम-जपके अभ्यासीके लिए क्या कुछ नियमों की भी आवश्यकता होती है?

उ०—क्यों नहीं, नियमों की बड़ी आवश्यकता है।

प्र०—कौन कौन नियम होने चाहिये?

उ०—पृथिवी पर शयन करे, खटिया पर न सोवे, ब्रह्मचर्यका पालन करे, सत्य एवं प्रिय बोले, कम बोले, राग-द्वेष न करे, द्विकाल स्नान करे पञ्च-देवों (देवीविष्णुश्च सूर्यश्च गणेशश्च सदाशिवः) का प्रतिदिन श्रद्धाभक्तिपूर्वक पूजन करे, शक्तिके अनुसार उदारतापूर्वक कुछ न कुछ प्रदिदिन दान करता रहे, निन्दित-कर्मोंका नितान्त परि-त्याग करे, सद्गुरु की तथा सद्गुणी-विद्वानोंकी सेवा करे, भगवान् के पावन-नामोंका संकीर्तन करे, गीता आदि-शास्त्रोंका नियमसे गुरु-मुखसे स्वाध्याय करे, और श्रेष्ठमहापुरुषोंके द्वारा उनका प्रवचन सुने, सत्संग में रुचि रक्खे, मनसे वाणीसे एवं शरीरसे किसीको कष्ट न पहुँचावें, सबका भला चाहे, भला कहे, एवं करे, किसी की भी भूल करके निन्दा न करे, भगवान् की इच्छामें प्रसन्न रहे, जो कुछ भगवान् करते हैं, अच्छा ही करते हैं, ऐसा विश्वास रक्खे, इत्यादि-अनेक नियम अभ्यासीको अवश्यमेव पालने चाहियें।

चिदम्बर-महादेव।

चिदम्बरका अर्थ है-चित्=ज्ञान, अम्बर=आकाश, चिदा-काश। मंदिर में ताण्डव-नृत्यकारी चिदम्बरेश्वर-नटराजकी मनोरम मूर्ति विराजमान है। एक-ओर एक परदा-सा पड़ा हुआ है, परदा उठा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर दर्शन करने पर स्वर्णनिर्मित कुछ मालाएँ दृष्टिगोचर होती हैं, इसके अतिरिक्त वहां मूर्तिविना निरा आकाश ही आकाश है, यही भगवान्‌का आकाश लिङ्ग है। यहां श्रीमहादेवजी की दो मूर्तियां और हैं, एक-नटराज विग्रह-माणिक्यकी मूर्ति है, और दूसरी जलहरी सहित लिङ्गरूपसे स्फटिक-मणिकी मूर्त्ति है। इन सबके भव्यदर्शन हैं, दर्शनसे चित्तमें शान्ति-एवं आनन्द का उद्गम होता है।

मन्दिरकी सुन्दरता अनुपम है. मन्दिरके शिखर अनेक स्वर्ण-कलशोंसे सुशोभित हैं, तथा मन्दिर के ऊपरी छज्जे पर २१७६० स्वर्ण-की मोहरें लगी हुई हैं; किंवदन्ती है कि-ये किसी भावुकभक्तने प्रतिदिन के आने वाले श्वासोंके हिसाबसे लगायी हैं, जिनसे मन्दिरका दृश्य अतीव मनमोहक भक्तिवर्धक हुआ है। मन्दिरकी प्रदक्षिणाएँ बहुत लम्बी चौड़ी हैं, एक हिस्सेमें शेषशायी विष्णुभगवान्‌के भी दर्शन होते हैं, मंदिरके बाहरके घेरे में कनकसभा, सहस्र-स्तम्भोंका मण्डप, तथा शिवगंगा नामक सुन्दर सरोवर है, यहां उत्सवोंके समय बड़ी धूमधाम से भगवान् की सवारी निकलती है, और कई दिन तक लोगों की भीड़ बनी रहती है। मन्दिरके चारों दिशाओं के चारगोपुर बड़े उन्नत एवं स्थापत्यकला-चित्रकारीसे पूर्ण हैं।

ये चिदम्बरेश्वर नटराज भगवान् वे ही हैं, जिन्होंने तपसे प्रसन्न होकर डमरूके निनादसे पाणिनि-मुनिको व्याकरणके 'अइउण्' इत्या-दि चतुर्दश-सूत्रोंका तथा सनकादि-मुनिवरोंको ब्रह्माद्वैततत्त्वका उपदेश किया था। कहा है—

नृत्यावसाने नटराजराजो, ननाद ढक्कां नव पञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धा-नैतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम् ॥

अतएव नन्दिकेश्वर की काशिकावृत्तिमें 'अइउण' आदि-व्याकरण सूत्रोंका—

अकारो ब्रह्मरूपः स्यान्निर्गुणः सर्ववस्तुषु।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इत्यादि, ब्रह्माद्वैतबोधक वेदान्तानुसारी अर्थ किया है। अन्यत्र भी कहा है—

स जयति दिव्यनटेशो नृत्यति योऽसौ चिदम्बरसभायाम्।
पाणिन्याद्या मुनयो यस्य च दयया मनोरथानभजन्॥

जो चिदम्बर-सभामें ताण्डव-नृत्य करता है, जिसकी दया से पाणिनि-आदि मुनियोंके मनोरथ सफल हुए थे, उस दिव्य-नटराज शङ्करकी जय हो।

इसलिये यह तीर्थ अतीव प्राचीन एवं भगवान् श्रीशंकरका लीला क्षेत्र है। इस क्षेत्रका परमविद्वान् एवं परमशिवभक्त अप्पय दीक्षितजीने भी सेवन किया था, एवं अपने प्राणोंका परित्याग भी यहीं किया था।

अपने लोग यहां एक महात्माके मठमें ठहरे थे। चार दिन रहकर चिदम्बर-क्षेत्रके अन्यान्य-मन्दिरोंका भी दर्शन किया, पश्चात् वहांसे मायावरम् गये—

मायावरम्।

'मायावरम्' कावेरी नदीके तटपर है, यहां भी एक-शिवक्षेत्र है, कावेरी-नदीके जलसे मायावरंसे लेकर कुम्भकोणम्, तञ्जावरं आदिके प्रदेशमें चावल-केले नारियल आदि बहुत उत्पन्न होते हैं, कश्मीरके समान यह प्रदेश सर्वत्र हरा-भरा ही देखने में आता है, जगह-जगह पर कावेरी की छोटी बड़ी अनेक नहरें मिलती हैं। दक्षिण-प्रान्तमें कावेरीने कृषिकी बड़ी उन्नति की है। दक्षिणदेशमें पौष-माघ मासमें भी ठन्डीका नामोनिशान नहीं होता। दक्षिणके भक्तलोग प्रातःकालमें करीब आठ बजे महात्माओंको उपमा-चाहका जलपान कराते हैं, उपमाको एकप्रकारका नमकीन हलवा समझना चाहिये, उप्पू-यानी नमक जिसमें हो, उसका नाम उपमा। परंतु यह बड़ा हल्का शीघ्र हजम होनेवाला पदार्थ है, दक्षिणमें प्रायः लोग उपमा, इटली,दोषा, आदि-को जलपानके समय खाते हैं, इटली दोषा चावलके आटेका बनता है। भोजनके समय लोग भात, तथा इमलीका बना हुआ 'रसम्' तथा 'सांभार' (शाकमिश्रित-एक प्रकार की दाल) खाते हैं, 'नारियल'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बहुत होते हैं, इसलिए उसकी चटनीका बहुत प्रचार है। गेहूँकी बनी रोटी, बाटी,पूरी, कचौरी, मालपुआ आदि देखकर आश्चर्य चकित होते हैं, इन गरिष्ठ-पदार्थोंको खानेमें संकोच करते हैं, क्योंकि— चावल आदि हलके पदार्थ खानेका उनको अभ्यास पड़ गया है, लोग हिन्दी भाषा नहीं जानते हैं, कांग्रेसकी तरफसे हिंदी-भाषाके प्रचारके लिए कोशिशें हो रही हैं, परंतु हिंदी-प्रचारके विरोधी लोग भी कुछ देखने में आते हैं, कुछ ब्राह्मण पण्डित, प्रतिशत एक-दो संस्कृत जानते हैं, मंदिरके पुजारी लोग भी प्रायः संस्कृत नहीं जानते हैं, संस्कृत-विद्याका ह्रास प्रायः सर्वत्र देखनेमें आरहा है। कुछ सहस्र में दो चार लोग टूटी फूटी हिंदी बोलना जानते हैं।

दक्षिण-देशके कस्बोंमें प्रत्येक मकानके पृष्ठ-भागमें एक छोटा-सा बगीचा होता है, जिसमें 'नारियल केले' शाक-पात आदि लगाते हैं। यहां की स्त्रियां घूंघटें नहीं काढ़ती हैं, किन्तु शिरको खुला रखतीं हैं, शिर के पृष्ठबालों में पुष्पमाला रखतीं हैं, विधवा-स्त्रियां शिरपर वस्त्र धारण करती हैं। दक्षिणमें मातुल-कन्या का विवाह होता है, यहां-के लोग विवाह-सम्बन्धमें गोत्रभेद प्रयोजक मानते हैं, सगोत्रमें विवाह नहीं करते, भिन्न-गोत्रवाली कन्या चाहे मामाकी हो, या फूफीकी हो या बहिनकी हो, वह सब धर्म-पत्नियां हो सकती हैं। यह विवाह-पद्धति उत्तर-भारतियोंको बड़ा आश्चर्यमें डालती है. मामा ससुर, फूफी एवं बहिन भी सास हो सकती है, बहिनकी लड़की (भागिनेयी) के साथ समान-अवस्थाका मामा शादी कर सकता है, यह बड़ा भयंकर मामला मालूम हुआ, इस विषयमें पूछ-ताछ करने पर निश्चय हुआ कि—ऐसा मामला भी कहीं-कहीं कभी-कभी बनता है, परन्तु जब तक मामा की एवं फूफीकी लड़की मिलती है, तबतक अन्य कन्याके साथ शादी नहीं करते, क्योंकि—शादीका मामला प्रथमकी जान-पहचानमें होना अच्छा रहता है। ब्राह्मणोंमें भी यह प्रचार है, इस विषयमें यहांके लोग सुभद्रा अर्जुनका, भगवान् कृष्ण और मित्रविन्दाका उदाहरण देते हैं, सुभद्रा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्जुनके मामा वासुदेव की लड़की एवं भगवान् कृष्ण की बहिन थी, और मित्रविन्दा भगवान्कृष्णके पिता वसुदेवकी बहिनकी लड़की थी।

इस विषयमें पूज्य मण्डलेश्वरजी महाराजने हम लोगों-को कुछ उपदेश दिया-अविद्या प्रचुर संसारमें जो होवे सो थोड़ा है, ऐसा मानकर सन्तोष करना चाहिये। यह संसार गुण-दोषमय है, किसीने किसी कार्यमें दोष-दृष्टि की तो किसीने गुण-दृष्टि। असलमें गुण-दोष-उभय दृष्टिका परित्याग करना ही श्रेयस्कर है, उभयका परित्याग नहीं कर सकते हैं, तो दोष-दृष्टिका परित्याग तो करना ही चाहिये। अतएव गुसांईजीने क्या ही अच्छा कहा है—

जड़ चेतन गुण-दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुण गहहिं पय, परिहरिं वारि विकार॥

मायावरम्में अपने लोग दो रात्रि निवास कर मोटर द्वारा सभी महात्मा-लोग 'कुम्भकोणम्' चल पड़े।

कुम्भकोणम्।

'कुम्भकोणम्' में १२ शिव मंदिर हैं, जिनमें विश्वनाथ, कुम्भेश्वर, गौतमेश्वर, और बाणेश्वरके मंदिर प्रधान माने जाते हैं, विश्वनाथ जीके मंदिरके समीप ही 'महामखम्' नामका एक सरोवर है, चारों तरफ पक्का घाट बँधा है। लोग इसको भागीरथी-गंगाका प्रतिनिधि मानते हैं, और बड़ी महिमा बतलाते हैं, परन्तु इस सरोवरका पानी बिल्कुल खराब है. तीर्थके लिहाजसे एक बार स्नान किया था, परन्तु दूसरी वार आचमन करनेको भी चित्तने नहीं माना। यहां प्रति बारहवें वर्ष 'महामखम्' नामका मेला भरता है, कई लाख दक्षिणके यात्री इकट्ठे होते हैं। अपने लोग महामखं सरोवरके तट पर स्थित एक विशाल धर्मशालामें ठहरे थे। कुम्भकोण भी कावेरी नदीके तट पर है। कुम्भेश्वरका मंदिर सबसे विशाल है, नागेश्वरका मंदिर कुंभे-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अरसे कुछ छोटा है, उसके अन्दर भगवान् भुवनभास्करकी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यहां विष्णु भगवान्के भी अनेक मंदिर हैं, इनमें एक राम-मंदिर है, जिसमें समग्र रामायणकी लीलाओंके चित्र बनाये हैं, जिनके देखनेसे दो तीन घंटे लगते हैं।

'कुम्भकोणम्' से थोड़ी दूर पर 'तिरुवडमरुथर' 'दारेश्वरम्' 'तिरुनागेश्वरम्' तथा स्वामी-मल्लेका मंदिर हैं. जहां यात्री लोग दर्शनार्थ जाते हैं, इनमें स्वामी मल्लेका प्रधान एवं भव्य मंदिर है, वह भी कावेरीके तट पर एक छोटेसे पहाड़ पर बना हुआ है, मंदिरमें जानेके लिये अनेक सीढ़ियां बनी हुई हैं, मंदिरमें देवताओंके सेनापति, श्रीशिवजीके पराक्रमी पुत्र, सुब्रह्मण्यदेव (कार्तिकेयस्वामी) की प्रतिमा है। उत्तर-भारतवासी कार्तिकेयस्वामीको बालब्रह्मचारी मानते हैं, परन्तु दक्षिण-भारतमें कार्तिकेयस्वामीकी वल्ली और देवयानी नामकी दो धर्मपत्नियाँ मानते हैं। उत्तर-भारतमें कार्तिकेय स्वामीकी पूजा प्रतिष्ठा नहींके बराबर है, और दक्षिण-भारतमें कार्तिकेय स्वामीके बड़े-बड़े विशाल अनेक मंदिर बने हुए हैं, तथा उनके अनेक भक्त हैं, जो कार्तिकेय-स्वामीको अपना प्रधान इष्टदेव मानते हैं, बड़ी पूजा प्रतिष्ठा करते एवं बड़े-बड़े उत्सव मनाते हैं। पू० महामण्डलेश्वरजी महाराज यात्रामें भी प्रातःकाल अपने साथमें रहने वाले महात्माओंको उपनिषद्-शांकरभाष्य शारीरिक-शांकरभाष्य, भामती, अद्वैतसिद्धि आदि ग्रन्थोंका अध्ययन कराते रहे। स्वामीजी महाराज का नाम सुनकर यहांके दो चार प्रतिष्ठित पण्डित भी पाठके समय आए। स्वामीजीके अद्वैत-ग्रन्थोंके निःसंदिग्ध, रहस्यपूर्ण अध्यापनसे वे विद्वान बड़े प्रसन्न हुए। एक विद्वान्ने भामतीग्रन्थमें पूर्वाधिकरण एवं उत्तराधिकरणकी संगतिके विषयमें इस प्रकार प्रश्न किया—

'अन्तस्तद्धर्मोपदेशात्' (ब्र० सू० १।१।२०) इस सूत्रके भाष्यमें पूर्वाधिकरणके सिद्धान्तकी दृष्टान्त-संगतिसे पूर्वपक्ष किया है, ऐसा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्यों ? अर्थात् पूर्वाधिकरणके सिद्धान्तकी दृष्टान्त-संगतिसे उत्तराधिकरणका सिद्धान्त प्रतिपादन करना चाहिये, तथा पूर्वाधिकरणके पूर्वपक्ष की दृष्टान्त-संगतिसे उत्तराधिकरणके पूर्वपक्षका प्रतिपादन करना चाहिये, न कि-सिद्धान्तसंगतिसे पूर्वपक्ष, एवं पूर्वपक्ष-संगतिसे सिद्धान्त ?

समाधान—अधिकरण-रचनामें ऐसा नियम नहीं है, कि—सिद्धान्त संगतिसे ही सिद्धान्तका तथा पूर्वपक्ष संगतिसे पूर्वपक्षका प्रतिपादन किया जाय। अधिकरण-संगतिमें पूर्वाधिकरणके किसी भी अवयवसे, उत्तराधिकरणके किसी भी अवयवकी संगतिका प्रतिपादन कर सकते हैं, अन्यथा 'अधिकरण-संगति' ऐसा नाम निर्देश ही नहीं रहेगा, इसके स्थानमें सिद्धान्तसंगति, पूर्वपक्षसंगति, आदि ही रह जायेंगी। यह तो आप जानते ही हैं कि—अधिकरणके पांच अवयव होते हैं—विषय, संशय, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, एवं संगति।

पू० महामण्डलेश्वरजी महाराजके इस समाधानसे वह प्रश्नकर्ता पण्डित सन्तुष्ट हुआ, और कहने लगा कि—स्वामीजी महाराज-शास्त्रके आन्तरिक मर्मके अच्छे ज्ञाता हैं।

उसी समय किसी सत्संगी शास्त्रप्रेमी गृहस्थने इस प्रकार प्रश्न किया—सच्चिदानन्द स्वयंप्रकाश आत्मामें तमोरूप-अज्ञानका सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? इसमें आप लोगोंका क्या मत है ?

उत्तर—वस्तुतः अज्ञानका सम्बन्ध नहीं हो सकता है।

प्रश्न—जब अज्ञानका सम्बन्ध वस्तुतः नहीं है, तब उसकी आत्मामें प्रतीति क्यों होती है ?

उत्तर—भ्रान्तिसे।

प्रश्न—ज्ञानस्वरूप आत्मामें भ्रान्ति भी कैसे होगी ?

उत्तर—अज्ञानसे।

प्रश्न—यह तो अन्योऽन्याश्रय दोष हुआ, अज्ञानसे भ्रान्तिका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सम्बन्ध एवं भ्रान्तिसे अज्ञानका सम्बन्ध।

उत्तर—इष्टापत्ति, अघटघटनापटीयः अनादि अज्ञानमें बीज-अंकुरकी तरह अन्योऽन्याश्रयदोष, दोषाधायक नहीं हो सकता।

प्रश्न—तब ज्ञानस्वरूप-आत्मामें कल्पित-अज्ञानका भी सम्बन्ध क्यों हुआ? अर्थात् किस प्रयोजनके लिए? एवं कबसे हुआ?

उत्तर—क्यों हुआ? कब हुआ? यह प्रश्न अनादि, अचिन्त्य अज्ञानके विषयमें नहीं करना चाहिये, भ्रान्तिके होनेमें कुछ प्रयोजन नहीं होता, मुझे रज्जुमें सर्पकी भ्रान्ति क्यों हुई? किस प्रयोजनसे हुई? यह प्रश्न ही नहीं कर सकते, अनुचित है। अज्ञान-निवृत्तिके लिए प्रयत्न करना चाहिये, स्वयंप्रकाश-आत्मामें अज्ञानका सम्बन्ध क्यों हुआ? कब हुआ? इत्यादि निष्फल काकदन्त परीक्षाकी तरह व्यर्थके वादविवादमें नहीं पड़ना चाहिये। अज्ञानका अनुभव सबको है, प्रत्यक्षमें कुछ अनुपपत्ति नहीं होती।

'अचिन्त्याः खलु ये भावाः न तांस्तर्केण योजयेत्'।

उसी समय 'कुम्भकोण' शंकराचार्य-कामकोटिपीठके कुछ विद्वान्-पण्डितगण श्रीमण्डलेश्वरजी महाराजके दर्शनार्थ आये, अभिवादन आदिके अनन्तर अनेक शास्त्रीय विषयोंकी चर्चा हुई, श्रीस्वामीजी महाराजके साथ पण्डित-लोगोंका प्रश्नोत्तर संस्कृत-भाषामें ही होता रहा। अन्तमें वर्ण-आश्रमकी चर्चा करते हुए पण्डितोंने कहा—हमारे दक्षिणमें तो दो ही वर्ण हैं, एक ब्राह्मण. एवं द्वितीय शूद्र, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण नहीं हैं। आपके उत्तर-भारतमें दो वर्ण हैं कि—चार?

श्रीस्वामीजी—उत्तर भारतमें चारों वर्ण हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। द्विजाति शिखा, यज्ञोपवीत, धारण करते हैं, संध्या वन्दनादि भी करते हैं, परन्तु वर्तमान शिक्षा पद्धतिसे कहीं-कहीं इनका लोप भी देखनेमें आता है। दक्षिणमें भी तो प्रथम चार वर्ण होंगे?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पण्डितजी—प्रथम होंगे, परन्तु अब नहीं हैं।

स्वामीजी-अब नहीं हैं, इसलिये चातुर्वर्ण्य-मर्यादा-स्थापन करनी चाहिये।

अतः मत्स्यपुराणमें कहा है—

वर्णाश्रमव्यवस्थानं कार्यं, कर्म समीक्ष्य च।
स्वधर्मप्रच्युतान् राजा, स्वधर्मे स्थापयेत्तथा॥
(अ० २१५-६२)

(अर्थात्-गुण कर्मोंके अनुसार वर्ण-आश्रमकी व्यवस्था करनी चाहिये, तथा राजा या देश-नेता का यह कर्तव्य है कि-स्वधर्मसे प्रच्युत-जनोंको स्वधर्ममें स्थापन करे।)

पण्डित—है तो ठीक परन्तु ऐसा होना बड़ा कठिन है।

स्वामीजी—तब तो ब्राह्मणोंके ऊपर भी बड़ी भारी आपत्ति आजायगी। अच्छा! आप यह तो बतलाइये कि-ब्राह्मण-लोग ब्राह्मणेतर को अपना यजमान बनाते हैं या नहीं ?

पण्डित—बनाते हैं, ब्राह्मण उनके पुरोहित होते हैं।

स्वामीजी—श्राद्ध, विवाह आदि कराते होंगे, दान-दक्षिणा आदि ग्रहण करते होंगे ?

पण्डित—हां हां सब कुछ करते हैं।

स्वामीजी—तब तो यजमान-शूद्र होनेसे ब्राह्मण भी शूद्र हो जायेंगे, क्योंकि-शास्त्रमें कहा है—

भुञ्जते ये तु शूद्रान्नं मासमेकं निरन्तरम्।
इह जन्मनि शूद्रत्वं जायन्ते च मृताः शुनि॥
(आपस्तम्बसंहिता ८.७-११)

तेन शूद्रान्न-दोषेण ब्रह्मस्थानादपाकृतः।
ब्राह्मणः शूद्रतामेति नास्ति तत्र विचारणा॥
(भारत-अनुशासनपर्व अ० १४३)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(जो ब्राह्मण एक-मास पर्यन्त निरन्तर शूद्रान्नका सेवन करते हैं, वे इस जन्ममें शूद्रत्वको प्राप्त करते हैं, और मर कर कुत्तोंकी योनि में पैदा होते हैं। उस शूद्रान्नके दोषसे ब्राह्मण ब्राह्मणत्वसे बहिष्कृत होकर शूद्रता को प्राप्त होता है. उसमें अन्यथा विचार नहीं हो सकता।)

स्वामीजी–यज्ञोपवीत विना शूद्रोंको श्राद्ध कैसे कराते हैं ?

पण्डित–ऐसे ही अन्धाधुन्ध चलता है ?

स्वामीजी–तभी तो सनातनधर्मके तथा उसके कर्णधार-ब्राह्मणों के ऊपर लोग अनर्गल आक्षेप करते हैं।

पण्डित–हां, ऐसा ही हो रहा है।

स्वामीजी–पण्डितजी ! आप तो कुम्भकोणके आचार्य-पीठके प्रधान पण्डित हो, आपको तो सनातन-धर्मकी सक्रिय-रूपसे सेवा करनी चाहिये, योग्यताके अनुसार संस्कार कर उनको स्वधर्ममें स्थापन करना चाहिये, धर्म-शिक्षासे वे लोग धर्मप्रेमी एवं आपके सेवक बने रहेंगे। यदि आप इनको शूद्र ही बनाये रक्खेंगे, शूद्र ! शूद्र ! कहकर उनको तुच्छ समझेंगे, तो याद रखना, आर्यसमाज-कांग्रेस आदिका प्रचार जोरोंसे हो रहा है। जो वर्णाश्रम-मर्यादाका मूलोच्छेदन करना चाहते हैं–उनके अनुयायी बनकर, अपने लोगोंका होश बिगाड़ देंगे। इस प्रकार स्वामीजी महाराजके सदुपदेशको 'साधु-साधु' शब्दसे पण्डितजी स्वीकार करते गये, परन्तु आखिर यही बात हुई कि–

'बिल्लीके गलेमें घण्टी कौन बांधे ?'

३ घण्टे तक अनेकविध शास्त्रचर्चा होनेके बाद पण्डित-लोग चले गये। 'कुम्भकोणम्' में पूज्य-स्वामीजी महाराजने अनेक संस्कृतमें व्याख्यान दिये। पण्डित लोग तामिल-भाषामें अनुवाद कर देते थे। यहां पूज्य मण्डलेश्वर स्वामीजीके सहाध्यायी स्वामी महेश्वरानंदजी दाक्षिणात्य मिले, आप अच्छे विद्वान् निर्मानी ब्रह्मनिष्ठ महात्मा हैं,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आपने आगेसे ही मण्डलीका प्रबन्ध अनेक तीर्थ-स्थानोंमें भक्तोंको प्रेरणा कर-करवा रक्खा था। आपकी शुभ प्रेरणासे मंडलीकी अनेक स्थानोंमें अच्छी सत्कार-सेवा हुई। कुम्भकोणममें पांच दिन ठहरनेके बाद मोटर द्वारा 'पापनाश' तीर्थको गये—

पाप-नाश-क्षेत्रम्।

'कुम्भकोणम' से 'पापनाश-क्षेत्रम्' मोटर द्वारा पहुँचे। मार्गका दृश्य बड़ा ही सुहावना एवं मनलुभावना था। यहां विष्णु-भगवान्‌का मंदिर है, तथा कावेरी गंगाका तट है। भगवान्‌के दर्शनमात्रसे समस्त पापोंका नाश हो जाता है' 'विश्वासो फलदायकः' यह प्रसिद्ध है। अतएव पापोंका नाश होता है, या नही ? ऐसा हमें संशय नहीं करना चाहिये, यह तो प्रत्यक्ष है, जबतक अपने लोग भगवानका दर्शन, अर्चन, वन्दन, स्तवन, आदि करते हैं, तबतक चित्त भगवदाकार हो ही जाता है, संसाराकार नहीं रहता, चित्तका संसाराकार होना ही पाप है, भगवदाकार होने पर संसाराकाररूप-पापका नाश हो जाता है।

यहां पूज्यपाद श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजसे किसी जिज्ञासु भक्तने इस प्रकारके प्रश्न कर ऐसा मनःतुष्टिकर समाधान प्राप्त किया था।

प्रश्न—भगवन्! इस संसारकी ममता छूटती नहीं, कैसे छोडें?

उत्तर—विचारसे। विचारके लिए प्रतिदिन सत्संग करना चाहिये। विचार करे, जब मैं यहां आया था, तब एकाकी असंग ही था, कुछ भी साथमें लेकर नहीं आया था, जब जाऊंगा, तब एकाकी, असंग होकर, सब कुछ छोड़कर, सबसे नाता तोड़कर ही जाऊंगा, कुछ भी साथ नहीं ले जाऊंगा, यहांका यहां ही रह जायगा। अतः निश्चय करे कि—'नाहं कस्यचिद् न मे किञ्चित्' 'नाहं देहो न मे देहः' अर्थात् मैं किसीका नहीं. मेरा कुछ नहीं, मैं देह नहीं, मेरा देह नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसलिये इस क्षण-भंगुर-वियोगशील-देह-गेहादि-पदार्थोंमें व्यर्थकी मोहममता बढ़ाकर संतप्त रहना बुद्धिमानी नहीं है।

एक किसान था, खेतमें हल चलाता था, एक समय हलकी नोंक जमीनमें फंस गई, वहां देखा तो एक हण्डा मिला, भीतरमें सुवर्णकी मोहरें चमचमाती हुई दीख पड़ीं, उसका चेहरा खिल उठा, हण्डे पर चिपकी हुई मिट्टीको हटानेके लिए समीपकी नदी पर गया। मिट्टी हटाते समय वजनदार हण्डा सहसा हाथसे छूट गया, गहरी वेगवती नदीमें बह गया। किसान पागल हो गया, हाय-हाय करता हुआ बकने लगा कि—आई और गई, आई और गई। कुछ समयके बाद उसकी औरत आई! उसका प्रलाप सुनकर उसने दो तमाचे लगाये, रोषवश वह पूछने लगी कि—कौन आई और गई, बता, क्या कोई यहां सुन्दरी रानी आई थी, जिसके पीछे तू पागल बना है, उसने समग्र वृत्तान्त सुनाकर कहा—रानी नहीं लक्ष्मी। हाय, अपने भाग्य फूट गये। यह सुनकर उस औरतका भी दिमाग बिगड़ गया, वह भी बकने लगी कि—हण्डीको तूने क्यों धोई, क्यों धोई? कुछ देरके बाद उसका लड़का आया, उसने अपने मां-बापका यह तमाशा देखा। बाप जपता है—आई और गई, आई और गई। और मा बकती है—तूने क्यों धोई, क्यों धोई। उसका वृत्तान्त जानकर लड़केका भी मस्तिष्क खराब हो गया। वह भी प्रलाप करने लगा कि—मुझसे क्यों नहीं पूछा, क्यों नहीं पूछा। इतनेमें वहां एक सन्त महात्मा पधारे। तीनोंकी बकवाद सुनकर कहने लगे कि—अरे! पागलो! तुम्हारा इसमें क्या था? मुफतमें आई और मुफतमें चली गई। भागो यहांसे अपना काम करो, परिश्रमकी कमाई खाओ, मुफतके मालमें लालच रखकर अपना दिमाक मत बिगाड़ो, छोड़ो, इस व्यर्थकी मोह ममताको।

उस प्रकार सोच-समझ कर इस संसारकी मोह-ममताको जो छोड़ता है, वही सुखी रहता है, नहीं तो उसे उस किसानकी तरह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दुःखी होना पड़ता है।

प्रश्न—गुरुमहाराज! भगवान्का भजन कैसे करें? भजनमें मन नहीं लगता।

उत्तर—भजनमें मन लगता नहीं, जबरदस्तीसे विवेक-विचार द्वारा लगाना पड़ता है। भगवान्में मन इसलिये नहीं लगता, प्रत्युत संसारमें ही लगा रहता है कि—संसारको ही मनने सुखरूप, सत्यरूप, एवं सुन्दररूप मान रक्खा है। इस भ्रान्तिको विचार द्वारा हटाना चाहिये और निश्चय करना चाहिये कि—एकमात्र सर्वात्मा भगवान श्रीहरि ही सत्यरूप, सुखरूप एवं परम सौन्दर्य-निधि हैं; संसार नहीं, संसार अनित्य है, सुखरूप नहीं किन्तु दुःखरूप है सुन्दर नहीं किन्तु असुन्दर-घृणास्पद है। यह नियम है कि–जिसमें सत्यताकी सुखप्रदताकी एवं सुन्दरताकी भावना होती है–वहाँ ही मन लगा रहता है। अतः जिस प्रकार लोभी और कामी, धनको तथा कामिनीको ही सत्यरूप, सुखरूप एवं सुन्दररूप समझकर उनका ही रात्रि-दिन तन्मय हुए चिन्तन करते रहते हैं। उस प्रकार एकमात्र भगवानको ही सत्य सुन्दर एवं सुखरूप समझ कर उसका ही तन्मय होकर भजन करना चाहिये।

प्रश्न—भगवन् कृपानिधान जी! यह संसार प्रत्यक्ष दीखता है इसलिये इसमें ही यह मनीराम बाबू सत्यतादिकी भावनाएँ बांधकर लगा रहता है, इस प्रकार भगवान् प्रत्यक्ष दीखते नहीं, इसलिए मन उसमें नहीं लगता।

उत्तर—जो दीखता है, वह वास्तविक नहीं होता। मृगतृष्णिकाका जल तथा स्वप्नका संसार दीखता है, परन्तु वह वास्तविक नहीं माना जाता। जिस प्रकार समीपस्थ-वास्तविक-जल शैवालसे आच्छादित होनेके कारण नही दीखता, परन्तु बुद्धिमान् विवेकी, दीखने वाले जलको सत्य नहीं समझता, नहीं दीखने वाले आच्छादित जलको ही सत्य समझता है। दीखने वाले उस मिथ्या जलसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कभी प्यास नहीं बुझती। नहीं दीखने वाले आच्छादित जलसे ही प्यास बुझती है। उसी प्रकार दीखने वाला नामरूपात्मक-संसार, सत्य नहीं है। अतः इससे किसीकी भी न तो पिपासा शान्त हुई है, न हो सकती है। नहीं दीखने वाले भगवान् ही सत्य हैं, आवरण हटाने पर उसका आत्मारूपसे सर्वानुगतरूपसे प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है। इसलिए दीखने वाले मिथ्या-असार-संसारसे सत्यतादिकी भावनाएँ हटाकर भगवानमें ही लगानी चाहिए।

प्रश्न—श्रीस्वामीजीमहाराज ! कुछ लोग भगवान्को नहीं मानते, कहते हैं कि—भगवान् कहां है ? बताओ।

उत्तर—भगवान् कहां नही हैं, सर्वत्र हैं, जो कुछ दीखता है, वह भी वस्तुतः भगवान्का ही तो स्वरूप है। परन्तु दिव्य-दृष्टिवाला महामानव ही भगवत्स्वरूपको सर्वत्र देख सकता है, चर्मचक्षुवाला मूढ नही। और वह दिव्य-दृष्टि सद्गुरूकी कृपासे प्राप्त होती है। जब भगवान् की कृपा से अर्जुन को दिव्य-दृष्टि प्राप्त हुई थी, तभी ही-वह सर्वत्रभगवान् का दर्शन करने में समर्थ हो सका था।

जो लोग भगवान् को नही मानते, उनसे पूछना चाहिये कि—अच्छा ! तुम अपने का मानते हो कि-नही ?। वे तुरन्त कहेंगे कि-हां ! हां ! अपने को कौन नहीं मानता ?। सबसे अच्छा एवं बढ़कर—दूसरों को सेर तो अपनेको सवा-सेर मानते हैं। बस, अपने को मानना, यही भगवान् को मानना है। क्योंकि-अपने भीतर ही अपना आपरूपसे भगवान् छिपा बैठा है। परन्तु मूढ-मानव, अपने को साढ़े तीन हाथ का—मल-मूत्रका थैला विनाशी देहरूप मानता है। यह उसकी महाभ्रान्ति है, जो इदंपदार्थ-अनात्माको अहंपदार्थ-आत्मा मान बैठा है। यह तो प्रथम भी नही था, और उसके लाखों यत्न करने पर भी कुछ रोज के बाद नहीं रहेगा; इस देहरूपी परदे के भीतर जो छिपा हुआ इसका प्रेरक एवं भासक है, वही वास्तव में आप है, वही भगवान् है, इसलिये भगवान् को सब मानते हैं, परन्तु मुर्खता-वश कुछ लोग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

व्यर्थका मिथ्याप्रलाप करते हैं।

'पापनाशं' क्षेत्रमें दो रात्रि निवासकर पश्चात् गाड़ी में सवार होकर बृहदीश्वर- शंकर भगवान् के दर्शनार्थ 'तञ्जावरं' नगर में गये।

तञ्जावरं।

इसे कोई 'तञ्जोर' भी कहते हैं। दक्षिण-भारतका यह प्राचीन नगर है, कावेरीकी यहाँ विशाल नहर है। यहाँका बृहदीश्वर-मंदिर बहुत प्रसिद्ध है। मन्दिर के बाहर एक अत्यन्त विशाल नंदीश्वरकी मूर्ति है, जो सोलह फुट लम्बी, सात फुट चौड़ी और बारह फुट ऊँची है। मन्दिर बहुत पुराना है, किसी शिवभक्त राजाने बनवाया है, इसकी ऊँचाई लगभग दो सौ फुट होगी। मन्दिरका मध्यवर्ति शिवलिङ्ग बहुत बड़ा एवं बहुत ऊंचा है, जल चढ़ानेके लिए पुजारी लोग सीढ़ी पर चढ़ते हैं, इतना बड़ा लिङ्ग सम्भव है—भारत में अन्यत्र कहीं भी न होगा। मन्दिर के चारों ओर किलेकी-सी खाई बनी हुई है, इसका प्रधान गोपुर लगभग नब्वे फुट ऊंचा होगा। समीपमें सुब्रह्मण्यकार्तिकेय स्वामी, पार्वती मातेश्वरी तथा गणेशजीके भी मंदिर हैं। मन्दिर की शोभा अतुलनीय है। यहां संस्कृत-ग्रन्थोंका हस्त-लिखित 'सरस्वती भण्डार' नामका बृहत्पुस्तकालय है, इसमें कई हजार संस्कृत ग्रन्थ ताड़-पत्र पर लिखित हैं। यहां अपने लोग एक भक्त गृहस्थके एकान्त-बगीचे में ठहरे थे। दाक्षिणात्य-भक्त-साधु-मण्डलीकी सेवा बड़ी श्रद्धा के साथ करते हैं, भक्तोंका समुदाय, पुष्प-धूप-दीप-कर्पूर-नैवेद्य आदि पूजन-सामग्री लेकर महात्माओंको देव-दर्शन करानेके लिए साथ-साथ चलता है, दाक्षिणात्योंमें इस समय भी प्राचीन-वेष-भूषाकी झलक देखनेमें आती है, देवताओंके समक्ष वे लोग कुरता आदि पहनकर नहीं जाते हैं, बड़ी नम्रता पूर्वक देवताओंको एवं पूज्य-महात्माओंको साष्टांग-दण्डवत्प्रणाम करते हैं। जहां तक हो सकता है, वहां तक खाली हाथ नहीं आते, कुछ न कुछ पुष्प, फल, धूप दीप आदि लेकर ही आते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खाली हाथ, राजा देवता एवं गुरुके समीप नहीं जाना चाहिये।

'रिक्तहस्तो न गच्छेत् राजानं देवतां गुरुम्'।

इस शास्त्रीय-मर्यादाका पालन वहां प्रत्यक्षरूपसे होता है। गरीब से गरीब भी एक-दो पैसे का कपूर-एवं पुष्प लेकर ही देवमंदिर एवं महात्माकी सन्निधिमें जायगा। दक्षिणमें मन्दिरों का बड़ा मान है। मूर्तिपूजन विरोधी कोई नास्तिक देखने में नहीं आता। दक्षिण के लोग उत्तर-भारतकी अपेक्षा विशेष-श्रद्धा भक्ति संपन्न होते हैं। अतएव भागवत के माहात्म्यमें कहा है—

उत्पन्ना द्रविड़े देशे, वृद्धिं कर्णाटके गता।

क्वचित् क्वचित् महाराष्ट्रे, गुर्जरे जीर्णतां गता॥

भगवती-भक्तिकी उत्पत्ति द्रविड़ देशमें हुई है, कर्नाटक (मैसूर-बेंगलूर आदि) देशमें भक्तिकी वृद्धि हुई है, और महाराष्ट्र तथा गुजरातमें भक्ति की क्षीणता हुई, इसलिए गुजरात आदि देशोंमें अब भी पाखण्ड-भक्तिका विशेष प्रचार है, भक्तिमें पाखण्ड-दम्भ होना ही भक्तिकी क्षीणता है। 'ढोंगिनको गुजरात' यह कहावत प्रसिद्ध है।

श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजका नाम सुनकर (जहां अपना निवास था) वहाँ कुछ माध्व-आचारी (रामानुजी) आदि वैष्णव, आकर-श्रौत-स्मार्त सिद्धान्त के विषय में चर्चा करने लगे। जिसका संक्षिप्त-भाव प्रश्नोत्तर रूप से इस प्रकार है।

वैष्णव—स्मार्त-सिद्धान्तमें पञ्चदेव-उपासनासे अनेकेश्वरवाद सिद्ध होता है।

स्वामीजी—अनेकेश्वरवाद तो तब सिद्ध हो, जब वे पांच देवता एक, परब्रह्ममय न मानकर भिन्न-भिन्न माने जाते हों, स्मार्त-सिद्धान्तमें वे पांच देवता परब्रह्मरूप एक अभिन्न माने गये हैं। इसलिये अनेकेश्वर-वादकी प्रसक्ति नहीं हो सकती।

वैष्णव—तब उन्हें पांच-रूपसे क्यों मानते हो? एकरूपसे ही मानो?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वामीजी—पांचरूपसे मानने पर भी एक-रूपसे ही मानते हैं।

वैष्णव—ऐसा क्यों होगा? एकत्व-अनेकत्वरूप विरोधका एकत्र-समन्वय नहीं हो सकता।

स्वामीजी—स्थूल-दृष्टिसे विरोध मालूम होता है, परन्तु सूक्ष्म-दृष्टिसे विचार करनेपर विरोध नहीं रहने पाता, समन्वय हो जाता है।

वैष्णव—कृपया वह समन्वय समझाइये।

स्वामीजी—बहुत अच्छा! पक्षपात-शून्य, तत्त्वजिज्ञासुको समझानेसे बड़ा लाभ होता है। सुनिये! सावधान होकर, नाम एवं रूप (वेषभूषा आकार आदि) की दृष्टिसे उन देवताओंमें पञ्चत्व है, पारमार्थिक-स्वरूप दृष्टिसे एकत्व है। नाम-रूपके भेदसे वस्तुस्वरूपका वस्तुतः भेद नहीं हो सकता। एक-ब्राह्मण-बालकके पाचक, पाठक, पूजक, आदि विविध नाम एवं विभिन्न-कार्यके समय-विभिन्न-वेषभूषा होने पर भी जैसे उसमें अनेकत्व नहीं आ सकता, तद्वत् एक-अद्वय परमात्माके शिव विष्णु, दुर्गा आदि विविध-नाम एवं विविध-रूपाकृति (वेषभूषा) होने पर भी उसमें अनेकत्व नहीं हो सकता।

वैष्णव—जब उस परमात्माका स्वरूप एक है, तब उसके विभिन्न नाम एवं विभिन्न रूप क्यों माने जाते हैं?।

स्वामीजी—यह प्रश्न आप अपने वेदोंसे पूछिये और वेद-पृष्ठगामी अष्टादश-पुराणोंसे पूछिये।

वैष्णव—वेद एवं पुराण क्या उत्तर देते हैं?

स्वामीजी—वेदादि-शास्त्र यही कहते हैं कि-एक परमात्माके अनेक नाम एवं अनेक रूप हैं, 'एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति'। (ऋग्वेद-संहिता)। एकं सत् परमात्मतत्वं विप्राः=विद्वांसः, बहुधा=बहुभिः=नामभिः आकृतिविशेषैश्च वदन्ति=प्रतिपादयन्तीत्यर्थः।

वैष्णव—वेदादिशास्त्रोंने एक अद्वय परमात्माके अनेक नाम एवं अनेकरूप क्यों प्रतिपादन किये?।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वामीजी—भक्तगणोंकी विभिन्न-रुचि देखकर।

वैष्णव—क्या सबकी एक रुचि नही हो सकती ?।

स्वामीजी—यह आप अपने घरवालोंसे ही पूछिये, क्या आप के घरके सभी लोग भोजनके विषयमें एक-प्रकारकी रुचि रखते हैं, अमुक शाक को अमुक-अमुक पसन्द करते हैं. अमुक नापसन्द। भिन्न-रुचिर्हि लोकः' यह प्रसिद्ध है।

वैष्णव-ठीक है, लोक भिन्नरुचिवाले हैं, परन्तु वेदादिशास्त्र ऐसा विलक्षण उपदेश देकर सबकी क्या एक-सी रुचि नहीं कर सकते हैं?

स्वामीजी—शास्त्र ज्ञापक होते हैं, कारक नहीं होते। भिन्न-रुचि होने पर भी लक्ष्य सबका एक ही है, इसलिये भी भिन्न-रुचि दूर करने की कुछ आवश्यकता नहीं है। और आस्तिक-श्रद्धालुको वेदादिशास्त्रोंके प्रति ऐसा अभियोग नहीं लगाना चाहिये कि-शास्त्रोंने भगवान्‌के विविध नाम एवं विविधरूपोंका क्यों उपदेश दिया ?। 'स्वतन्त्र-शासनस्य भगवतो वेदस्य नियोगपर्यनुयोगानर्हत्वात्' भगवान् वेद सर्वज्ञकल्प हैं, जीव अल्पज्ञ है। अतएव वेदके स्वतन्त्र-शासनके विषयमें अल्पज्ञ जीवको नियोग पर्यनुयोग (ऐसा उपदेश क्यों दिया, ऐसा देना चाहिये था) करने का कुछ अधिकार नहीं है। वेदादिशास्त्रोंने जैसा उपदेश दिया है, उसीके अनुसार चलनेमें ही हमारा कल्याण है।

वैष्णव—तब क्या वेदादिशास्त्रोंने उपास्य देव अनेक बतलाये हैं।

स्वामीजी—उपास्य-देव अनेक नहीं बतलाये हैं, किन्तु अनेक पोशाकों (विविध-नाम-रूप) के भीतर रहने वाला एकही देव उपास्य बतलाया है। हमारे भगवान् राजराजेश्वर एवं सम्राटोंके भी सम्राट् हैं। अतएव वे गणेश, शंकर, विष्णु, सूर्यकी एवं देवीकी विविध पोशकें धारण करते हैं।

वैष्णव—भगवान्‌के एक ही विष्णुरूप-पोशाककी उपासना करने से क्या हानि है ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वामीजी—अन्य-शिवादिरूप पोशाकोंकी उपासना न करनेसे प्रत्युत उनसे घृणा करने से, महती हानि है, और साथ ही वेदादिशास्त्रोंके उपदेशानुसार न चलनेसे शास्त्रावज्ञारूप दोष भी आयेगा ?।

वैष्णव—जो एक-विष्णुको ही मानता है, उसके ऊपर शास्त्रावज्ञा क्यों आयेगी ?।

स्वामीजी—शास्त्र-उपदिष्ट शिवादिके नहीं माननेसे शास्त्रावज्ञा क्यों न आयेगी ? सनातनधर्म, वैदिक-धर्म है, वैदिक-विधिके अनुसार-ही उपासना करनी चाहिये, जो वेदोपदिष्ट-रुद्राष्टाध्यायके मन्त्रोंसे शंकर की उपासना नहीं करते हैं, वे वैदिक कैसे हो सकते हैं ?।

वैष्णव—शंकर की उपासना करने से विष्णु की अनन्य-भक्ति का विच्छेद होजाता है।

स्वामीजी—शास्त्रोक्त अनन्य-भक्तिका क्या स्वरूप है ?।

वैष्णव—अनन्य-भक्ति यानी अन्यकी भक्ति नहीं करना।

स्वामीजी—ठीक है. अच्छा विष्णु का क्या स्वरूप है ?।

वैष्णव-विष्णुका स्वरूप है सर्व-व्यापक 'वेवेष्टि सर्वं व्याप्नोतीति विष्णुः 'विष्लृ व्याप्तौ' !

स्वामीजी—तब तो विष्णु सबमें व्याप्त होगया, विष्णु-बुद्धिसे सबकी उपासना करनी चाहिये।

वैष्णव—विष्णु-बुद्धिसे सबकी उपासना करते ही हैं।

स्वामीजी—तब विष्णु-बुद्धि से शिवकी, गणेशकी, देवी आदि की उपासना क्यों नहीं करते हैं ?।

वैष्णव-विष्णु-बुद्धिसे शिवादिकी उपासना करनेसे अनन्यताकी क्या हानि न होगी ? तथा अन्याश्रय-दोष तो न होगा ?।

स्वामीजी—अनन्य-भक्ति यानी न अन्यः अनन्यः, विष्णुसे अन्य कुछ नहीं है, सब कुछ विष्णु ही है, सबको विष्ण ही समझना. विष्णु से अन्य बुद्धि होने ही न देना, यही अनन्यभक्ति है। श्रीमद्भागवतमें भी तो यही कहा है—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एकान्तभक्तिर्गोविन्दे, यत्सर्वत्र तदीक्षणम् ।
ईश्वरो जीवकलया, प्रविष्टो भगवानिति ।
प्रणमेद्दण्डवद्भूमावश्वचाण्डालगोखरम् ॥

वैष्णव—ऐसी अनन्य-भक्ति तो हमें स्वीकार है।

स्वामीजी—बस यही तो श्रौत-स्मार्त अद्वैत-सिद्धान्त है. विष्णुभक्त सबको विष्णु मानकर विष्णुपञ्चायतनकी उपासना करे, शिवभक्त सबको शिवमानकर शिव पञ्चायतनकी उपासना करे एवं देवीभक्त सबको देवीरूप मानकर देवी पञ्चायतनकी उपाना करे, इत्यादि।

वैष्णव—(प्रसन्न होते हुए) आखिर आपने अपने अद्वैतज्ञानका ही उपदेश दे दिया।

स्वामीजी—सूक्ष्म-बुद्धिसे विचार करनेपर अनन्य-भक्ति ही का दूसरा नाम अद्वैत-ज्ञान है। अनन्य यानी अविद्यमान है-अन्य जिसमें, अद्वैत यानी अविद्यमान है-द्वैत जिसमें। अद्वैत-भगवान्से अन्यका नाम द्वैत है, उस अन्य-द्वैतका बाध होने पर ही अनन्यभक्ति एवं अद्वैत-ज्ञानकी सिद्धि होती है। अतः श्रीमद्भगवत में यही कहा है—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥

गीतामें भगवान् का यही उपदेश है—

यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वञ्च मयि पश्यति ।
सर्वभूतस्थितं यो मां, भजत्येकत्वमास्थितः ॥
वासुदेवः सर्वमिति, स महात्मा सुदुर्लभः ।

(तत्त्ववेत्ता-जो अद्वय-ज्ञान है-उसे ही तत्त्व कहते हैं, उसे ही ब्रह्म, परमात्मा, एवं भगवान् कहा जाता है। जो मुझे सबमें देखता है, और मेरे में सब को देखता है। एक-भाव रखकर सर्व भूतों में स्थित मुझको भजता है। यह विश्व वासुदेव ही है, ऐसी धारणा वाला

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो महात्मा है, अतीव दुर्लभ है ।)

इस प्रकार श्रवण-सुधा संवादके सिलसिलेमें भिक्षा की हरिहर महापुरुषो !' की जोरकी ध्वनि सुनाई पड़ी । सभी महात्मा लोग भिक्षा के लिए तैयार होने लगे। पूज्यपाद महामण्डलेश्वरजी-महाराज उन आगन्तुक वैष्णव-पण्डितोंको भोजनके लिए कहने लगे, किन्तु वे हाथ जोड़कर कहने लगे कि—भगवन् ! आपके निर्मल-उपदेशामृतका पानकर हमलोग बड़े तृप्त होगये हैं, आपका हमपर अनुग्रह ही बना रहना चाहिये, यही भोजन-प्रसाद है।

तञ्जावरमें ६-७ रोज रहे, नित्यप्रति अनेक-विद्वानोंके साथ स्वामीजी महाराजका किसी न किसी विषय में विमल-संस्कृत-संवाद होता ही रहता था। इन सभी संवादोंका उल्लेख लेख बढ़ जाने के भयसे नहीं किया जा सकता। दर्शनार्थी-भक्तोंकी भीड़ सायंकाल पर्यन्त लगी रहती थी। सभी भक्तोंको 'भस्मप्रसाद' श्रीमण्डलेश्वरजी महाराजको बांटना पड़ता था। दक्षिणमें महात्माओंके दर्शनार्थ आये हुए माई-भाई सभी भक्त भस्मप्रसाद ग्रहण किये बिना नहीं जाते हैं। दक्षिणदेशमें भस्म [विभूति] का बड़ा भारी माहात्म्य माना जाता है। क्या सधवा क्या विधवा सभी देवियां तथा सभी पुरुष प्रसादकी कुछ भस्म शिरपर छोड़ते हैं, कुछ मस्तक पर लगाते हैं. कुछ मुखमें डालते हैं, तथा परिशिष्ट भस्मका हृदयादि-अङ्गोंपर लेप करते हैं। सायंकाल सर्व साधारणके लिए संस्कृतमें अथवा हिन्दी में पूज्यमण्डलेश्वर महाराज उपदेश देते थे. जिसका तामिल-भाषामें अनुवाद करके माननीय स्वामी महेश्वरानन्दजी दाक्षिणात्य लोगों को समझाते थे। तञ्जावरसे हम सब पञ्चनद-क्षेत्र में गये

पञ्चनदक्षेत्रम्।

इसको तामिल भाषामें 'तिरूवयार' कहते हैं। यहां श्रीशंकरजी का एक बड़ा भारी मन्दिर है। मंदिरके कई परकोटे बने हुए हैं, यहां

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक स्थान ऐसा विलक्षण है कि-जहां खड़े होकर 'महादेव' नामको जोरसे चिल्लानेपर प्रतिध्वनिरूपसे वह महादेव शब्द कमसे कम ५-७ बार सुनाई देता है। इस क्षेत्रकी अधिष्ठात्री भगवती पार्वती देवी-जिस का नाम है 'निखिलसौभाग्यसुन्दरी'-बड़ी ही मनोहर एवं दर्शनीया है। यह क्षेत्र कावेरी-नदीके तटपर है। यहां संस्कृतका एक विशाल विद्यालय है, तथा दो-तीन वेद पाठशालाएँ भी हैं।

दक्षिणमें प्रायः शौचक्रियाके लिए पात्र साथमें नहीं लेजाते हैं, दो चार मिलकर बातें भी करते जायेंगे, एवं विसर्ग-कर्म भी होता जायगा, और एकान्त स्थान-की भी आवश्यकता नहीं, (सरियान) मार्ग में भी बैठ जायेंगे, लोगोंके इस मार्ग में आनेपरउनसे भी संकोच नहीं किया जाता। गुद-प्रक्षालनके लिए कावेरी गंगा, चाहे उस समय सैकड़ों मनुष्य स्नान भी क्यों न करते हों, परन्तु वह कार्य निःसंकोच सबके सामने किया जाता है। दूसरे लोग कुछ ननु-नच नहीं करते हैं, क्योंकि-वे लोग भी तो ऐसा ही करते रहते हैं। यह अनाचार उत्तर भारतवासियोंको बड़ा भयंकर मालूम होता था, महात्मालोगोंके सामने यदि कोई ऐसा प्रसंग हो जाता था, तो सन्तलोग हो-हल्ला मचा देते थे। हस्तप्रक्षालनके लिए मृत्तिका लगाते ही नहीं, जलसे ही हाथ धोकर कुल्ला कर लिया जाता है, औरोंकी तो क्या बात करना ? परन्तु वेद-पाठी-ब्राह्मण-संस्कृत-विद्यार्थियों की भी यही दशा देखने में आई।

इस क्षेत्रमें श्रीमण्डलेश्वरजी महाराजने दो रोज कावेरीके तटपर संस्कृत में व्याख्यान दिया जिसका अनुवाद यहां के एक प्रसिद्ध विद्वान् ने किया था। व्याख्यानमें 'सदाचार' की चर्चा करते हुए पूर्वोक्त शौच विषयके अनाचार-निवारणका भी उपदेश दिया था। यहां एक धनी-भक्त के विशाल-क्षेत्रमें अपने लोग ठहरे थे। इस क्षेत्रमें प्रतिदिन सैकड़ों-ब्राह्मण-विद्यार्थी भोजन पाते हैं। पांच दिनतक यहां निवास कर 'पोन वासल्, नामक एक ग्राम में गये। इस क्षेत्र से वह ग्राम करीब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पांच माईल दूर होगा।

पोनवासल्।

यह ग्राम कावेरीके तट पर है, यहां माननीय श्रीस्वामी महेश्वरानन्दजी दाक्षिणात्य का मठ है। अतएव इस ग्रामके निवासी भक्त लोग २५-३० बैलगाड़ियां लेकर महात्माओंको लेनेके लिये पञ्चनद क्षेत्र में आये थे, उस समय वाद्यध्वनि के साथ 'नमः पार्वती पतये' 'हर हर महादेव' 'चित्सभेशं शिव-चिदम्बरम्' 'सर्वत्र गोविन्दनाम संकीर्तनम्' 'गोविन्दा गोविन्दा' आदिकी जय गर्जना बड़ी हर्ष-वर्धक हो रही थी। ग्राममें महात्माओंका प्रवेश होने पर 'पाद्यं समर्पयामि' 'अर्घ्यं समर्पयामि' की विधि शुरू हो गई। प्रत्येक गृहसे एक एक जल-पूर्ण बड़े कलशसे महामण्डलेश्वरजी महाराजके पैरोंमें जल समर्पण किया जाता था, इस प्रकार कई सैंकड़ों जलके घड़े पादमें समर्पित हो गये होंगे। इस पाद्यविधिमें कमसे कम दो तीन घन्टे लग गये थे इससे श्रीस्वामीजी महाराजके पैर इतने ठण्डे पड़ गये थे कि-जिनको अग्निसे गरम करना पड़ा।

यहां स्वामीजीका मठ ग्रामके बाहर एकान्तमें है, समीपमें ही कावेरी बह रही है यहाँ कावेरीका तट गंगा-तटके समान श्रद्धेय एवं भक्ति वर्धक है। यहां २-४ रोज रहकर, कावेरीके सामने तट पर 'तिरुमलवाडि' नामक स्थानमें गये।

इस मठमें किसी गृहस्थने पूज्य स्वामीजी महाराजसे प्रारब्ध एवं पुरुषार्थके विषयमें समाधानार्थ इस प्रकार प्रश्न किये थे।

प्रश्न—प्रभो ! आचार्यदेव ! प्रारब्ध बलवान् है कि-पुरुषार्थ ? कृपया ! इसका समाधान कीजिये।

उत्तर—दोनों ही बलवान् हैं, परन्तु अपने अपने स्थान पर। जिस प्रकार गाड़ी भी चलती है, और नौका भी, परन्तु अपने अपने स्थानों पर। गाडी स्थल पर तो नौका जल पर। स्थानका परिवर्तन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करने पर न नौका चल सकती है, न गाडी। उस प्रकार प्रारब्ध भोगमें बलवान् है तो पुरुषार्थ क्रियामें। स्वतन्त्रःकर्ता यानी क्रियामें यह प्रारब्धके परतन्त्र नहीं, स्वतन्त्रतासे शुभ या अशुभ जो चाहे सो क्रिया कर सकता है।

प्र०—भगवन् ! गुरुदेव ! भोग क्या चीज है ?

उ०—भोगका अर्थ है–सुख या दुःख का अनुभव। उसकी प्रारब्धके अनुसार ही प्राप्ति होती है। कल्पना करो कि–किसीके प्रारब्ध ने उसके लिए एक मन भर सुख, या एक मन भर दुःख भोगनेको नियत किया है, तो अवश्य ही उसे भोगना पड़ेगा। उसमें एक रत्ती भरकी न्यूनाधिकता नहीं हो सकती।

प्र०—तब तो भगवन् ! प्रारब्धकी ही बलवत्ता सिद्ध हो गई, कोई पुरुषार्थसे उस भोगको हटाना चाहे, तो हटा नहीं सकता, इससे तो पुरुषार्थ दुर्बल माना जायगा।

उ०—ऐसा नहीं, पुरुषार्थ भी प्रबल है। पुरुषार्थकी प्रबलता इस प्रकार है। आप प्रारब्धका भोग दो प्रकारसे भोग सकते हैं, शुभमार्गमें चलकर. या अशुभमार्गमें चलकर। आप अपने पुरुषार्थसे 'मैं अशुभमार्गमें कदापि नहीं चलुंगा, शुभमार्गमें ही चलुंगा' ऐसी दृढ़-प्रतिज्ञाकर शुभमार्गमें चल सकते हैं। इसमें प्रारब्ध कुछ प्रतिरोध नहीं डाल सकता। उसे तो भोग देना है, कहीं भी वह दे सकता है, शुभमार्गमें या अशुभमार्गमें। परन्तु अशुभमार्गमें भोग भोगने पर पापकी मजबूत गठड़ी बँध जाती है, और भावी बिगड़ जाता है। एवं शुभमार्गमें भोग भोगने पर पुण्यकी मजबूत गठड़ी बंध जाती है, और भावी सुधर जाता है। इसलिये शास्त्र एवं महात्मा उपदेश देते हैं कि–अशुभमार्गमें मत जाओ, उसमें सुख दीखने पर भी आगे मत बढ़ो। इस प्रकार शुभमार्गमें ही चले चलो, उसमें दुःख दीखने पर भी पीछे मत हटो। इसीमें ही पुरुषार्थकी सफलता है। पुरुषार्थके बलसे आप अशुभमार्गसे रुक सकते हैं, और शुभमार्गमें बढ़ सकते

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं। अशुभमार्गसे यदि आप सुख नहीं भोगते हैं तो वह सुख आपका नष्ट नहीं हो सकता। वह शुभमार्गमें आपको अवश्य मिलेगा। इस प्रकार यदि आप शुभमार्गसे दुःख नही भोगते हैं तो वह दुःख प्रारब्ध से नियत होनेके कारण मिलेगा ही, अनेक प्रकारके रोग-संकटादिके द्वारा उसे भोगना ही पड़ेगा। इसलिए शुभमार्गमें ही प्रारब्धका सुख या दुःख भोगना चाहिये, अशुभमार्गमें नहीं, ऐसा पुरुषार्थके द्वारा आप कर सकते हैं। अतएव श्रुति भगवती आदेश देती है कि-'यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि।' (तै० उ० १।११।२) अर्थात् जो निर्दोष-शास्त्र-प्रतिपादित-शिष्टानुमोदित-शुभकर्म हैं, उनका ही सेवन करना चाहिये, अन्य सदोष-अशुभकर्मो का नहीं।

तिरुमलवाडि।

यहां भी शंकरजीका एक विशाल मंदिर है। दक्षिणके छोटे २ ग्रामोंमें भी बड़े-बड़े विशाल मंदिर बने हुए हैं, जिनके बनानेमें कई लाखका खर्च हुआ होगा। यहां एक मठमें अपने लोग ठहरे थे, इस मठके महन्तजीने बड़े आग्रहके साथ ३-४ रोजके लिए आगेसे ही निमन्त्रण दे रक्खा था। मण्डलीके साथ हिन्दुस्थानी रसोइया-ब्राह्मण भी थे, इसलिये जहां कहीं जाते थे, वहां हिन्दुस्थानी रोटी-पूरी कचौरी मालपूआ आदि भोजन बनता था। प्रातःकालमें ही बहुतसे भक्तलोग इस मठमें आकर 'नमः शिवाय' का संकीर्तन करते थे। इस मठमें ३-४ रोज रहकर मोटरोंके द्वारा सभी महात्मा 'जम्बूकेश्वर' (अपोलिङ्गम्) पहुँचे।

जम्बूकेश्वर।

इस स्थानको तामिल-भाषामें 'तिरुवाणिकोविल' कहते हैं, 'कोविल' का अर्थ है—मंदिर। यह मंदिर बहुत उत्तम एवं विशाल है। मंदिरके बाहर पांच परकोटे हैं, तीसरे परकोटेमें एक सरोवर है,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मंदिरके बीचमें एक जम्बू (जामुन) का पेड़ है। इसके नीचे शिव-लिङ्ग है, जलहरीके नीचेसे जल ऊपर उठता हुआ नजर आता है, पण्डे लोग कहते हैं कि–यह जल कावेरीगंगासे बराबर आता रहता है, इसलिये यह 'जलमय-लिंग' कहलाता है। समीपमें ही 'अखिलाण्डे-श्वरीदेवी' नामसे प्रसिद्ध भगवती पार्वतीका मंदिर है। देवीके मंदिरके सामने ही एक गणेशका मंदिर है। कहते हैं—इस गणेशकी प्रतिष्ठा आद्य-आचार्य श्रीशङ्कर-स्वामीजीने की थी। जम्बूकेश्वरसे 'श्रीरङ्गजी' का मंदिर एक मील दूर है, और दो मील दूर 'त्रिचिनापल्ली' शहर है। यहांसे सभी महात्मा लोग 'श्रीरंगनाथ' के दर्शनके लिये गये।

श्रीरङ्गम्।

'श्रीरङ्गम्' शेष-शायी विष्णु-भगवान्का नाम है। श्रीरङ्गजीका बड़ा विशाल मंदिर है। अनेक परकोटोंसे घिरा हुआ है। प्रथम पर-कोटेमें बड़ा भारी बाजार है, यहां सभी प्रकारकी वस्तुओंकी बिक्री होती है। दक्षिणमें भगवान्को विशेषरूपसे भातका भोग लगता है। भातके बड़े-बड़े गोलोंसे भरे हुए थाल मंदिरसे निकलते हुए दृष्टि-गोचर होते हैं। बाहर पण्डे-लोग इनको वेच देते हैं। हृषीकेश हरिद्वारमें जैसे अतिथि अभ्यागत साधु गरीब-कंगालोंके लिए अनेक अन्नक्षेत्र खुले हुए हैं, वहां बड़ी उदारताके साथ अन्नका वितरण होता है। परन्तु दक्षिणके तीर्थोंमें अन्न-क्षेत्रोंका विशेषरूपसे संकोच ही देखनेमें आया। असलमें भगवत्प्रसाद वेचना इन मालदार पुजारी पण्डोंके लिए बड़ी शर्मकी बात होनी चाहिये। परन्तु लोभ क्या नहीं करा सकता ? यह गड़बड़ाध्याय केवल दक्षिणमें ही है, यह बात नहीं, किन्तु श्रीवल्लभ-संप्रदायके भी सभी मंदिरोंमें 'प्रसादबिक्री' सभी जगह देखनेमें आती है। सनातन-धर्मके इन ठेकेदारोंको तथा उनके अन्धे भक्त लोगोंको अपने ऐश-आराम एवं भोग-विलासके लिए लाखों करोड़ों रुपये व्यय करते कुछ भी संकोच नहीं होता, परन्तु भारतके इन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दरिद्र-नारायणोंको भगवत्प्रसाद मुफ्त बांटनेमें उनको बुखार चढ़ जाता है । 'दरिद्रान् भर कौन्तेय' (महाभारत) इत्यादि सनातन-धर्मके उपदेशोंको मानते नहीं ? या मानने पर भी आचरणमें नहीं रखते,और कहते हैं कि–हम सनातनधर्मी हैं,यह बड़ा आश्चर्यका विषय है । वास्तवमें भगवत्प्रसादका विक्रय करना भगवान्का ही तिरस्कार करनेके समान है । परन्तु 'स्वयं धीराः पण्डितं मन्यमानाः' को असली राह कौन दिखा सकता है ? अस्तु—

श्रीमण्डलेश्वरजी महाराज सहित सभी महात्मा-लोग शेष-शायी भगवान्का विधिपूर्वक-पूजन-अर्चन, स्तवन आदि बड़े आदरके साथ करके अपने निवासस्थान पर लौट आये । दूसरे रोज भी श्रीरङ्गजीका दर्शन किया, तथा 'शङ्करगुरुकुलम्' नामके स्थानका भी दर्शन किया । इस स्थानमें आचार्य-भगवत्पाद-श्रीशङ्कर-स्वामीजी महाराजका बड़ा रमणीय चित्ताकर्षक मंदिर है । इस स्थानके निर्माता हैं—वाणी-विलास-प्रेसके अध्यक्ष श्रीबालसुब्रह्मण्य शास्त्री । किसीके द्वारा समाचार मिलने पर शास्त्रीजी बड़े प्रसन्न हुए; तथा बड़ी श्रद्धा के साथ पूज्य मण्डलेश्वरजी महाराजसे मिले तथा बड़ा आदर-सत्कार किया । शास्त्रीजीने महामण्डलेश्वरजी महाराजसे निवेदन किया कि–आपका यहां संस्कृतमें व्याख्यान होना चाहिये । 'विश्वरूपयात्राके' निमित्तसे भ्रमण करने वाले विद्वान्-संन्यासी-आचार्योंसे यही तो लाभ है कि–कुछ उनका पावन-सदुपदेश सुननेको मिले । स्वामीजीने बड़े हर्षसे शास्त्रीजीका निवेदन स्वीकार किया, और कहा कि–हमारा तो यह कर्तव्य है, स्वधर्म है ।

शास्त्रीजी – परन्तु भगवन् ! व्याख्यानका विषय क्या होगा ?

स्वामीजी — आप श्रोताओंको जो रुचिकर हो, उसी विषयमें ही मैं व्याख्यान दूँगा ।

शास्त्रीजी–व्याख्यान होना चाहिये — 'गीता और उपनिषत्का

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिपाद्य अद्वैत-सिद्धान्त' पर।

स्वामीजी—तथाऽस्तु।

पश्चात् शास्त्रीजीने अपने पुस्तकालयकी अनेक पुस्तकें दिखाईं, निवास स्थानमें एक-दाक्षिणात्यभक्तका भण्डारा होनेके कारण वह भक्त जल्दी मचाने लगा, शास्त्रीजीने कहा—आप पधारिये। मैं अभी ही मण्डलेश्वर महाराजके व्याख्यानकी सूचना एक नोटिस द्वारा प्रकाशित कराता हूँ, तथा स्थानीय अनेक विद्वानोंको तथा जिज्ञासु भक्तोंको विशेषरूपसे आमन्त्रण देता हूँ। सायंकाल—७॥ से ६ तक व्याख्यानका समय होगा।

उस संस्कृत-व्याख्यानका संक्षिप्त भाव हिन्दी भाषामें इस प्रकार है—

मंगलाचरणम्।

ॐ नि षु सीद गणपते ! गणेषु, त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम्।
न ऋते त्वत् क्रियते किञ्चनारे, महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च ॥*

(ऋक्० संहिता १०।११२।९)

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्धः, एकः सूर्यो विश्वमनुप्रभूतः।
एकैवोषाः सर्वमिदं विभाति, एकं वा इदं विबभूव सर्वम् ॥★

(ऋक्संहिता ८।४।२९)

* हे गणपते ! आप गणोंमें (रुद्रगणोंमें, मरुद्‌गणोंमें देवगणोंमें मनुष्यगणोंमें एवं स्तोतृगणोंमें) प्रधानरूपसे बिराजिये। क्योंकि—विद्वान्‌लोग एकमात्र आप ही को विद्वान्-कवियोंके मध्यमें श्रेष्ठ-मेधावी विद्वान्-कवि समझते हैं, अतएव आपके अनुग्रहके बिना कोई भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता, इसलिए सभी कार्योंके आरम्भमें आपका प्रथम स्मरण नितान्त अपेक्षित है। हे महनीय गणपते ! त्रिवृत-पञ्चदश-सप्तदश-एकविंश—त्रयस्त्रिंश-आदि विविध-स्तोमोंसे युक्त, महामहिमशाली, अतएव विद्वानोंकी दृष्टिमें आदरणीय-जो हमारा स्तोम (शुभ-कार्य-समुदाय) है, उसे आप निर्विघ्न पूर्ण करनेकी कृपा करें।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ॐयो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं, यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ।
तᳬह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं, मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥+
(श्वेताश्वतर-उपनिषत् ६।१८)

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां,
ब्रह्माधिपति र्ब्रह्मणोऽधिपति र्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम् ।
(कृष्णयजुर्वेद तै०) ×

ॐ यस्मिन्नृचः साम यजूᳬषि,
यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।

★ जैसे एक ही अग्नितत्त्व देश-भेद, मन्त्रभेद काष्ठादि-उपाधि भेदके सम्बन्धसे गार्हपत्य, आहवनीय, आवसथ्य, सभ्य, आदि अनेक नाम, एवं विविध-लघु गुरु-ह्रस्व दीर्घ रूपोंसे प्रज्वलित होता है। जैसे एक ही सूर्य-चराचर जगत्में स्वकीय विविध विभूति-रूपसे प्रविष्ट होकर उन सब पदार्थोंका आत्मा बनता हुआ (सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च) नाना भावोंमें परिणत होता है, एवं जैसे उषाकालकी अधिष्ठातृ एक ही उषादेवी उदयबिन्दुके भेदसे नानारूप धारणकर सर्वत्र प्रकाशित होती है, वैसे एक ही ब्रह्मतत्त्व महदादि-उपाधिके भेदसे अनेक नाम-रूप धारणकर सर्वत्र सर्वदा सर्वरूपसे व्याप्त हो रहा है, अर्थात् यह विविध भेद-भिन्न, समस्त चराचर-प्रपञ्च एक ही ब्रह्मका विवर्त है।

+ जो उपनिषत्समधिगम्य, पुरुष सृष्टिकी कामनासे सर्व प्रथम चतुर्मुख ब्रह्माको उत्पन्न करता है, जो परमात्मा, ब्रह्माके लिए निखिलविद्यानिधि-वेदोंको समर्पित करता है, जो सकल-प्राणियोंके मन एवं बुद्धिके प्रकाशरूप स्वयं-प्रकाश देव हैं, उनको मैं मुमुक्षु होकर शरणमें जाता हूँ।

× जो परमात्मा सकल विद्याओंके ईशान-नियामक हैं, सकल भूतोंके ईश्वर-अन्तर्यामी हैं, वेदोंके अधिपति-रक्षक हैं, तथा हिरण्यगर्भके भी अधिपति हैं, ऐसा जो ब्रह्मरूप परमेश्वर है, वह मुझपर अनुग्रह करनेके लिए सदाशिव-वानी शान्ति-कल्याण-स्वरूप हो, वह सदाशिव आत्मदृष्टिसे मैं ही हूँ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यस्मिंश्चित्तꣳसर्वमोतं प्रजानां,
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥*॥
(शुक्ल-यजुर्वेदसंहिता० ३४।५)

जयति भुवनबीजं ज्योतिरेकं मुरारेः,
हृदयनिहितमात्रे यत्र संसारयन्त्रम् ।
गलति गलितमोहे शश्वदानन्दसान्द्रं,
यदभिदधति वेदाः तत्प्रपञ्चस्य चक्षुः ॥

वटविटपिसमीपे भूमिभागे निषण्णम्,
सकलमुनिजनानां ज्ञानदातारमारात् ।
त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं,
जननमरणदुःखच्छेददक्षं नमामि ॥

---

*जैसे रथचक्रकी नाभिमें अरे प्रतिष्ठित हैं, वैसे जिसमें ऋक्मन्त्र, साममन्त्र एवं यजुर्मन्त्र प्रतिष्ठित हैं, और जिसमें सकल-प्राणियोंका सर्व-पदार्थ विषयक ज्ञान युक्त चित्त ओत प्रोत है, वह मेरा मन शिवकल्याणमय-परमात्म-विषयक-चिन्तन एवं निश्चयवाला हो, या कल्याण-कारी धर्मविषयक संकल्प-वाला हो, अथवा शिवसंकल्प अर्थात् शिव-शान्त संकल्पवाला मन हो, क्योंकि-मनके सकल्प शान्त हो जानेपर ही शिव-योगकी निष्पत्ति होती है।

+मुरारी विष्णुभगवान्का ज्योतिस्वरूप-जो एकमात्र समस्त भुवनोंका आदि-कारण है, जिसके हृदयमें अपरोक्ष प्रकट हो जाने पर यह समस्त संसार-रूप यन्त्र गायब हो जाता है, संसार-मोहकी निवृत्ति होने पर शाश्वत निर्मल पूर्ण आनन्द का अनुभव होता है, जिस तत्त्वको सकल वेद प्रतिपादन करते हैं, वही तत्त्व समस्त विश्वका प्रकाशक है। उसकी सदा विजय है।

जो दक्षिणामूर्ति देव—भगवान् शंकर सनकादि-मुनियों को आत्म-ज्ञान देते हुए वट वृक्षके समीप भूमि-खण्डमें विराजमान हैं, जो तीनो भुवनोंके गुरु एवं ईश्वर हैं, जन्म-मरणादि-संसार-दुःखके ध्वंस करनेमें जो अतीव कुशल हैं, उनको मैं नमस्कार करता हूँ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षरूप चतुर्विध पुरुषार्थोंमें एकमात्र मोक्ष ही परमपुरुषार्थ है। वह मोक्ष दुःखोंकी आत्यन्तिकी-निवृत्तिरूप; तथा परमानन्दकी प्राप्तिरूप है। इस मोक्षका साक्षात्साधन है, जीव-ब्रह्मैक्य ज्ञान।

'ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः' (श्वे० ६।१३)

'तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय'

(शु० य० वे० ३१।१८)

'ज्ञानादेव तु कैवल्यम्' 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः' (मु० उ०)

'सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि।' (गी० ४।३६)

'ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।' (गी १०। १०)

'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।' (गी० ४।३८)

'ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते ऽर्जुन!। (गी० ४।३७)

इत्यादि उपनिषत् एवं गीताके वचन इस अर्थ में प्रमाण हैं।

अर्थात् देव-परमात्माको जानकर अविद्यादि-सर्व-पाशोंसे मुक्त हो जाता है। उसी ही को जानकर मृत्युका अतिक्रमण कर लेता है, मोक्ष के लिए आत्मज्ञानको छोड़कर अन्य कोई मार्ग नहीं है। ज्ञान से ही कैवल्यमोक्ष की प्राप्ति होती है। ज्ञानके बिना मुक्ति नहीं होती। ज्ञान-रूपी नौका द्वारा ही तू हे अर्जुन! समस्त-पापमयसंसार-सागर को तर जायगा। मैं उन भक्तोंको ज्ञानयोगका दान करता हूं। जिसके द्वारा वे मुझ परमात्मामें आ मिलते हैं। ज्ञान के समान इस लोक में अन्य पवित्र वस्तु नहीं है। हे अर्जुन! ज्ञानरूपी-अग्नि समस्त कर्मों को भस्म कर डालती है)

वह ज्ञान-'तत्त्वमसि' 'अहं ब्रह्मास्मि' 'अयमात्मा ब्रह्म' 'प्रज्ञानं ब्रह्म' इत्यादि महावाक्योंके विचारसे उत्पन्न होता है। भगवान

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीकृष्णने गीतामें भी इन महावाक्योंका स्पष्ट उपदेश दिया है। इस लिये गीताका उपनिषत् एवं ब्रह्मविद्या विशेषण सार्थक हैं जैसे 'तत्त्वमसि' महावाक्य का उपदेश ६ अध्यायके २६।३० एवं ३१ इन तीन श्लोकों में दिया है।

अतएव आचार्य मधुसूदन-स्वामीजी ने भी कहा है—

तदेवं निरोधसमाधिना त्वंपदलक्ष्ये तत्पदलक्ष्ये च शुद्धे साक्षात्कृते तदैक्यगोचरा तत्त्वमसीतिवेदान्तवाक्य-जन्या निर्विकल्पसाक्षात्काररूपा वृत्तिर्ब्रह्म-विद्याभिधाना जायते। ततश्च कृत्स्नाविद्यातत्कार्यनिवृत्त्या ब्रह्मसुखमत्यन्तमश्नुत इत्युपपादयति त्रिभिः श्लोकैः -तत्र त्वंपदलक्ष्योपस्थितिमाह—सर्वभूतस्थमिति।

इस प्रकार निरोध-समाधि से त्वंपदलक्ष्य एवं तत्पदलक्ष्य शुद्ध-ब्रह्मात्मतत्त्वका साक्षात्कार होने पर तत्त्वंपदलक्ष्यके ऐक्यको विषय करने वाली, 'तत्त्वमसि' इस वेदान्तके महावाक्य-विचारसे समुत्पन्न, निर्वि-कल्प-साक्षात्काररूपा, अन्तःकरणकी अखण्ड ब्रह्माकारा वृत्ति 'ब्रह्मविद्या' नामवाली उत्पन्न होती है, जिस वृत्तिसे समस्त अविद्या और तत्कार्य द्वैत-प्रपञ्चकी निवृत्ति होनेपर मुमुक्षु अत्यन्त ब्रह्मसुखका अनुभव करता है, यह तीन श्लोकोंसे उपपादन करते हैं, इन तीनोंमें प्रथम श्लोकसे त्वंपदलक्ष्यकी उपस्थिति कहते हैं—

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा, सर्वत्र समदर्शनः ॥ (६।२९)

एक-अद्वय-भावावस्थितिरूप-योगसे युक्त-आत्मावाला, एवं सर्वत्र समभावका दर्शन करने वाला योगी, समस्तभूतोंमें अवस्थित आत्मा को, तथा आत्मामें समस्तभूतों को बर्फ में जलकी भाँति अभेदरूपसे देखता है।)

इस श्लोकसे भगवान्ने शुद्ध-त्वंपदलक्ष्य-प्रत्यगात्माका निरूपण किया है, आत्मशब्द मुख्यवृत्तिसे प्रत्यगात्माका ही प्रतिपादन करता है।

एवं शुद्धं त्वंपदार्थं निरूप्य, शुद्धं तत्पदार्थं निरूपयति—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार पूर्वोक्त २६ वें श्लोकसे शुद्ध-त्वंपदार्थका निरूपण करके अब शुद्ध-तत्पदार्थ का ३० वें श्लोकसे निरूपण करते हैं—

योमां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि पश्यति ।

तस्याहं न प्रणश्यामि, स च मे न प्रणश्यति ॥

(जो मुझ-वासुदेव को सबमें देखता है, और समस्तविश्वको मुझमें देखता है। उससे मैं अदृष्ट नहीं होता एवं वह मेरे से अदृष्ट नहीं रहता। अर्थात् वह योगी और मैं परमात्मा अभेदभाव से युक्त हो जाते हैं।)

इसके बाद 'असि' पदबोध्य जीव-ब्रह्मैक्य-रूप अखण्ड-वाक्यार्थ-का ३१ वें श्लोकसे निरूपण करते हैं।

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥

सर्वेषु भूतेष्वधिष्ठानतया स्थितं सर्वानुस्यूतसन्मात्रं मामीश्वरं तत्पदलक्ष्यं त्वेन त्वंपदलक्ष्येण सहैकत्वमत्यन्ताभेद मास्थितः सन् घटाकाशो महाकाश इत्यत्रेवोपाधिभेदनिरा करणेन निश्चिन्वन् यो भजति 'अहं ब्रह्मास्मीति' वेदान्त-वाक्यजेन तत्त्वसाक्षात्कारेणापरोक्षीकरोति, सोऽविद्यातत्कार्य-निवृत्त्या जीवन्मुक्तः कृतकृत्य एव भवति। येन केनापि रूपेण प्रारब्धकर्मवशात् वर्तमानोऽपि व्यवहर-न्नपि स योगी ब्रह्माहमस्मीति विद्वान् मयि परमात्मन्येवाभेदेन वर्तते, सर्वथा तस्य मोक्षं प्रति नास्ति प्रतिबन्धशङ्का।

अर्थात् सभी चराचरभूतोंमें अधिष्ठानरूपसे स्थित सर्वानुस्यूत-सन्मात्र, तत्पदलक्ष्य मुझ ईश्वरका त्वंपदलक्ष्य-स्वभूत-प्रत्यगात्माके साथ एकत्व यानी अत्यन्त-अभेदका 'घटाकाश महाकाशके समान' उपाधिप्र-युक्तभेदके निराकरण द्वारा-निश्चय करता हुआ जो 'मैं ब्रह्म हूँ' इसप्रकार वेदान्तवाक्यके विचार से समुत्पन्न तत्त्वसाक्षात्कार द्वारा अभिन्न-ब्रह्मा-त्मतत्त्वका अपरोक्ष अनुभव करता है, वह अविद्या तत्कार्यकी निवृत्तिसे कृतकृत्य जीवन्मुक्त ही हो जाता है। प्रारब्धकर्मवशात् जिसकिसीरूपसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वर्तमान-यानी व्यवहार करता हुआ भी वह योगी 'मैं ब्रह्म हूं' ऐसा जानता हुआ मुक्त परमात्मामें अभेद रूपसे ही वर्तता है, उस जीवन्मुक्त-के लिए मोक्षके प्रति सर्वथा किसी भी प्रतिबन्ध की शंका नहीं है।

इसप्रकार 'ऋग्वेदीय 'प्रज्ञानं ब्रह्म' इस महावाक्यका निरूपण भगवान्‌ने गीताके १३ वें अध्यायके द्वितीय श्लोकसे किया है—

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत !।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं, यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥

सर्वक्षेत्रेषु य एकः क्षेत्रज्ञः स्वप्रकाशःचैतन्यरूपो नित्यो विभुश्च तमविद्याऽ-ध्यारोपितकर्तृत्वभोक्तृत्वादिससारधर्ममाविद्यकरूपपरित्यागेन मामीश्वरमसंसारिण-मद्वितीयब्रह्मानन्दरूपं विद्धि = जानीहि। हे भारत! एवं क्षेत्रं मायाकल्पित मिथ्या, क्षेत्रज्ञश्च परमार्थसत्यस्तद्भ्रमाधिष्ठानमिति क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्यज्ज्ञानं तदेव मोक्षसाधनत्वाज्ज्ञानं अविद्याविरोधि प्रकाशरूपं मम मतम्।

अर्थात् सभी क्षेत्रोंमें जो एक क्षेत्रज्ञ, स्वप्रकाश चैतन्यरूप नित्य-विभु है, वही अविद्या से आरोपित कर्तृत्वभोक्तृत्वादिसंसार-धर्म युक्त हुआ है, ज्ञानसे उसके कर्तृत्वादि-आविद्यकरूपके परित्याग द्वारा उसको मुक्त असंसारी अद्वितीय ब्रह्मानन्द स्वरूप ही जान। हे भारत = अर्जुन! इस प्रकार क्षेत्र मायाकल्पित मिथ्या है, और क्षेत्रज्ञ परमार्थ सत्य, संसार-भ्रमका अधिष्ठान है, इस प्रकारका जो क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका ज्ञान है, वही मोक्षका साधन होने से अविद्याका विरोधी प्रकाशरूप ज्ञान है, ऐसी मेरी सम्मति है।

इस श्लोकमें क्षेत्रज्ञ पदसे प्रज्ञान-जीवका एवं 'मां' पदसे ब्रह्मका तथा सामानाधिकरण्य-निर्देश द्वारा अभेद-भाव का सूचन किया है।

इस प्रकार अथर्ववेदीय' 'अयमात्मा ब्रह्म' महावाक्यका प्रति-पादन भगवान्‌ने गीताके १० वें अध्यायके २० वें श्लोकसे किया है—

अहमात्मा गुडाकेश ! सर्वभूताशयस्थितः।

हे गुडाकेश अर्जुन! मैं सर्व-भूतोंके हृदय में अवस्थित-परमात्मा ही सबका आत्मा हूँ। एवं यजुर्वेदीय 'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्यका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवान्‌ने गीताके १० वें अध्यायके ३९ वें श्लोकसे निरूपण किया है—

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ! ।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥

सर्वभूतानां बीजं-उपादानकारणं चैतन्यमहमेव मया विना = मया परित्यक्तं चराचरं भूतं न तदस्ति अतो मदात्मकं सर्वं मयैव सच्चिदानन्दरूपेण सर्वस्य सिद्धेः ।

अर्थात् सर्वभूतोंका उपादान कारण बीज चैतन्य मैं ही हूँ, मेरी सत्ता विना मुझसे परित्यक्त कोई भी चराचरभूत स्वतन्त्ररूपसे नहीं रह सकता है, इसलिये सबकुछ मद्रूप ही है, मुझ सच्चिदानन्दसे ही सबकी सिद्धि है ।

इस प्रकार उपनिषदोंमें एवं गीतामें महावाक्योंकी आलोचना द्वारा निष्पक्षपात-विद्वानोंको अद्वैत-सिद्धान्त ही दृष्टिगोचर होता है। अतएव 'अद्वैतामृतवर्षिणी' यह भगवद्गीताका प्रसिद्ध अन्वर्थ नाम अद्वैतसिद्धान्तके प्रतिपादन द्वारा ही सार्थक होता है ।

गीताकी माता उपनिषद् तो स्पष्ट ही अद्वैत-सिद्धान्तका प्रतिपादन करती है अनेकोंमें एक ही-को परमार्थरूपसे देखना यही उपनिषदोंका यथार्थ दर्शन है—'एकत्वमनुपश्यतः' (ईशोपनिषत्) 'एकधैवानुद्रष्टव्यम्' (बृहदारण्यकोपनिषत्)

एकमें ही अनेकोंका उपसंहार कर देना, यही श्रौत-विज्ञान है—

'यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।' (ईश० उ० ।

'सर्वाणि भूतानि' यह बहुवचन है, अनेकत्वका प्रतिपादक है और वे सब अनेक 'आत्मा' एव अभूत,' आत्मा ही हो गया । यहाँ 'आत्मा' पद एकवचन है, 'विजानतः' पदसे—यही वैदिक-विज्ञान है जो अनेकका विलय एकमें कर अन्तमें एक ही अद्वय-तत्त्व परिशिष्ट रहता है, ऐसा बोधन करता है ।

असलमें प्रमाणान्तरसे अनधिगत होनेसे, किसी भी प्रकार से

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बाधित न होनेसे, तथा जिसके विज्ञान द्वारा महाप्रयोजन सिद्धहोनेसे अद्वैत-विज्ञान ही वेदादिशास्त्र प्रतिपाद्य हो सकता है। जो, शास्त्रज्ञान-शून्य मूढ-मनुष्योंको भी प्रत्यक्षादि-प्रमाणों से स्वभावतः सिद्ध है, जिसका स्वरूप स्वतः बाधित एवं व्यभिचारी है, तथा जिसके ज्ञानसे इष्ट-प्रयोजन कुछ भी सिद्ध नहीं होता, वह द्वैत-विज्ञान, शास्त्र प्रतिपाद्य कैसे हो सकता है ? नहीं हो सकता।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः, साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥
(श्वे० ६।११)

सम्पूर्ण भूतोंमें स्वप्रकाशरूप एक अद्वितीय ही आत्मा है, परन्तु वह मायासे एव तत्कार्य-पंच कोशोंसे आवृत होनेसे 'गूढ' है अर्थात् सब जीव उसे नहीं जानते हैं।

प्रश्न—जीवोंके साथ उसका सम्बन्ध न होनेसे अथवा उनसे भिन्न होने से सभी जीव उसको नहीं जानते होंगे ?

उत्तर—इस प्रश्नका 'सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा' इन दो पदोंसे श्रुति-भगवती समाधान करती है, सर्वव्यापी होनेसे जीवोंके साथ उसका असम्बन्ध नहीं बन सकता, तथा सर्वभूतान्तरात्मा यानी सर्व चराचर-भूतोंका अन्तर प्रत्यगात्मस्वरूप होनेसे वह जीवोंसे भिन्न भी नहीं हो सकता, इसलिये वह मायासे आच्छादित होने से ही सभी जीवोंको आत्मज्ञानके बिना उसका विशेषरूपसे प्रत्यक्ष-भान नहीं होता, अतएव भगवान्ने गीतामें भी यही कहा है—

नाऽहं प्रकाशः सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति, लोको मामजमव्ययम् ॥ (७।२५)

प्रश्न—'सर्व-भूतोंमें ब्रह्मात्मा रहता है' इस कथनसे आधार-आधेय भावकी प्रतीति होती है, इससे आकाशादि-भूतोंसे ब्रह्मका पृथक्त्व सिद्ध होता है, इसलिये इस मन्त्रसे अद्वैत-सिद्धि के बजाय द्वैत

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की सिद्धि हो जाती है।

उत्तर—इस प्रश्नका समाधान श्रुति भगवती स्वयं 'सर्वभूताधिवासः' पदसे करती है। अधिवासका अधिष्ठान अर्थ है। अर्थात् वह ब्रह्म सम्पूर्ण भूतोंका अधिष्ठान है, अतएव वह साक्षी-चेता (चैतन्य स्वरूप) है, इसलिये अधिष्ठान-रूप इस साक्षी चेतन-आत्मामें सम्पूर्ण आकाशादि भूत कल्पित हैं, और जो कल्पित होता है, वह अधिष्ठान-सत्ता से अतिरिक्त-सत्तावाला नहीं होता है, इसलिये इस मन्त्रसे किसी भी प्रकार से पारमार्थिक-द्वैतकी सिद्धि नहीं हो सकती।

अतएव श्रुति-भगवती केवल एवं निर्गुण पदसे प्राकृतिक-त्रिविध गुणातीत एवं दृश्य-प्रपञ्चातीत अद्वितीय-ब्रह्मात्माका स्पष्ट प्रतिपादन करती है।

इस मन्त्रके आलोचनसे भी गीता एवं उपनिषदोंका प्रतिपाद्य अद्वैत-सिद्धान्त निर्भ्रान्त रूपसे समझमें आ जाता है। परन्तु इन मन्त्रोंका-आलोचन श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरुओं के द्वारा ही होना चाहिये, स्वतन्त्र रूप से नहीं, अतएव श्रुति आदेश देती है कि—

'आचार्यवान् पुरुषो वेद' (छां० उ० ६।१४।२)

अर्थात् श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ आचार्य गुरु कृपा-पात्र ही मुमुक्षु प्रत्यग-भिन्न-ब्रह्मतत्त्वको जानता है। अतएव भामतीकार-आचार्य- वाचस्पति-मिश्रजी ने भी कहा है—

सर्वे हि तावद्वेदान्ताः पौर्वापर्य्येण वीक्षिताः।
ऐकान्तिकाद्वैतपराः द्वैतमात्रनिषेधतः॥

(शारीरकभाष्य-भामतीटीका)

अर्थात् सम्पूर्ण वेदान्त (उपनिषत्) गुरुद्वारा पूर्वापर के विचार करनेसे सजातीय, विजातीय, स्वगतरूप त्रिविध-भेद-शून्य अद्वितीय-ब्रह्मात्मतत्त्वके ही प्रतिपादक हैं, ऐसा निश्चय होता है, क्योंकि-अध्यारोप-अपवाद द्वारा उपनिषदोंका द्वैत-निषेधमें ही तात्पर्य है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अतएव बृहदारण्यकोपनिषत्में गार्गि-याज्ञवल्क्यके संवाद द्वारा द्वैत निषेधकी स्पष्ट-घोषणा सुननेमें आती है–'कस्मिन्नु खल्वाकाश ओतश्च प्रोतश्चेति'।

गार्गीने याज्ञवल्क्य से पूछा कि–यह अव्याकृत-आकाश किसमें ओत प्रोत है, इसका अधिष्ठान कौन है ? कृपया कहिये।

स होवाचैतद्वै तदक्षरं गार्गि ! ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घमलोहितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाय्वनाकाशमसङ्गमरसमगन्धमचक्षुष्कमश्रोत्रमवागमनोऽतेजस्कमप्राणममुखममात्रमनन्तरमबाह्यं न तदश्नाति किंचन न तदश्नाति कश्चन' (बृ० ३।८।८)

अर्थात् हे गार्गि ! वह अव्याकृतरूप-आकाश अक्षर-परब्रह्ममें ओत-प्रोत है, इस प्रकार वेदवेत्ता ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष कहते हैं। वह अक्षर-ब्रह्म स्थूलसे भिन्न-अस्थूल है, अणुसे भिन्न अनणु (बृहत्) है, न ह्रस्व है, न दीर्घ है, न लोहित है, न स्नेह है, न छाया है, न तम है, न वायु है, न आकाश है, न सङ्ग-सम्बन्ध किसीसे है, अर्थात् असंग है। न रस है, न गन्ध है, न चक्षू है, न श्रोत्र है, न वाक् है, न मन है, न तेज है, न प्राण है, न मुख है, न हस्तपादादिरूप है, मात्रारूप-परिच्छेद शून्य है, छिद्ररहित है, अर्थात् अन्तर-बाह्य भेद रहित है, तथा वह अक्षर ब्रह्म किसीको भक्षण नहीं करता है, एवं न इस अक्षरको कोई भक्षण करता है, अर्थात् वह भोक्तृत्व-भोग्यत्व-धर्मसे रहित है। ऐसा याज्ञवल्क्य-महर्षि ने गार्गी के प्रति कहा।

इस मन्त्रसे अक्षरब्रह्ममें स्थूलत्वादि धर्म-संयुक्त-उक्तानुक्त यावत्-द्वैत-प्रपञ्चका अत्यन्ताभाव सिद्ध होता है।

प्रश्न—'यो विज्ञाने तिष्ठन्विज्ञानादन्तरो यं विज्ञानं न वेद, यस्य विज्ञानं शरीरं यो विज्ञानमन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः।' (बृ० ३.७।२२) यह काण्वशाखाका पाठ है। माध्यन्दिन-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शाखामें विज्ञानके स्थानमें 'आत्मा' शब्द है, 'य आत्मनि तिष्ठन्' इत्यादि। अतएव इस श्रुतिमें विज्ञान शब्द विज्ञानप्रचुर होनेसे जीवका वाचक है जो परमात्मा जीवके अन्दर स्थित हुआ जीवको प्रेरणा करता है, जिसको जीव नहीं जानता, जीव जिसका शरीर है, जो जीवका नियामक है, वही अन्तर्यामी अमृत-आत्मा है। इस श्रुतिके पर्यालोचनसे-शरीर-आत्मासे भिन्न-अन्तर्यामी ईश्वरका शरीरी-स्वरूप सिद्ध होता है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति ॥
(ऋ० १।१२४।३०) (मुं० उ० ३।१।१)

उच्छेद-धर्मयुक्त वृक्ष-तुल्य इस शरीरमें जीव एवं परमात्मारूप, सर्वदा संयुक्त, चेतनत्वादि-धर्मोंसे समानस्वभाववाले दो मित्र पक्षी हैं इन दोनोंके मध्यमें ईश्वरसे भिन्न जो जीव है, वह कर्मफलका भोक्ता है, और जीवसे विलक्षण जो परमात्मा है, वह कर्मके फल-सुखदुःखादिकोंको नहीं भोगता है, केवल प्रकाश ही करता है।

इस मन्त्रके आलोचनसे भी जीव-ईश्वरका भेद ही सिद्ध होता है। ऐसा होने पर द्वैत-निषेध-पूर्वक अद्वैत-सिद्धिकी सम्भावना कैसे हो सकती है?

उत्तर—जैसे निर्भेद-एक आकाशमें 'घटाकाशः-मठाकाशः' इस प्रकार घटादिरूप-उपाधिसे भेद व्यवहार होता है, वैसे ही निर्भेद-एकमेवाद्वितीयं ब्रह्ममें अविद्याजन्यशरीरादिरूप कार्यकरण-उपाधिसे शरीर-आत्माका एवं अन्तर्यामी-ईश्वरका काल्पनिक भेद व्यवहार होता है, पारमार्थिक नहीं। इसलिये कल्पित-भेदप्रयुक्त बिम्ब प्रतिबिम्बके समान एक भोक्ता और दूसरा द्रष्टा बन सकता है। इस अभिप्रायसे ही जीवसे भिन्न-अन्तर्यामीको नियन्ता कहा है। वस्तुगत्या प्रत्यगात्मा-रूप द्रष्टा एक ही है, दो नहीं। 'नाऽन्योऽतोऽस्ति द्रष्टा' (बृ० ३।७।२४)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इत्यादि श्रुति एक द्रष्टासे भिन्न अन्य द्रष्टाका निषेध करती है। और यह अनुभव सिद्ध है कि—जो अहं-प्रत्ययका विषय होता है, वही द्रष्टा कहलाता है, अहं-प्रत्ययकी विषयता एकमें ही है, दोमें नहीं। इसलिये दो प्रत्यगात्मा द्रष्टा नहीं हो सकते। उस प्रत्यगात्मासे भिन्न निखिल अनात्मा है, भगवान् अनात्मा नहीं, किन्तु सर्वात्मा हैं, अतएव जीवात्मा एवं अन्यर्यामीका सत्य-भेद सिद्ध नहीं हो सकता, किन्तु उपाधिकृत कल्पित-भेद ही सिद्ध होता है, उपाधि-निरास द्वारा दोनोंका वास्तविक-अभेद है। अविद्या-कल्पित-भेदके अङ्गीकारसे ही भेदप्रतिपादक श्रुति, ज्ञातृज्ञेयादित्रिपुटी-भेद, प्रत्यक्षादि-प्रमाण, 'अहं त्वं ममादि रूप' संसारानुभव तथा विधि प्रतिषेध–शास्त्र अविद्यावस्थामें अज्ञके लिए उपपन्न हो जाता है।

'यत्र हि द्वैतमिव भवति तदितर इतरं पश्यति' (बृ० ४।५।१५) (जिस अविद्यावस्थामें यह द्वैत-प्रपञ्च सत्की तरह प्रतीत है, तब उस अवस्थामें दृश्य प्रपञ्च-उपाधिवाला आत्मा भिन्न हुआ, भिन्न-भिन्न वस्तुओंको देखता है) यह श्रुति अविद्याकालमें ही भेद-व्यवहारका प्रतिपादन करती है। 'यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्तत्केन कं पश्येत्' (बृ० ४।५।१५) (जिस ज्ञान-कालमें इस विद्वान्‌को सम्पूर्ण जगत् आत्म-मात्र ही हो जाता है, उस ज्ञान-कालमें आत्मासे भिन्न-वस्तुका अभाव होनेसे किस करणसे किस विषयको कौन कर्ता देखे ?) यह श्रुति विद्याकालमें भेदप्रयुक्त सर्वव्यवहारका प्रतिषेध प्रतिपादन करती है।

वस्तुतः 'यो विज्ञाने तिष्ठन्' इस श्रुतिमें विज्ञान शब्दका जीवात्मा अर्थ नहीं है, किन्तु बुद्धि अर्थ है, अतएव 'विज्ञान' शब्दके अनुरोधसे 'य आत्मनितिष्ठन्' इस माध्यन्दिनशाखीय-आत्म-शब्दका भी विज्ञान ही अर्थ करना चाहिये। इस अर्थमें विनिगमक है–पूर्वोक्त-नियम्य प्राण, वाक्, चक्षु, श्रोत्र, मन, त्वक्, विज्ञान, एवं रेतः, जो आत्मसम्बन्धी पदार्थ हैं, उनके साथ विज्ञानका परिगणन। सहचरित आत्मसम्बन्धी पदार्थ हैं, इसलिये सहचरित बुद्धिरूप-विज्ञानका ही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ग्रहण करना उचित है, असहचरित-जीवात्माका विज्ञान तथा आत्म-शब्दसे ग्रहण करना उचित नहीं है। 'सहचरितासहचरितयोः सहचरितस्यैव ग्रहणं युक्तम्' । यह प्रसिद्ध दार्शनिक न्याय है।

ऐसा होने पर भी जो विशिष्टाद्वैतवादी विज्ञान एवं आत्मा शब्दका जबरदस्तीसे जीवात्मा अर्थ करते हैं। और 'यस्य विज्ञानं शरीरं' यस्य आत्मा शरीरं' इस श्रुतिका प्रमाण देकर जो जीवात्मा को परमात्माका शरीर प्रतिपादन करते हैं। उनसे पूछना चाहिए कि— शरीर शब्दका प्रकृतमें क्या अर्थ करते हो ?

'शीर्यत इति शरीरं' इस योगवृत्तिसे शरीर-शब्दका जीवात्मा में प्रयोग नहीं कर सकते हैं, क्योंकि—अविनाशी–अपरिणामी जीवात्माका विशरणस्वभाव नहीं हो सकता है। 'भोगायतनं शरीरम्' इस योगरूढ़वृत्तिसे जीवात्माको परमात्माका भोगायतन मानने पर—

जीव ईशशरीरं चेत्, जीवदुःखेन दुःखिता ।
ईशस्य दुर्निवारा स्यात्, विशिष्टाद्वैतिनो मते ॥

जीवके दुःखसे ईश्वर भी दुःखी हो जायगा। इसलिये 'शरीर' शब्दका गौणीवृत्तिसे गौणार्थक मानना ही परिशिष्ट रहता है। गौणार्थके ग्रहणमें नियम्यत्वरूपगुण प्रयोजक है। वस्तुगत्या अद्वैत-सिद्धान्त में शरीर शब्दका गौणार्थ मानना भी युक्ति संगत नहीं है, क्योंकि शुद्ध जीव परमात्मारूप ही है अतएव शरीर शब्दका स्वरूप अर्थ मानना ही यथार्थ है।

जो वादी 'य आत्मनि तिष्ठन्' इत्यादि श्रुतिका प्रमाण देकर परमात्मा जीवात्माका आत्मा है, और जीवात्मा परमात्माका शरीर है ऐसा कहते हैं; उनके मतमें 'ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्' (गी० ७।१७) इस भवगद्वचनसे विरोध होता है। इस गीताके वचनमें वादीके मतानुसार ज्ञानी (जीव-विशेष) परमात्माका आत्मा है, अर्थात परमात्मा ज्ञानीका शरीर है, ऐसा अर्थ मानने पर जीवात्मा एवं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परमात्मा परस्पर एक दूसरेके आत्मा एवं एक दूसरेके शरीर हो जाते हैं, ऐसा भी विरोध होनेसे नहीं मान सकते हैं अतएव जीवात्मा परमात्माका ऐक्य बोधक अद्वैतसिद्धान्त ही विरोध-रहित प्रामाणिक सिद्ध हो जाता है।

'द्वा सुपर्णा' श्रुति द्वैतका विधान नहीं करती है, किन्तु प्रत्यक्ष-सिद्ध द्वैतका ग्रहण करके अनन्य-लभ्य अनन्यरूप अद्वैतका विधान करने के लिए प्रवृत्त हुई है। द्वैतदर्शी-मुमुक्षुजन अद्वैत-उपदेशके अधिकारी हैं, बालके प्रति बालभाषा ही बोलनी चाहिये, इसलिये उपदेष्ट्री-श्रुति, अनेक प्रकारके अधिकारियोंकी मति-वैचित्र्य देखकर, तथा उनमें अनन्त-जन्मोंके द्वैत-मार्गके दृढ़संस्कारोंकी प्रबलता देखकर, एक-प्रकार के ही उपदेश से अद्वैत-तत्त्व का निश्चय कराने में असमर्थ होती हुई शनैः शनैः अनेक-प्रकारसे उपदेश देती हुई अधिकारियोंको ब्रह्मात्मै-क्यबोधके अभिमुख करनेके लिए प्रवृत्त होती है।

अद्वैतके-उपदेशके लिए प्रवृत्त श्रुति, प्रत्यक्षसिद्ध भेद-मात्रका ग्रहण करती है, एतावता भेद सत्य है, भेदके सत्यत्वमें श्रुति प्रमाण है, ऐसा निर्णय कदापि नहीं हो सकता।

और भेद-दर्शनकी निन्दा करनेसे भी श्रुति, भेदका विधान नहीं,कर सकती है।'यदा ह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते, अथ तस्य भयं भवति' (तै० २।७।१) इस श्रुतिमें भेददर्शीको भयकी प्राप्ति कहा है। अतएव वह मोक्षका अधिकारी नहीं हो सकता है, ऐसा श्रुति सूचित करती है।

'इदं सर्वं यदयमात्मा' (बृ० २।४।६) जो यह सर्व-जगत् है, वह सम्पूर्ण आत्मा ही है। 'स वा एष महानज आत्माऽजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्म' (बृ० ४।४।२५) वह श्रुति-प्रतिपाद्य आत्मा महान् है, उत्पत्ति-मरणादि-विकारोंसे रहित है, अमृत-अभय ब्रह्मरूप है। इत्यादि श्रुतियां स्पष्ट ही अभेद का वर्णन करती हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथा पशुः'(बृ० १।४।१०) 'उपास्य (ब्रह्म) अन्य है, और (मैं) उपासक अन्य हूँ' इस प्रकार जो जानता है, वह कुछ भी नहीं जानता, किन्तु पशुकी तरह अज्ञ है।

'मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति' (बृ० ४।४।१६) इस अद्वितीय आत्मामें जो पुरुष नानाकी तरह देखता है, वह भेद-दृष्टिवाला पुरुष मृत्यु से भी मृत्यु को प्राप्त होता है, अर्थात् वह जन्म-मरण के चक्रके भ्रमण से अलग नहीं हो सकता। इत्यादि श्रुतियां भेद-दर्शनकी निन्दा द्वारा उसका अपवाद कर अभेद-का ही पारमार्थिक रूपसे निर्णय करती हैं।

अतएव यह ध्रुव तथ्य निर्णय हो जाता है—कि जहां कहीं श्रुतियोंने भेदका वर्णन किया है—वह लोक-सिद्ध औपाधिक-कल्पित भेद ही समझना चाहिये। और अभेद ही एकमात्र-पारमार्थिक सत्य है। यही श्रौत सिद्धान्त-पक्ष है। अभेदको कल्पित नहीं मान सकते, क्योंकि—अभेद, सिद्धान्तमें ब्रह्मरूप है, उसमें मिथ्यात्वकी प्रसक्ति हो जायगी, इष्टापत्ति नहीं कर सकते हैं, निरधिष्ठान-निःसाक्षिक भेदभ्रम सिद्ध हो जायगा, परिच्छिन्न-वस्तु सत्य एवं अधिष्ठान नहीं हो सकती है, इसलिये ब्रह्मरूप अभेद ही पारमार्थिक है, वही गीता एवं उपनिषदों का प्रतिपाद्य-सिद्धान्त है।

शंका—'अद्वैतं नाम न द्वैतम्। तथा चेदमद्वैतं द्वैताद्भिन्नमभिन्नं वा। उभयथाऽपि द्वैतसिद्धिः। आद्ये द्वैताद्भिन्नं चेत् भिन्नं भेदाश्रयमिति भेदः स्वीकृतः स्यात्। अन्त्ये द्वैतादभिन्नं चेत् यद् द्वैतादभिन्नं तदद्वैतरूपमेवेत्येवं भेदः स्वीकृतो भवतीति।

अर्थात् अद्वैत क्या है? 'न द्वैतमद्वैतम्' तब क्या वह अद्वैत द्वैतसे भिन्न है? या अभिन्न? यदि कहो—अद्वैत, द्वैतसे भिन्न है, तब तो भेदकी सिद्धि होगई, क्योंकि—भिन्नका अर्थ है—भेदाश्रय। अद्वैतं भिन्नं' यानी भेदका आश्रय है, अर्थात् अद्वैतके आश्रयमें भेद

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रहता है। यदि कहो; अद्वैत, द्वैतसे अभिन्न है, तब तो द्वैतसे अभिन्न अद्वैत भी द्वैत रूप हो गया ? इस प्रकार भिन्न-अभिन्न दोनों प्रकारसे द्वैत रूप भेद ही सिद्ध होता है ?

समाधान—यह शंका जात्युत्तर रूपा है, कहा है—

वादिनो नार्थसिद्धिः स्याज्जात्युत्तरसमाश्रयात् ।
मुखं स्यात्पिहितं तेन, केवलं प्रतिवादिनः ॥

जात्युत्तरके ग्रहणसे वादीके स्वार्थकी सिद्धि नहीं होती है, किन्तु केवल विशिष्ट-शास्त्रबलशून्य प्रतिवादीके मुखका पिधान मात्र होता है।

अतएव ऐसी ही शंका द्वैतवादीके प्रति अद्वैतवादी को भी करनी चाहिये,—किं तव सम्मतं द्वैतमद्वैताद्भिन्नमभिन्नं वा ? उभयथापि दोषः । अद्वैताद्भिन्नं चेद्भिन्नं भेदाश्रयमिति स भेदः पुनरद्वैताद्भिन्नोऽभिन्नो वा। तत्रापि भिन्नश्चेदनवस्था। अथ द्वैतमद्वैतादभिन्नं चेत् ? अद्वैतादभिन्नस्याद्वैतरूपत्वादद्वैतं स्वीकृतं स्यादिति।

अर्थात् द्वैतवादी सम्मत द्वैत, क्या अद्वैतसे भिन्न है, या अभिन्न है ? यदि कहो–द्वैत, अद्वैतसे भिन्न है ? तब भिन्नका अर्थ है–भेदाश्रय। उस भिन्नमें स्थित भेद क्या, अद्वैतसे भिन्न है या अभिन्न है ? यदि भिन्न है, तब इस प्रश्न-क्रमसे अनवस्था-दोष प्राप्त हो जाता है। यदि कहो–द्वैत अद्वैतसे अभिन्न है ? तब अद्वैतसे अभिन्न द्वैत भी अद्वैत रूप हो गया, इस प्रकार अद्वैतकी ही सिद्धि हो गई। इसप्रकारकी द्वैतवादियोंकी धूलि-प्रक्षेपरूपा-शङ्काएँ निर्मूल हैं, आपातरमणीय अवश्य हैं, परन्तु विचारकी कसौटी पर कसने पर उनका अप्रामाण्य स्पष्ट समझ में आ जाता है। वस्तुतः अद्वैत-सिद्धान्त श्रुति-स्मृति विद्वदनुभवसे सिद्ध होता हुआ भी स्वतः सिद्ध है, श्रुत्यादि-प्रमाण, उसमें मूढ़बुद्धि-प्रकल्पित-अप्रामाण्यशंकाका निराकरण मात्र करते हैं। अतएव खण्डन खण्डखाद्यकार-श्रीहर्षमिश्राचार्यने कहा है—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धीधना ! बाधनायास्याः तदा प्रज्ञां प्रयच्छथ ।
क्षेप्तुं चिन्तामणिं पाणि–लब्धमब्धौ यदिच्छथ ॥

हे अपनेको बुद्धि-धन संयुक्त कहने एवं कहलाने वालो ! ऊटपटांग-शंकाओंके द्वारा इस परमप्रामाणिक अद्वैत-बुद्धिके बाधनेके लिए तब अपनी प्रज्ञाका जोर लगाना; जब अपने हाथमें प्राप्त अमूल्य दुर्लभ चिन्तामणिको समुद्रमें डालनेके लिए आप इच्छा करें । अर्थात् चिन्तामणिके समान यह अद्वैत-ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ है, इसके ऊपर आक्षेप करना चिन्तामणिका समुद्र-प्रक्षेपके समान अत्यन्त-मूर्खता पूर्ण कार्य है ।

ऋग्वेद-सहितामें भी अद्वैतवादका वर्णन अत्यधिक स्पष्ट है । आप इसका निर्णय नमूनेके तौर पर इस एक मन्त्रकी आलोचना द्वारा करें, जिसमें अद्वैतवाद की सभी प्रक्रियाएँ रूपकालंकार द्वारा समझ सकते हैं । वह प्रसिद्ध मन्त्र यह है—

चत्वारि शृङ्गास्त्रयोऽस्य पादाः, द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति, महोदेवो मर्त्यान् आविवेश ॥*
(ऋ ।३।८।११ ३)

*वेदभाष्यकारोंने इस मन्त्रका प्रणव, एवं यज्ञ परक व्याख्यान किया है, वैयाकरणोंने शब्दपरक । अपनी-अपनी भावनाके अनुसार सिद्धान्ताविरुद्ध विविध व्याख्यानोंके प्रणयनसे इस मन्त्रकी चिन्तामणिके समान विशिष्टता द्योतित होती है । सभी वेद-मन्त्र भगवान्‌की शब्दमयी मूर्तियां हैं । "जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति तिन देखी तैसी," सहृदय पाठकोंके विनोदार्थ-वे व्याख्यान भी संक्षेपसे यहां बतलाते हैं । प्रणवमन्त्रका प्रतिपादन इस प्रकार है । ॐकार मन्त्र एक प्रकारका वृषभ है, सहितोपनिषद् में भी प्रणवको वृषभरूप से कहा है—'यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः' (तै०) स्वानुष्ठानसे या स्वार्थानुसन्धानसे परमानन्दाख्य-मोक्षामृतका वर्षक होनेसे प्रणवकी वृषभ संज्ञा है । अकार, उकार,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मकार एवं अनन्तमात्र (यह अर्धमात्रा का अन्वर्थ नाम है) ये चार प्रणव वृषभके शृङ्ग हैं। विश्व, तैजस एवं प्राज्ञ ये आध्यात्मिक, तथा विराट्, हिरण्यगर्भ एवं अव्याकृत-ईश्वर, ये आधिदैविक, तीन पाद हैं।

पारमार्थिक-चिद्रूपशक्ति तथा मायिक-अनिवर्चनीय-अचिद्रूपशक्ति ये दो शिर हैं। 'भूः भुवः स्वः जनः तपः महः एवं सत्यं' ये सात लोक इसके सप्त हस्त हैं। अकारादि तीनों मात्राओंमें विश्वादि एवं विराटादि तीनों पादोंसे वह बद्ध है। वह महः यानी स्वयं ज्योतिस्वरूप-ब्रह्मतत्त्वका रोरवीति यानी अतिशयसे पुनः-पुनः प्रतिपादन करता है। वह प्रतिपाद्य-देव स्वयं, मर्त्य यानी प्राणियोंके मरण-धर्मयुक्त-देहोंमें आविवेश यानी सर्वतः प्रविष्ट हुआ है। 'स एष इह प्रविष्टः आनखाग्रेभ्यः' यह श्रुति भी इसमें प्रमाण है। यज्ञका व्याख्यान इस प्रकार है-वैदिक-यज्ञ विविध कामनाओंका वर्षक-संपादक होने से वृषभरूप है, उसके ब्रह्मा, उद्गाता, होता एवं अध्वर्यु ये चार ऋत्विक् चार शृङ्ग हैं, अथवा ऋक् साम, यजुः एवं अथर्व ये चार वेद चार शृङ्ग हैं। प्रातः सवन, माध्यंदिन सवन, सायं सवन ये तीन पाद हैं, हविर्धान एवं प्रवर्ग्य ये दोनों या प्रायणीय एवं उदयनीय ये दोनों सिर हैं। सप्त होता ये, या त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, जगती आदि सप्त छन्द ये, यज्ञ रूप वृषभके सात हाथ हैं, यह त्रिधा मन्त्र, ब्राह्मण, एवं कल्प-सूत्रोंसे बद्ध है। यह स्वाभीष्टका सम्पादक होने से महान् देव है, परम मान्य है, वह रोरवीति—बड़े जोरों से अपने अनुष्ठान की सूचना देता है। अतएव यह वेदमन्त्र द्वारा मर्त्यान् आविवेश यानी मनुष्योंके भीतर स्वानुष्ठानमें श्रद्धा-उत्पन्न करनेके लिए प्रविष्ट होता है। शब्दका व्याख्यान इस प्रकार है—नाम, आख्यात, उपसर्ग एवं निपात, ये चार शृङ्ग हैं, प्रथमपुरुष, मध्यमपुरुष एवं उत्तमपुरुष, ये तीन पुरुष या भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान ये तीन काल, तीन पाद हैं। कार्यता एवं व्यङ्ग्यता ये दो शिर हैं। प्रथमादि सात विभक्तियां सात हाथ हैं, त्रिधा एकवचन द्विवचन एवं बहुवचन इन तीनों से बद्ध है। यह वृषभ (गवेन्द्र-सांड) के समान, अन्य-न्यायादि-शास्त्रों के ऊपर प्रथम (प्रधान) पदपर स्थित है। क्योंकि-व्याकरणके बिना न्यायादि-शास्त्रोंमें प्रवेश नहीं हो सकता, अतएव उसका प्राथम्य एवं प्राधान्य है। वह मनुष्योंके प्रति स्व स्वरूपका आविष्कार करता है, यही उसका उनमें प्रवेश है, क्योंकि-शास्त्रोंके मनुष्य ही अधिकारी हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस मन्त्रमें रूपक द्वारा अद्वैत-आत्मज्ञानका मनोहर विशद वर्णन किया गया है। अद्वैत ब्रह्मबोध एक प्रकारका बलिवर्द है। इसको परम-इष्टतम मोक्षामृतका वर्षक होने से 'वृषभ' कहते हैं। वह देवेन्द्र, कुबेरादि देवाधिपतियों की दृष्टिमें भी पूज्यतम (मान्यतम) होनेसे महो-देवः यानी महान् देव है, वह त्रिधा बद्धो यानी गीता उपनिषत् और ब्रह्मसूत्ररूप वेदान्त प्रस्थान-त्रयीमें निबद्ध है, अथवा सद्भाव चिद्-भाव तथा आनन्दभाव लक्षण भावत्रयीसे सम्बद्ध होनेके कारण त्रिधा बद्ध है। विवेक, वैराग्य शमादिषट्-सम्पत्ति और मुमुक्षुता जो आत्मज्ञानके बहिरङ्ग चतुष्टय साधन हैं, वे ही आत्म-बोधरूप वृषभके सर्व-स्पृहणीय नितान्त-कमनीय सर्वोन्नत चार शृङ्ग हैं। अथवा ऋग्वेद-का 'प्रज्ञानं ब्रह्म' यजुर्वेद का 'अहंब्रह्मास्मि' सामवेदका 'तत्त्वमसि' एवं अथर्ववेदका 'अयमात्माब्रह्म' इन चारों महावाक्यों का भी उक्त (आत्म-बोध) बलिवर्दके चतुष्टय-शृङ्गरूपसे वर्णन है। "पद्यते गम्यते ब्रह्म एभिः' प्राप्त होता है ब्रह्म जिनसे वे पाद कहलाते हैं, ब्रह्मबोध की प्राप्तिके प्रधा-नतम साधन श्रवण, मनन, निदिध्यासन ये तीनों ही आत्मज्ञान-वृषभ के तीन पाद हैं, जीवन्मुक्ति एवं विदेहमुक्ति इसके दो उत्तमाङ्ग-मस्तक हैं। चिदाभासकी 'अविद्या, आवरण, विक्षेप, परोक्षज्ञान, अपरोक्षज्ञान, शोकापगम, और निरंकुशतृप्ति ये सात अवस्थाएं ही आत्मबोधवृषभके सात हस्त हैं। वह ब्रह्मवत्ताके द्वारा रोरवीति यानी पुनः पुनः 'धन्योऽहं, कृतकृत्योऽहं, अहो मे पुण्यं, अहो शास्त्रं, अहो गुरुः।" इत्यादि हर्ष सूचक शब्द बोलता है।

पञ्चदशीके तृप्ति-दीपमें श्री विद्यारण्य-स्वामीने पूर्वोक्त सप्त अव-स्थाओंका दशम-पुरुषके वर्णन द्वारा अतिविशद निरूपण किया है।

उपनिषत् और गीतामें जैसा मोक्षका स्वरूप निरूपण किया है, वह अद्वैत-सिद्धान्तमें ही घटता है, अन्य द्वैत-वादियोंके मतमें किसी भी प्रकार से घटता नहीं है, वे लोग उपनिषत् एवं गीताके अनुसार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मोक्षका स्वरूप मान हीं नहीं सकते हैं, मानने पर उनको जबरदस्तीसे अद्वैत सिद्धान्त मानना पड़ता है, अपने मतवादसे च्युत होना पड़ता है। कोई द्वैत-वादी विष्णु-कैंकर्य प्राप्ति को मोक्ष मानता है, तो कोई गोपी-भाव प्राप्ति को मोक्ष मानता है; इत्यादि, परन्तु गीता एवं उपनिषदोंमें इस प्रकारके मोक्षकी गन्ध तक भी नहीं मिलती है, यह स्वतन्त्र-प्रतिभायुक्त निष्पक्षपात–विद्वान् जो सदा उपनिषत् एवं गीता का आलोचन करते हैं– वे स्पष्टतः जानते हैं। देखिये–उपनिषत् स्पष्ट अक्षरों में 'ब्रह्मभाव प्राप्ति (ब्रह्मस्वरूप होने) ही को मोक्ष का स्वरूप बतलाती है।

'स वा एष महानज आत्माऽजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्माभयं वै ब्रह्माभयं हि वै ब्रह्म भवति य एवं वेद (बृ० उ० ३ ४ २५)

वह महान् आत्मा जन्मरहित, जरारहित, मृत्युरहित, अमृत, अभयरूप है, वह अभय ब्रह्मरूप है, जो इस प्रकार जानता है, वह अभय ब्रह्मरूप होता है।

अथाकामयमानो योऽकामो निष्काम आप्तकाम आत्मकामो न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति, ब्रह्मैव सन्ब्रह्माप्येति। तदेष श्लोको भवति यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते, कामा येऽस्य हृदि श्रिताः। अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुत इति।

मुक्त-पुरुषका लक्षण श्रुति कहती है–मुक्त कौन है ? जो किसी भी वस्तु की कामना नहीं करता है, अतएव वह अकाम एवं निष्काम है, जिसकी दृष्टि में द्वितीय-वस्तुका नितान्त अभाव हो गया है, इसलिये वह आप्तकाम (पूर्णकाम) एवं आत्मकाम है इसलिये उसके प्राणोंका उत्क्रमण नहीं होता, वह ब्रह्म हुआ ही अज्ञान-निरास द्वारा ब्रह्ममें लीन हो जाता है, ब्राह्मणोक्त इस अर्थमें मन्त्र-श्लोक भी प्रमाण है। जब हृदयस्थित सभी कामनाएं अद्वैतात्मज्ञानके प्रभावसे छिन्नभिन्न हो जाती हैं, तब वह मर्त्य अमृत हो जाता है, और इस जीवितावस्थामें ही ब्रह्मस्वरूप हो जाता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सलिल एको द्रष्टाऽद्वैतो भवत्येष ब्रह्मलोकः सम्राडिति हैनमनुशसास याज्ञवल्क्य एषाऽस्य परमा गतिः, एषाऽस्य परमा सम्पत्, एषोऽस्य परमो लोकः, एषोऽस्य परम आनन्दः। (बृ० ४।३।३२)

जो सलिल-जलके समान अत्यन्त शुद्ध-स्वच्छ मायामल रहित है, एक अद्वैत, अविपरिलुप्त,स्वस्वरूप आत्मज्योतिःरूप, दृष्टिका द्रष्टा ब्रह्म है, वही मुक्त पुरुष हो जाता है, यही ब्रह्मरूप लोक है, हे सम्राट् जनक ! यही इसकी परम गति है, यही इसकी परम सम्पत्ति है, यही इसका परम लोक है, यही इसका परम आनन्द है, इस प्रकार याज्ञवल्क्य महर्षिने राजा जनकको उपदेश दिया।

यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते, अथ सोऽभयं गतो भवति । यदा ह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते, अथ तस्य भयं भवति। (तै० उ० २।७)

जब मुमुक्षुको अद्वैत-ब्रह्मात्मतत्त्वका अपरोक्ष साक्षात्कार होता है, तब वह इस दृश्य-द्वैत-प्रपञ्च शून्य, स्थूल-सूक्ष्मादि-शरीर शून्य, शक्ति-वृत्तिकी विषयतासे विवर्जित, निःशेषके लयका स्थान रूप कल्पित मायासे रहित परब्रह्म आत्मामें अभेदात्मिका अभय प्रतिष्ठा प्राप्त करता है, वह स्वयं अभय ब्रह्म हो जाता है। जिस समय वह अज्ञान-प्रयुक्त दुराग्रहके वश होकर उस अद्वैत ब्रह्ममें अल्प भी सेव्य-सेवकादि-भाव प्रयुक्त-भेद-बुद्धि करता है (उत्=अपि, अरं=अल्पं, अन्तरं=भेदः) तब वह भयको प्राप्त होता है, अर्थात् वह संसार-भयसे मुक्त नहीं हो सकता है।

इस प्रकार उपनिषदोंके आलोचनसे मोक्षका स्वरूप जो अवगत होता है, वह अद्वैत-सिद्धान्तमें ही समन्वित हो जाता है। अब गीताके कुछ श्लोकोंकी आलोचना द्वारा देखिये; भगवान् श्रीकृष्ण मुक्त एवं मोक्षका क्या स्वरूप बतलाते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ ! नैनां प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि, ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥ (गी० २।७२)

तत्त्वदर्शी महात्माकी वह ज्ञान-निष्ठा ब्राह्मी स्थिति रूपा है, ब्राह्मी यानी 'ब्रह्मणिभवा' ब्रह्ममें होने वाली स्थिति अर्थात् ब्रह्मातिरिक्त द्वितीय वस्तुका अत्यन्ताभाव हो जाने से उस महात्माका केवल ब्रह्म-रूपसे ही अवस्थान हो रहा है । हे पार्थ ! इस स्थितिको प्राप्त कर मनुष्य फिर मोहको प्राप्त नहीं हो सकता । अन्तिम-समयमें भी जो मानव, उपर्युक्त ब्राह्मी स्थितिमें स्थित होकर ब्रह्मनिर्वाण यानी ब्रह्ममें लीनतारूप मोक्षको प्राप्त करता है, फिर जो ब्रह्मचर्याश्रमसे ही संन्यास ग्रहण करके जीवन पर्यन्त ब्रह्ममें स्थित रहता है, वह ब्रह्मनिर्वाणको प्राप्त होता है, इसमें तो कहना ही क्या है ? ।

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामः तथाऽन्तर्ज्योतिरेव यः ।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं, ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥ (गी० ५।२४)

जिसे अन्तरात्मामें ही सुख है जिसे अन्तरात्मामें ही आराम-रमण है और अन्तरात्मा ही जिसका स्वयं ज्योतिःप्रकाश है, वह योगी है, वह यहां जीवितावस्थामें ही ब्रह्मरूप हुआ; ब्रह्मनिर्वाणरूप मोक्षको प्राप्त हो जाता है ।

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहितेरताः ॥ (गी० ५।२५)

जिनके अविद्यादि-दोष-कल्मष नष्ट हो गये हैं, जिनके प्रमेय-प्रमाणादिगोचर सब संशय क्षीण हो गये हैं जो जितेन्द्रिय हैं, जो सब भूतोंके हित-कल्याण उपदेशमें रत हैं ऐसे ऋषि-जन-सम्यक् ज्ञानी सन्यासी ब्रह्म-निर्वाणरूप मोक्षको प्राप्त होते हैं ।

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् ।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं, वर्तते विदितात्मनाम् ॥ (गी० ५।२६)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो काम एवं क्रोधसे नितान्त रहित हो चुके हैं, जिन्होंने चित्त को अपने वशमें कर लिया है, आत्माको यथार्थरूपसे जान लिया है, ऐसे आत्मज्ञानी तत्त्वदर्शी यति-संन्यासियोंको सब ओरसे अर्थात् शरीरके जीवित रहते हुए, और मरनेके पश्चात् भी सभी अवस्थाओंमें सदा. सर्वत्र, सर्वथा ब्रह्मनिर्वाणरूप मोक्ष प्राप्त हुआ रहता है।

इन श्लोकोंके आलोचनसे गीता प्रतिपाद्य मोक्ष ब्रह्मनिर्वाण ही है, ऐसा सुदृढ़ निश्चय होता है ब्रह्मनिर्वाणका अर्थ है ब्रह्मविलय—जैसे जलमें जल मिल जाता है, फिर किसी भी प्रकारसे जलसे जलका भेद-भाव नहीं रहता। उसीप्रकार मुक्त-पुरुष ब्रह्ममें अभेदरूपसे लीन हो जाता है, पश्चात् भेदकी गन्ध भी नहीं रहती। कठ-श्रुतिने भी जल दृष्टान्त द्वारा मोक्षस्वरूपका निदेश किया है–

यथोदकं शुद्धे शुद्धमासिक्तं तादृगेव भवति ।
एवं मुनेर्विजानत आत्मा भवति गौतम ! ॥ (कठ० ४।१४)

हे गौतम=नचिकेत ! जैसे शुद्ध-जलमें मिला हुआ शुद्ध जल तद्रूप हो जाता है, वैसे ही आत्म-तत्त्वके ज्ञाता मुनिका शुद्ध-आत्मा भी शुद्ध-परमात्मामें मिलकर तद्रूप-अभिन्न हो जाता है।

'निर्वाण' शब्दके अनेक बार निर्देशसे भगवान्‌ने मोक्षमें शरीर-इन्द्रियादि सम्बन्धके अभावका प्रतिपादन किया है। क्योंकि-'वाण' का 'वाति गच्छति-चलति इति वाणं' इस व्युत्पत्तिके अनुसार गमन-धर्मक चलायमान-देहेन्द्रियादि-संघात अर्थ होता है। इसलिये मोक्षमें किसी भी प्रकारसे दिव्यादिव्य-शरीरादिका सम्बन्ध हो ही नहीं सकता। अशरीर-अविनाशी-ब्रह्मरूप हो जाता है।

अतएव द्वैतवादी जो यह कहते हैं; कि—मोक्षमें द्वैत रहता है, सेव्य-सेवक, उपास्य-उपासक आदिका भेद-भाव रहता है, दिव्य शरीर-इन्द्रियादि भी रहती हैं, उस समय सर्वोत्तम श्रीनारायण विष्णु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का सामीप्य लाभ बना रहता है, विष्णुकी सेवाका महान् आनन्द मिलता है, इत्यादि ।

यह एक प्रकारका दिव्य-भोगविशेष है, विशिष्ट-लोकान्तरकी प्राप्ति मात्र है, उपनिषत् एवं गीतोक्त-मोक्षका पूर्वोक्त स्वरूप वह किसी भी प्रकारसे नहीं हो सकता। उसमें मोक्ष शब्द ही क्यों प्रवृत्त होगा ? मोक्षका अर्थ है—समस्त-बन्धनोंसे छूट जाना । किसी भी प्रकारके पारतन्त्र्यादिरूप-बन्धनका जिसमें लेशभी भान न हो, वह मोक्ष कहलाता है और द्वैतवादियोंके इस कल्पित-मोक्षमें आशा प्रयुक्त दुःख तो अवश्य ही रहता है क्योंकि—अपनेसे उत्कृष्ट-आनन्द-ऐश्वर्य विषयणी स्वाभाविक-इच्छा हो ही जाती है । कहा है—

आशैव दुःखमूलं स्यादाशैव मनसो मलः ।
आशैव चान्तरः शत्रुराशा सुखविघातिनी ॥
स्वस्मादुत्कृष्टमालोच्य, जायते चेतनावतः ।
न कस्य तत्पदप्रेप्सा, यो न मूर्खो न वा पशुः ॥
एवं विष्णुपदप्रेप्सा, दुर्वारा द्वैतिनां मते ।
मुक्तानामपि तन्मोक्ष-स्वरूपं वद कीदृशम् ? ॥

किसी भी प्रकारकी आशा हो, दुःखका ही कारण है, आशा ही मानसिक-उपद्रव है, आशा ही आन्तरिक शत्रु है, और आशा ही सुख-ध्वंस-कारिणी है। अपनेसे उत्कृष्टको देखकर किस चेतन-प्राणी को—जो न मूर्ख है या न पशु है—उस उत्कृष्ट-पद-प्राप्तिकी इच्छा न होगी। इस प्रकार सर्वोत्तम विष्णु-पद प्राप्तिकी इच्छा विष्णु-किंकरोंको अवश्य ही हो जाती है, इसलिये द्वैतवादियोंके मतमें—जो विष्णु-कैंकर्यको मोक्ष, एवं विष्णु-किंकरोंको मुक्त मानते हैं, ऐसे मुक्तोंको आशा प्रयुक्त दुःख दुर्वार सतत होता रहेगा, अब कहिये कि—उनके मतमें गीताद्युक्त मोक्षका स्वरूप यथार्थतः कैसे घट सकता है ?।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'ज्ञात्वा देवं मुच्यते' (श्वे० उ०) 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं' ......मृत्युमत्येति'। 'ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते' (गी०) इत्यादि उपनिषत्-गीताके वचनों से यह स्पष्ट निश्चित होता है, कि-परमात्माके ज्ञानसे जीवगत अविद्यादि बन्धनोंकी निवृत्ति (मुक्ति) होती है। यदि जीव, परमात्मासे अन्य है, तब तो अन्यके ज्ञानसे अन्यनिष्ठ बन्धनकी (भ्रमकी) निवृत्ति कैसे हो सकती है ? नहीं हो सकती, और ब्रह्मज्ञानसे जीवगत अनर्थ-भ्रमकी निवृत्तिरूप फलका बोधन शास्त्रने अनेकबार किया है, इसलिये इन पूर्वोक्त-शास्त्र-वाक्योंके आलोचनसे जीव-ब्रह्मका अभेद सूचक यह अनुमान भी प्रकट होता है—

जीवो ब्रह्माभिन्नः ब्रह्मज्ञाननिवर्त्यानर्थ-भ्रमाख्याध्यासाश्रयत्वात्, यो यज्ज्ञाननिवर्त्याध्यासाश्रयः स तदभिन्नः, यथा शुक्त्यभिन्न इदमंशः।'

अर्थात् जीव ब्रह्मसे अभिन्न है, ब्रह्मज्ञानसे निवर्त्य—अनर्थ भ्रमरूप अध्यासका आश्रय होनेसे, जो जिसके ज्ञानसे निवर्त्य अध्यासका आश्रय होता है, वह उससे अभिन्न ही होता है, जैसे शुक्तिके ज्ञानसे निवर्त्य रजतरूप अध्यासका आश्रय इदमंश शुक्तिसे अभिन्न है, वैसे ब्रह्मज्ञाननिवर्त्य अनर्थ-भ्रमरूप—अहंकारादि-अध्यासका आश्रय जीव ब्रह्मसे अभिन्न ही हो सकता है। यदि जीव ब्रह्मसे अभिन्न न हो तो ब्रह्मज्ञानसे जीवगत-अनर्थ भ्रमकी कदापि निवृत्ति नहीं हो सकती इस लिये शास्त्रद्वारा ब्रह्मज्ञानसे जीवगत अनर्थ की निवृत्तिका प्रतिपादन होनेसे जीव ब्रह्म से अभिन्न है, ऐसा श्रुतिस्मृत्यनुसारी अनुमान प्रमाण से भी सिद्ध होता है।

इस प्रकार गीता एवं उपनिषदोंके पूर्वोक्त वास्तविक युक्तियुक्त अद्वैत सिद्धान्तको न जान कर, किसी एक ऊटपटांग मतका आश्रय ग्रहण कर मनुष्य कल्याणसे भ्रष्ट होता है, तथा अनर्थ को प्राप्त होता है। अतः आचार्य श्रीशंकर-भगवत्पादने भी यही कहा है—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'तत्राविचार्य यत्किञ्चित्प्रतिपद्यमानो निःश्रेयसात्प्रतिहन्येतानर्थञ्चेयात् ।' (शा० भा०)

स्मृतिकारने भी ऐसा कहा है—

योऽन्यथा सन्तमात्मानमन्यथा प्रतिपद्यते ।
किन्न तेन कृतं पापं चौरेणात्मापहारिणा ॥

जो मनुष्य कर्तृत्वभोक्तृत्वादि-सांसारिक-धर्मशून्य, सच्चिद्रूप-आनन्दनिधि—ब्रह्मस्वरूप आत्माको कर्ता, भोक्ता, दुःखी, संसारी, ब्रह्म-भिन्न जानता है, वह विपरीतदर्शी मनुष्य आत्मघाती है, चोर है। उसने कौन-सा पाप नहीं किया ? अपितु सभी पाप कर लिये ।

समग्र विश्वका निमित्तकारण और उपादानकारण एक ही है। 'तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेय' (छां० ६।२।३) उस सबल (मायावी) ब्रह्मने इच्छा की, यानी इस प्रकार विचार किया कि—'मैं एक बहुत हो जाऊं' अर्थात् विभिन्न-नाम रूपों से अभिव्यक्त हो जाऊं।

'यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च...... तथाऽक्षरात्सम्भवतीह विश्वम्' (मु० उ० १।१।७)

जिस प्रकार मकड़ा अपने शरीरसे जालकी रचना करती है, और फिर उसको अपनेमें समेट लेती है, उसी प्रकार अक्षर ब्रह्म पुरुषसे विश्वकी सृष्टि होती है, और उसीमें फिर इसका लय हो जाता है।

'प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ।' (गी० ६।१८)

उत्पत्ति, प्रलय, स्थिति, प्रलयाधिष्ठान, उत्पत्ति-स्थान, स्थिति-अधिष्ठान सब कुछ मैं अविनाशी परमात्मा ही हूँ।

उपादान-कारण दो प्रकार का है, विवर्त और परिणामी। वास्तविक-परिवर्तनके बिना अवास्तविक-परिवर्तनके आभासका कारण विवर्त कहाता है। वास्तविक-परिवर्तन (रूपान्तर) का कारण परिणामी उपादान कारण है। जैसे भ्रान्ति से रज्जु सर्परूपसे प्रतीत होती है,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निरूप-निराकार-आकाश दूरस्थत्वादिदोषसे विविध-नीलादि-रूपसे तथा विविध कटाहाकारादि से प्रतीत होता है। दृष्टान्तमें रज्जु, सर्पका एवं आकाश, विविधरूपाकारका विवर्तोपादान-कारण है, तथा अज्ञानादि परिणामी उपादान-कारण है। रज्जु का सर्पवत् भासना, तथा निरूप-निराकार-आकाश का रूपवत् आकारवत् भासना केवल अज्ञान का ही परिणाम या रूपान्तर कहा जाता है। उस प्रकार ब्रह्म-अधिष्ठान विश्वका विवर्तोपादानकारण है तथा ब्रह्माश्रित-अनिर्वचनीय माया विश्वका परिणामी उपादान कारण है।

इस लिये सम्पूर्ण विश्व तत्वतः ब्रह्म ही है। 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' (छां० उ०) यह समग्र विश्व ब्रह्म ही है। 'अधश्चोर्ध्वञ्च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्। (मु० २।२।११) नीचे और ऊपर सबकुछ ब्रह्मसे व्याप्त है विशेष क्या कहें ? यह समूचा विश्व ही परब्रह्म है, 'वासुदेवः सर्वमिति' (गी०) सब कुछ वासुदेव ही है।

यहां यह प्रश्न हो सकता है कि-यदि विश्व ब्रह्मस्वरूप है और ब्रह्म सत्य एवं अविनाशी है, तब ब्रह्माभिन्न विश्व भी सत्य एवं अविनाशी होना चाहिये परन्तु सिद्धान्तमें विश्व असत्य मिथ्या एवं क्षणभङ्गुर माना गया है। इसका समाधान यह है. विश्व ब्रह्म है, इसमें मुख्य सामानाधिकरण्य नहीं है, किन्तु बाध-सामानाधिकरण्य है। जैसे 'प्रथम-प्रतीत जो सर्प था—वह रज्जु है' इस दृष्टान्तमें मिथ्या सर्पका बाधकर केवल रज्जुका ग्रहण होता है। क्योंकि-जिसको प्रथम सर्प कहा जाता था। वह वास्तविक सर्प नहीं था, किन्तु रज्जु थी। उस प्रकार 'यह समग्र विश्व ब्रह्म हैं' इस कथनका तात्पर्य है—दृश्य-नामरूपात्मक दृष्टिसे प्रतीत विश्व नहीं है, किन्तु ब्रह्म ही है अतएव दृश्य-मिथ्या विश्वका बाधकर केवल अस्ति, भाति प्रियरूपसे भासमान सर्वानुगत—अधिष्ठान ब्रह्मका ही ग्रहण करो, यही बाधसामानाधिकरण्य है, इसलिये नामरूपात्मक-विश्वमें सत्यत्व एवं अविनाशित्वकी आपत्ति नहीं हो सकती।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवान् श्रीकृष्णने भी गीतामें उपनिषदोंका यही गोप्यसिद्धान्त अपने प्रियसखा, भक्त, शिष्य अर्जुनके प्रति कहा था—

'अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।' (२।१७)

उस सत् ब्रह्मको ही विनाश-रहित समझो. वही इस विश्व प्रपञ्चको आत्मरूपसे व्याप्त करके सर्वदा विद्यमान रहता है।

आत्मा-ब्रह्म ही सबका मूल उपादन कारण है, सब भेद अविद्या से उसमें कल्पित हैं, कोई भी वस्तु उससे पृथक् नहीं' यह अद्वैत-ब्रह्मात्म-तत्त्वज्ञान ही जीवको अमृतत्व मोक्षका प्रापक है इससे ही जीवके सकल दुःखोंके मूलकारण अज्ञानका विध्वंस होता है। जो इस अद्वैतात्मविज्ञान को प्राप्त नहीं करता, उसके दुःख, अशान्ति, स्पृहा एवं शोकका अन्त नहीं हो सकता। श्रुति-भगवती यही कहती है—

इहैव सन्तोऽथ विद्मस्तद्वयं, न चेदवेदीर्महती विनष्टिः।
ये तद्विदुरमृतास्ते भवन्ति, अथेतरे दुःखमेवापियन्ति ॥

(बृ० उ० ७।४।१४)

इस उपनिषत्-गीता-प्रतिपाद्य-अद्वैतात्मतत्त्वकी अनुभूति, मनुष्य की व्यावहारिक या पारमार्थिक सभी प्रकारकी समुन्नतिके सर्वथा अनुकूल है, प्रतिकूल तो है ही नहीं। पूर्वजन्मके अनन्त-पुण्योंके उदय हुए बिना तथा ईश्वर-प्रसाद, और अन्तःकरण-शुद्धि आदिके बिना इस अद्वैत-सिद्धान्तके प्रति मनुष्यकी आस्था या अटूट श्रद्धा नहीं हो सकती है। अतएव शास्त्रमें कहा है—

ईश्वरानुग्रहादेषा पुंसामद्वैतवासना।
महाभयकृतत्राणा, द्वित्राणामुपजायते ॥

सकल-भय-विध्वंसिनी अद्वैत-भावना, ईश्वरके परमानुग्रहसे ही दो या तीन भाग्यशाली-पुण्यशाली शुद्धान्तःकरण-महापुरुषोंको ही प्राप्त होती है। अर्थात् अद्वैत-भावना सभीके लिए सुलभ नहीं है, महादुर्लभ है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसप्रकार पूज्य-श्रीमण्डलेश्वर-महाराजने गीता एवं उपनिषदोंके प्रतिपाद्य अद्वैतसिद्धान्तका प्रवचन किया। प्रसन्नता एवं धन्यवाद-सूचक चिन्होंसे यह मालूम हुआ कि-स्थानीय-विद्वानोंको तथा साधारण-जनताको भी यह प्रवचन बड़ा रुचिकर तथा हृदयंगम हुआ है। विशेष समय व्यतीत होनेके कारण मण्डलीके सभी महात्माओंने 'ॐ नमः पार्वतीपतये' की जय-ध्वनिके साथ निवास-स्थानकी तरफ पूज्य श्रीमण्डलेश्वर महाराजके सहित प्रस्थान किया।

त्रिचिनापल्ली।

'श्रीरङ्गम्' एवं 'जम्बूकेश्वर' के दर्शनकर सब महात्मा मोटर द्वारा त्रिचिनापल्ली गये। जम्बूकेश्वरसे त्रिचिनापल्ली करीब २॥ मील दूर है, बड़ा अच्छा शहर है। त्रिचिनापल्ली शहर ही में 'मातृभूतेश्वर-महादेव' तथा श्रीगणेशजीका पहाड़के ऊपर मनोरम-मंदिर है। मंदिरमें जानेके लिये नीचेसे ही पत्थरोंकी सैंकड़ों सीढ़ियां बनी हुई हैं प्रथम गणेशजीका दर्शन किया जाता है, पश्चात् महादेवजीका। सबसे उच्च शिखर पर श्रीगणेशजी विराजमान हैं। वहांसे दूर दूरका अच्छा सुन्दर दृश्य देखनेमें आता है। त्रिचिनापल्लीका समग्र शहर, जम्बूकेश्वर, श्रीरङ्गम् आदि अनेक स्थान तथा टेढी-मेढी कावेरी गंगा आदि स्पष्ट दिखाई देते हैं। इस अद्भुत-स्थानका दर्शनकर पूज्य मण्डलेश्वर महाराज सहित सभी महात्मा बड़े प्रसन्न हुए। वहां श्रीगणेशजीका पूजन-नमस्कार, स्तुति आदि करके महिम्नस्तोत्रका पाठ किया, तथा शिव-नामावलीका बड़े प्रेमसे गान किया। उस समय किसी महात्माने स्वामीजी महाराजसे प्रश्न किया कि—

श्रीगणेशजीको आपने लोग शिव-पुत्र रूपसे मानते हैं, या पर-ब्रह्म रूपसे ?

स्वामीजी—जैसे भगवान् श्रीरामको दशरथ-पुत्र मानते हुए भी परब्रह्म रूपसे मानते हैं, वैसे ही श्रीगणेशजीको शिव-पुत्र मानते हुए भी परब्रह्म रूपसे मानते हैं। परब्रह्म-परमात्माके अनन्त दिव्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लीला विग्रह हैं। उपनिषदोंमें गणपत्युपनिषत् भी है। उसमें श्रीगणेश-जी का परब्रह्मरूपसे इस प्रकार बड़ा अच्छा वर्णन है—

हरिः ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वं सच्चिदानन्दोऽद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं विज्ञानमयोऽसि। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। त्वत्तस्तिष्ठति। त्वयि लयमेष्यति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म, भूर्भुवः सुवरोम्। ॐ नमो व्रातपतये, नमो गणपतये, नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदराय, एकदन्ताय, विघ्नविनाशिने शिवसुताय, श्रीवरदमूर्तये नमो नमः।

इसप्रकार अष्टादश पुराणोंमें श्रीगणेशजीके महत्त्वका बोधक एक स्वतन्त्र गणेश-पुराण भी है। जिसमें श्रीगणेशजीके दिव्यचरित्रों का वर्णन है। दक्षिण-भारतमें तथा महाराष्ट्रमें गणेशजीका उत्सव बड़े जोरोंसे मनाया जाता है। सभी कार्योंमें श्रीगणेशका आदिमें पूजन किया जाता है। खास ऋग्वेद-संहितामें भी श्रीगणेशका परब्रह्म रूपसे वर्णन मिलता है—

ॐगणानां त्वा गणपतिं हवामहे, इत्यादि से।

इसलिये अपने लोग श्रीगणेशजीको सर्व-देवमय परब्रह्मरूप समझ कर नमस्कारादि करते हैं।

प्रश्न—श्रीगणेशकी लम्बोदर, एकदन्त, गजमुख, मुषिकवाहन आदि आकृतिके दर्शनसे क्या कुछ कल्याण-कारिणी आध्यात्मिक-शिक्षा भी मिल सकती है?

उत्तर—क्यों नहीं? भगवान्‌के सभी लीला-विग्रहों से, तथा अवतार-चरित्रोंसे कुछ न कुछ आध्यात्मिक-शिक्षण-मिलता ही है? परन्तु यह शिक्षण सूक्ष्म विचार गम्य है।

प्रश्न—भगवन्! आचार्यप्रवर! कृपया इस श्रीगणेशके विलक्षण-विग्रहका कुछ आध्यात्मिक-रहस्य समझाइये।

उत्तर—बहुत अच्छा। सुनिये, सावधान होइये। प्रथम यह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीगणेशके मंगल-ध्यानका श्लोक पढिये—

खर्वं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं,
प्रस्यन्दन्मदगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम्।
दन्ताघातविदारितारिरुधिरैः सिन्दूरशोभाकरं,
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कर्मसु ॥

जिनका विग्रह खर्व यानी वामन (नाटा) है, शरीर स्थूल है, मुख गजेन्द्र का है, उदर विशाल है, जो सुन्दर हैं, जिनके गण्ड-स्थलसे मदधारा प्रवाहित हो रही है, और भ्रमरगण गन्धलोभसे चञ्चल होकर गण्डस्थलमें एकत्रित हो रहे हैं, जिन्होंने अपने दन्तके आघातसे राक्षस-शत्रुओंको विदीर्ण करके उनके रुधिरसे सिन्दूरकी लाल शोभाको धारण किया है, और जो समस्त कर्मोंमें सिद्धि प्रदान करते हैं, ऐसे श्रीपार्वती-पुत्र श्रीगणेशजीको नमस्कार है।

श्रीगणेशजी सात्त्विक-निर्मल सुबुद्धिके अधिष्ठातृ-देवता हैं। इसमें 'बुद्धिर्गणेशः' 'गणानां=इन्द्रियगणानामीशः=नायकः गणेशः' इत्यादि शास्त्रवचन भी प्रमाण हैं। सुबुद्धिके द्वारा मायामय-द्वैतप्रपञ्च के विस्तारका खर्व यानी ह्रास होकर (नामरूपका अत्यन्ताभाव होकर) अस्ति-भाति प्रियरूपसे समस्तविश्व अद्वितीय-ब्रह्मभावमें तल्लीन हो जाता है, इसलिये गणेशजी खर्वकाय हैं। सुबुद्धि भीतरसे पुष्ट तथा सारसे युक्त होती है, अतएव श्रीगणेश स्थूल-तनु हैं। जिस प्रकृति के अधिष्ठाता गणपति देव हैं, उसी प्रकृतिसे समभावापन्न-पाशविक प्रकृति-बुद्धिराजमें हस्ती की है। इसलिये समस्त-पशुओंमें हस्तिकी बुद्धि तीक्ष्णतम है। इस प्रकार प्रकृतिकी समता-एकता होनेके कारण ही बुद्धिराज्यके अधिष्ठाता श्रीगणेश गजेन्द्र-वदन हैं यानी स्कंधपर हस्तीका मुख है। श्रीगणेशजीके गजमुखमें एक ही दन्त है, इसका रहस्य यह है कि—गणेशजी सुबुद्धिके देवता हैं कुबुद्धिके नहीं, क्योंकि-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुबुद्धि (भ्रान्तिज्ञान) चित्तवृत्तिको एकतासे हटाकर अनेकताकी ओर प्रवाहित करती है, और सुबुद्धि (यथार्थ-ज्ञान) सर्वदा अनेकतासे हटाकर एकता-समता-अद्वितीयताकी ओर ही जीवको अग्रसर करती है। अतः इस अद्वैत-भावके प्रेरक गणपति 'एकरदेश्वर' कहलाते हैं।

'एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दन्ती प्रचोदयात्'

(तै० आ० गणेशगायत्री)

श्रीगणेशजीका लम्बोदर, सुबुद्धिकी अद्वैत-भावमयी गम्भीरता का सूचक है, इस प्रकार गजेन्द्रवदनका मदस्राव सुबुद्धिसे प्रादुर्भूत अद्वैतज्ञानामृत हैं। जिसका पान करनेके लिये मुमुक्षु-मधुकर सदा ही व्यग्र रहते हैं। दन्तके आघातसे समस्त शत्रुओंके मारनेका यह तात्पर्य है—सुबुद्धिके शत्रु हैं—मायाकी तामसिक-राजसिक-प्रपञ्चपरिणामिनी कुबुद्धिकी कुत्सित-वृत्तियां। सुबुद्धिके अधिष्ठाता गणेश इन कुत्सित-वृत्तियोंका समूल नाशकर देते हैं। इसलिये इन कुत्सित-वृत्तियोंके नाशसे सुबुद्धिकी शोभा अत्यन्त वृद्धिको प्राप्त होती है। शैलसुता जगज्जननी महामाया आद्या प्रकृति है। उनके सात्त्विक-विद्याभाव से सुबुद्धिकी उत्पति होती है, इसलिये श्रीगणेश शैलसुतासुत हैं। सुबुद्धिकी सहायतासे सकल-कार्योंमें सिद्धि-प्राप्त होती है, इसलिये श्रीगणेश सिद्धिदाता हैं। श्री गणेश का वाहन मूषक है। इसका यह रहस्य है—

यहाँ मूषक कुतर्क रूप है, क्योंकि-मूषकका तथा कुतर्कीका समान स्वभाव है। जैसे किसी भी वस्तुका मूल्य तथा आवश्यकता न समझकर सभी को काट देना मूषक का स्वभाव है, वैसे ही किसी विज्ञान के रहस्यको तथा शास्त्रके गम्भीर तात्पर्यको न समझकर ऊटपटांग-कथन से खण्डन करदेना कुतर्कीका स्वभाव है। विवेक-विचारवती सुबुद्धि कुतर्कोंको दबा देती है, उनको प्रबल नहीं होने देती। इसलिये कुतर्क-रूपी मूषकको सुबुद्धिके देवता गणपतिजीने वाहनरूपसे दबा रक्खा है। गणेशजीका शरीर विशाल एवं पुष्ट है, तथा मूषक-वाहनका शरीर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को मैं चाहता था, वह अनायास ही प्राप्त हो गई।

मोहिनी—मैं उस पुरुषके ऊपर तब प्रसन्न होती हूँ, जब वह पुरुष मेरे सामने ताण्डव नृत्य करे। वह बूढ़ा बाबा भी ऐसा ही नृत्य करता था।

दैत्य—ताण्डव नृत्य करने के लिये तैयार हूं, परन्तु वह किस प्रकार होता है, वह मैं नहीं जानता हूँ।

मोहिनीने उस नृत्य का अभिनय बतलाते हुए कहा-एक हाथको टेढ़ाकर कमर में रक्खो और दूसरा मस्तक पर रक्खो। पश्चात् गोल चक्कर लगाओ। वह दैत्य इसप्रकार का नृत्य करने लगा, उस समय उसका वह हाथ जिसमें भस्मकंकण बँधा था, उसीके मस्तक पर पहुँचा, भस्म कंकणकी लाइट मस्तक पर पड़ते के साथ ही वह दुष्ट भस्म हो कर खाक हो गया। सुनते हैं-कलासके रास्ते में अब तक भस्मासुर की ढेरी मिलती है, वहां एकप्रकार की विलक्षण भस्म देखने में आती है। उससमय महादेवजीको पता लगगया कि-मोहिनीरूप धारी विष्णु भगवान्‌ने दुष्टको भस्म कर दिया है। इस लिये भोलेनाथशंकर भगवान् वहां प्रकट हो गये। उस समय मोहनी रूपका शंकरके साथ सम्बन्ध होनेसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वही शास्ता देवता हरिहरपुत्र नामसे प्रसिद्ध हुआ। दक्षिण-भारतमें हरिहर-पुत्रकी सर्वत्र बड़ी प्रसिद्धि है। शास्ता देवता की स्तुतिमें एक विलक्षण चरित्र सुनने में आता है। उस स्तुतिका कुछ हिस्सा इस प्रकार है—

माता च विष्णुश्च पिता शिवो मे, ताभ्यामहं जात इति प्रसिद्धम्।
अम्बेति गौरीमहमाह्वयामि, तातस्त्रियो मातर एव सर्वाः॥
विष्णोश्च मातुः किल धर्मपत्नीं, कथं नु लक्ष्मीमहमाह्वयामि।
आस्येऽङ्गुलिं स्थाप्य विचिन्तयन्तं, शास्तारमीडे सकलार्थसिद्धये॥

उस शास्ता--देवकी सकल अर्थकी सिद्धिके लिये मैं स्तुति करता हूं। शास्ता-देव इस प्रकार विचार कर रहे हैं—मेरी माता विष्णु है, पिता शिव जी हैं, शिव एवं विष्णु से मैं पैदा हुआ हूँ, यह प्रसिद्ध है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पार्वती-देवीको मैं 'हे अम्ब !, इस सम्बोधनसे बुला सकता हूँ, क्योंकि-पिताजी की सभी स्त्रियां-धर्मपत्नियां माता ही हुआ करतीं हैं। परन्तु विष्णुरूप-माताकी धर्मपत्नी लक्ष्मी-देवी को मैं किस सम्बोधनसे बुलाऊँ, अर्थात् लक्ष्मीजी के साथ मेरा क्या सम्बन्ध हो सकता है, लक्ष्मी मेरे को क्या लगे ? इसप्रकार मुखमें अंगुली रखकर अतिगम्भीर होकर शास्ता देवता विचार कर रहेहैं।

'चेट्टिनाड़' ग्राममें करीब ११ रोज रहे। मंदिरमें श्रीमहामण्डलेश्वर-महाराजका सायंकाल संस्कृतमें प्रवचन होता था, एक स्थानीय विद्वान् ब्राह्मण-पण्डितजी उसका तामिल-भाषामें अनुवाद कर लोगोंको सुनाते थे। चेट्टिनाड़से हम सब कोविलूर-मठमें मोटर द्वारा गये।

कोविलूर।

'कोविलूर मठ' यह दक्षिण-भारतके संन्यासी-महात्माओंका एक विशाल स्थान है। इसमें ५०-६० महात्मा निरन्तर निवास करते हैं। तामिल-भाषामें शांकर-अद्वैत वेदान्तका पठन पाठन भी होता है। इस मठके अधिष्ठाता महन्तजी बड़े अच्छे सहृदय एवं धर्म-प्रेमी हैं। उन्होंने श्रीमण्डलेश्वर-महाराजका तथा मण्डलीके सभी महात्माओंका बड़ा आदर-सत्कार किया तथा कराया। दर्शनार्थी भक्तोंकी यहां बड़ी भीड़ लगा करती थी। मठके समीप ही श्रीपार्वतीदेवीजी सहित श्री शङ्करजीका बड़ा अच्छा विशाल मन्दिर है। मंदिरके सामने चारों ओर पत्थरोंके घाटवाला एक अच्छा सरोवर है। सरोवरके बीचमें भी एक छोटा-सा मंदिर है। उत्सवके समय भगवान् शंकर अम्बा सहित इस सरोवरमें जल-विहार करते हैं। मंदिरमें बड़े बड़े पत्थरों के ऊपर श्रीशंकरके दिव्य-लीला-विग्रहोंकी अनेक मूर्तियां बनी हुई हैं। कारीगरीका अद्भुत प्रदर्शन है। भगवानके दर्शन अर्चन वन्दन आदिके बाद सभी महात्मा श्रीमहामण्डलेश्वर महाराजके साथ मंदिरमें ही विश्रान्तिके लिए बैठ गये। दक्षिणके मंदिर इतने विशाल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होते हैं कि-कई प्रदक्षिणा करते करते, अनेक देवी-देवताओंके दर्शन करते करते थकावट हो ही जाती है। पूज्य मण्डलेश्वर-महाराजने कहा-"दर्शनके बाद मंदिरमें ही बैठकर एकाग्रतासे कुछ समय तक भगवान् का ध्यान करना चाहिये। ऐसी अपने सनातनधर्मकी मर्यादा है" भगवान् श्रीशङ्करजीके ध्यानका यह श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय है—इसका रहस्य बड़ा विलक्षण है। ध्यानसे इस ध्यान-श्लोकको सुनिये—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं,
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्,
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

जो चांदीके पर्वतके समान उज्ज्वल-शुक्ल दिव्य-वर्ण वाले, सुन्दर चन्द्रमाको अपने शिरपर भूषणकी तरह धारण करने वाले, श्रेष्ठ-रत्नके समान जगमगाते हुए तेजस्वी दिव्य अङ्ग वाले, परशु, मृग, वरमुद्रा, तथा अभयमुद्रा चारों हाथोंमें धारण करने वाले, अत्यन्त प्रसन्न-मुख कमलपर बैठे हुए, चारों तरफसे घेरकर खड़े हुए देवोंके समुदायसे जो स्तुत्य हैं, स्तुति पाये हुए हैं, व्याघ्र चर्मको पहने हुए, इस समस्त जगत्के आदिकारण, इस समस्त, विश्वके वन्दनीय, सम्पूर्ण भयोंके नाश करने वाले, सद्योजात अघोर, तत्पुरुष, वामदेव एवं ईशान नामके पंचमुखवाले, अग्नि सूर्य एवं चन्द्ररूपी तीन नेत्र वाले श्रीमहेश भगवान्का निरन्तर ही ध्यान करना चाहिये।

इस श्लोकको तथा इसकी संक्षिप्त पद व्याख्याको सुनकर मण्डलीके किसी महात्माने श्रीमण्डलेश्वर महाराजसे विनयपूर्वक प्रश्न किया—स्वामीजी महाराज! कृपया इस ध्यान श्लोकके प्रत्येक वाक्योंकी आध्यात्मिक रहस्य युक्त व्याख्या करके हमें समझाइये—

मण्डलेश्वरजी—(प्रसन्न होकर) बड़ी अच्छी बात है? सावधान होकर सुनिये।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'ध्यायेन्नित्यं महेशम्'

महेशं परमेश्वरं त एव नित्यमनवरतं तन्मयभावेन ध्यातुं शक्नुवन्ति, ये खलु नित्यपदसूचितनित्यानित्यविवेकविशिष्टाः सन्ति, अर्थात् ये अनित्यं क्षण-भंगुरं संसारं निश्चित्य तस्मात्-नित्यं=सदा पराङ्मुखाः सन्तः एकमात्रं भगवन्तं महादेवं नित्यं च निश्चित्य तत्रैव नित्यमजस्रं संलग्नबुद्धयो भवन्ति, त एव नित्यं महेशं ध्यायन्ति ध्यातुं प्रभवन्ति वा।

महेश परमेश्वरका वे ही सज्जन नित्य यानी अनवरत (निरन्तर) तन्मयभावसे ध्यान करनेके लिए समर्थ हो सकते हैं, जो कि-'श्लोकस्थ' नित्य पदसे सूचित नित्यानित्य पदार्थके दृढ़तम विवेक ज्ञान से संयुक्त हैं। अर्थात् जो संसारको अनित्य एवं क्षणभंगुर निश्चय कर, उससे सदा पराङ्मुख उदासीन हो एकमात्र भगवान् महादेवको ही नित्य निश्चयकर उसी भगवान्में ही नित्य यानी अजस्र (निरन्तर) संलग्न बुद्धि वाले होते हैं, वे ही नित्य महेशका ध्यान करते हैं। अथवा ध्यान करनेके लिए समर्थ होते हैं।

रजतगिरिनिभम्।

रजतमिति पदमानन्दधनं गिरिरितिपदं तत्र महत्त्वपूर्णत्ववैशिष्ट्यञ्च सूचयति। यथा कश्चनाकिञ्चनो मनुजः प्रभूतं रजतं धनं लब्ध्वा दारिद्र्यदुःख-रहितो भूत्वा महानन्दभाक् भवति, तथा महानन्दपूर्णं परमात्मानं ध्यानेनानुभूय शाम्भवो भक्तः संसारदुःखरहितः सन् महानन्दपूर्णो भवति, अतएव भगवान् श्रीशङ्करः, रजतगिरिनिभः=रजतगिरिसदृशः शाम्भवानां भक्तानां सर्वस्वभूतं परमं प्रियतमं हिततमं धनमेव।

'रजत' पद आनन्दरूप धनका तथा 'गिरि' पद उस आनन्द-धनमें महत्त्व एवं पूर्णत्वके सम्बन्धको सूचित करता है। जैसे कोई अकिञ्चन दरिद्र मनुष्य, रजत (चांदी) धनको प्राप्तकर दारिद्र्यप्रयुक्त-दुःखसे रहित होकर महानन्दित हो जाता है, तथा महान्-आनन्दसे पूर्ण परमात्माका ध्यानसे अनुभव करके श्रीशंकरका भक्त संसार-दुःखसे रहित हुआ महानन्द-पूर्ण हो जाता है, इसलिये भगवान्

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीशंकर चांदीके पहाड़के समान शैव-भक्तोंका सर्वस्वरूप अतीव-प्रिय अत्यन्त-हितकारी परम धन हैं। सदाशिव आत्मदेव-शंकरआनन्दरूपी रजतका एक बड़ा गिरि है। जैसे गिरिसे नदियां प्रवाहित होतीं हैं, वैसे ही सम्पूर्ण सुख उसीमेंसे आ रहे हैं, और जगत्‌में वे सुख कर्मोंके अनुसार पहुँच रहे हैं। श्रुति भी यही उपदेश देती है—

'एष ह्येवानन्दयति' 'एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति' (बृ० उ० ४।३।३२)

यही आत्माराम महादेव सकल विश्वको आनन्दित कर रहा है, ये सम्पूर्ण प्राणी इसी आनन्दकी मात्रा (कण-लेश) का उपभोग कर रहे हैं। सदाशिव भक्तोंका परमगुह्य धन हैं, जो इस धनके धनी बन जाते हैं, वे कदापि दीन हीन नहीं बनते। तात्पर्य यह है कि— रजतके समान सुखकारी होनेसे दुःख-दरिद्रताके नाशक होनेसे तथा अखण्डानन्दके अक्षय्यनिधि होने से आनन्दात्मा सदाशिवको 'रजत-गिरिनिभं' कहा गया है।

चारुचन्द्रावतंसम्।

शुद्धा शीतला चार्वी-कमनीया सूक्ष्मा ज्योतिष्मती च या प्रबोधचन्द्रकला, अनेकजन्मसञ्चितपुण्य-प्रसूतविवेकादिसाधनसम्पत्तिमन्तरेण दुःसंपाद्यत्वेन सा वक्रेत्यभिधीयते, तामनवरतमात्मदेवः श्रीशङ्करो बिभर्ति, अतएव सः चारुचन्द्रावतंसः' इति नाम्ना प्रसिद्धोऽभूत्।

श्रीशंकरजीने प्रबोध-रूप चन्द्रकलाको धारण किया है, जो प्रबोध चन्द्रकला अत्यन्त शुद्ध-पवित्र है, रागादि-कलंकसे रहित है, आध्यात्मिकादि-त्रिविध तापों की विध्वंसक होने से स्वयं परम शीतल है, मुमुक्षुरूपी चकोरों के लिए जो बड़ी ही चार्वी यानी कमनीय-रमणीय प्रतीत होती है, और जो निर्मल एकाग्रसूक्ष्म-बुद्धि-गम्य होने से बड़ी सूक्ष्म है, तथा स्वयं ज्योतिरूप है, अनेक जन्मोंके सञ्चित पुण्य से उत्पन्न विवेकादि-साधन-सम्पत्तिके बिना जो दुःसंपाद्य होने से वक्र (टेढ़ी) कही जाती है, अर्थात् 'कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः' (गीता) के अनु-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सार बड़ी ही कठिनता से किसी बड़भागी पुरुषार्थीको ही वह प्रबोध-चन्द्रकला प्राप्त होती है। उस परम आह्लाद देने वाली कलाको आत्म देव-श्रीशंकर सदा अपने उत्तमांग-मस्तक पर धारण करते हैं। इसलिये श्री शिव 'चारुचन्द्रावतंस' 'चन्द्रचूड' आदि नामोंसे प्रसिद्ध हुए हैं। जो इस प्रकारकी सर्वोत्तम-प्रबोधचन्द्रकलाको भगवान् शंकर की कृपा से निरन्तर धारण करता है, वह महात्मा देहभाव एवं जीवभाव से मुक्त होकर सदाशिव हो जाता है।

रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गम् ।

निर्विकल्पसमाधिमययोगरूपाणि दिव्यरत्नानि श्रीशङ्करो नित्यं दधाति, अतस्तस्याङ्गानि मुखादीन्यत्युज्ज्वलानि देदीप्यमानानि मनोहराणि प्रतीयन्ते।

निर्विकल्पसमाधिप्रचुरयोगस्वरूप-दिव्य रत्नोंको श्रीशङ्करजी सदा धारण करते हैं। इसलिये श्रीमहादेवके मुखादिअङ्ग अत्यन्त देदीप्यमान-मनोहर प्रतीत होते हैं।

परशुहस्तम् ।

असङ्गभावनारूपः तीक्ष्णः परशुः श्रीशङ्करस्य हस्ते सर्वदा वर्तते, येन मोहमूलं संसारवृक्षं समूलं छिन्नं कदाचिन्न प्ररोढुं शक्यतीति सूच्यते।

असङ्ग भावनारूप-परशु (कुठारनामका शस्त्र-विशेष) श्रीशंकर के हाथ में सर्वदा रहता है, जिससे मोह (अज्ञान) मूलवाला संसारवृक्ष मूलसहित छिन्न हुआ पुनः वह प्ररूढ़ नहीं हो सकता है. यह भाव-रहस्य "परशुहस्त" पद सूचन करता है।

मृगहस्तम् ।

मनोमृगोऽतिचपलो न शक्यते साधारणैर्मनुजैर्वशीकर्तुम्। कदाचित्साधनाभ्यासेन वैराग्येण च वशीकृतोऽपि समयान्तरे पुनःपलायते। स एव शम्भुना योगेश्वरेण परमेश्वरेण लीलयैव हस्ते धृतो वशीकृतः कदापि पलायितुं न प्रभवतीति द्योत्यते।

मनरूपी मृग अतीव चपल है, साधारण-मनुष्य उसको वश करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हैं, कदाचित् साधनाभ्याससे वश करने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पर भी पुनः मौका आने पर शीघ्र ही भाग जाता है, उस मनरूपी अत्यन्त-चंचल मृगको योगेश्वर परमेश्वर श्रीशङ्कर जीने अनायास ही अपने एक हस्तमें पकड़ कर वश कर लिया है, अब यह पुनः कदापि भागनेके लिए समर्थ नहीं हो सकता है, यह रहस्य 'मृगहस्त' पद द्योतन करता है।

वरहस्तम् ।

येर्वंगार्थिभिस्तत्त्वजिज्ञासुभिर्वरेण्याय ब्रह्मानन्दाय यो वृत्तः, स तं वरमिष्टं स्वस्वरूपसाक्षात्कारात्मकं सदुपदेशशालिना हस्तेन ददाति, तेन श्र शंकरो वरहस्तोऽस्तीति ज्ञायते ।

जिन वरार्थी तत्त्व-जिज्ञासु मुमुक्षु-लोगोंने वरेण्य-ब्रह्मानन्दके पाने के लिये जिस सदाशिव भगवान्का वरण किया है, उसी नितान्त-स्पृहणीय स्वस्वरूपसाक्षात्काररूप वरको वह भगवान् अपने सदुपदेश-शाली हस्तसे मुमुक्षुओंको दिया करते हैं, यह भाव 'वरदहस्त' पदसे जाना जाता है।

अभीतिहस्तम् ।

सर्वेऽपि मृत्योर्बिभ्यति, मृत्युरेव भय महत् । परन्तु मृत्युञ्जयस्य भगवतो जगद्गुरोः श्रीशङ्करस्य योगमये हस्ते मृत्युरहितमभयं सदा वर्तते, अतएव अभीति-हस्तमितिपदं 'ज्ञानयोगप्रभावात् द्वैतप्रपञ्चरूपोमृत्युर्विध्वंसत इतिद्योतयति ।

सभी लोग मृत्युसे डरते हैं। मृत्यु ही सबसे बड़ा भय है । परन्तु भगवान् जगद्गुरु मृत्युञ्जय श्रीशंकर के योगमय-हस्तमें मृत्युरहित अभय सदावर्तमान रहता है, इसलिये 'ज्ञानयोगके प्रभावसे द्वैतप्रपञ्चरूपी मृत्यु विध्वस्त होती है' यह रहस्य "अभीतिहस्तं" पद द्योतन करता है।

प्रसन्नम् ।

सर्वसिद्धिनामास्पदत्वात् ब्रह्मानन्दस्याजस्रमास्वादकत्वाच्च सर्वदा प्रसन्नो हरः।

सम्पूर्ण सिद्धियोंके भण्डार होने से तथा निरन्तर ब्रह्मानन्दके आस्वादक होने से श्रीहर सर्वदा प्रसन्न हैं ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पद्मासीनम् ।

सतां ब्रह्मनिष्ठानां हृदयपद्मेषु साक्षादपरोक्षसच्चिदानन्दरूपेणासीनत्वात् सदाशिवः पद्मासीन इत्युच्यते ।

ब्रह्मनिष्ठ-सत्पुरुषोंके हृदयकमलों में साक्षात् अपरोक्ष सच्चिदानन्द रूपसे आसीन (आसन जमाये हुए) होनेके कारण श्रीसदाशिव "पद्मासीन" कहे जाते हैं।

समन्तादमरगणैः स्तुतम् ।

मनुजा देवान् स्वाभीष्टसिद्धये स्तुवन्ति, ते च देवा देवनायकान् । तैरपि देवनायकैः देवदेवो महादेवः समन्ताद् स्तूयते ।

मनुष्य-वरुण मरुत् आदि देवताओं की अभीष्ट सिद्धिके लिये स्तुति करते हैं, वे देव इन्द्र ब्रह्मा आदि देवनायकों की स्तुति करते हैं। और उन देवनायकों से भी देवोंके भी देव महादेव स्तुत्य होते हैं।

व्याघ्रकृत्तिं वसानम् ।

किरातवेषधारिणा शंकरेण विनिपातितो मोहव्याघ्रः कटौ कृत्तिरूपेण धार्यते, इति तस्येदं निदर्शनम् ।

किरात-वेष धारी श्रीशंकरने मोहरूपी व्याघ्र (जो भय एवं शोक का कारण है) को मार गिराया है, उसका चिन्ह कृत्ति (चर्म) रूपसे कटि में धारण किया है।

विश्वाद्यं विश्ववंद्यम् ।

विश्वकारणत्वाद्विश्वाद्यो, विश्वपालकत्वाद्विश्ववन्द्यो गिरिजापतिः । विश्वका कारण होनेसे गिरिजापति श्रीशंकर विश्वाद्य हैं, तथा विश्वका पालक होनेसे विश्वसे वन्दनीय हैं।

निखिलभयहरम् ।

द्वितीयाद्वै भयं भवतीति श्रुतिः प्राह, इत्यत अद्वैत-ब्रह्मात्मतत्त्वोपदेशेन जगद्गुरुः श्रीशंकरो भक्तानां निखिलं भयं हरतीति ।

दूसरे से ही भय होता है, यह श्रुति कहती है, इसलिये अद्वैत-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ब्रह्मात्मतत्त्वके उपदेश से जगद्गुरु श्रीशंकर भक्तोंके समस्त भयका हरण करते हैं।

पञ्चवक्त्रम्।

चतसृषु दिक्षु समासीनाः भक्ताः भगवन्तं शिवं नित्यं ध्यायन्ति, अतएव स भगवान् सर्वेषामपि भक्तानां चतुर्भिर्मुखैः सदा सन्मुखः सन्नवतिष्ठते। परन्तु ये मन्दभाग्याः श्रद्धाविहीनाः जनाः शिवं न ध्यायन्ति, तेभ्यो विमुखेभ्यः सदाशिवः सदा उन्मुखः उर्ध्वमुखीभवतीति तस्य पञ्चवक्त्रताऽभूत्।

चारों दिशाओंमें बैठे हुए भक्त सदा भगवान् शिवका ध्यान करते हैं, इसलिये वह भगवान् सभी भक्तों के चारों मुखों द्वारा सदा सन्मुख ही रहते हैं, परन्तु जो मन्दभागी श्रद्धारहित नास्तिकजन शिव का ध्यान नहीं करते हैं, उन विमुखों से सदाशिव उन्मुख यानी ऊपर मुख उठाये हुए उर्ध्वमुख रहते हैं। अर्थात् चारों दिशाओं में भक्तों को दर्शन होने से श्रीशंकर भगवान् चतुर्मुख हैं और भक्तिहीन लोगोंसे विमुख होनेसे उर्ध्व-मुख पांचवां मुख है, इसलिये श्रीशंकर सदाशिव पञ्चमुख कहलाते हैं।

त्रिनेत्रम्।

शङ्करस्य कर्मोपासने उभे नेत्रे। तृतीय नेत्रं ज्ञानं ललाटे राजते, तेन शम्भुस्त्रिनेत्रः।

अथवा सूर्यचन्द्रौ उभे नेत्रे, तृतीयं वह्निनेत्रं, सूर्यनेत्रेणाराधकानां भक्तानामज्ञानान्धकारं, चन्द्रनेत्रेण संसारस्य त्रिविधसन्तापान् वह्निनेत्रेण चानादिसमस्तकर्मसंभारं विनिहन्तीति शम्भोः त्रिनेत्रत्वं सार्थकम्।

श्रीशंकरके कर्म और उपासना ये दो नेत्र हैं, तृतीय ज्ञानरूप नेत्र ललाट में सुशोभित है, इसलिये शम्भु त्रिनेत्र है।

अथवा सूर्य एवं चन्द्रमा ये दो नेत्र हैं, और तीसरा वह्निनेत्र ललाटमें है। सूर्यनेत्रसे भगवान् शंकर अपनी आराधनाकरनेवाले भक्तोंके अज्ञानान्धकारका, चन्द्रनेत्रसे संसारके विविध संतापोंका तथा अग्निनेत्रसे अनादि-कालके समस्त शुभाशुभकर्मसमुदायका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विनाश कर देते हैं, इसलिये श्रीशंकरका त्रिनेत्रपना सार्थक है।

इस प्रकार शिव-ध्यान श्लोकके प्रत्येक वाक्योंकी रहस्यमयी व्याख्या सुनकर सभी महात्मा-लोग प्रसन्न हुये, और वहांके कुछ पण्डित लोग भी वाह-वाह करने लगे। पश्चात् भिक्षाकासमय होनेसे सभी महात्मा मठमें चले गये।

कालियार कोविल एवं नवग्रह-देवता।

कोविलूर-मठसे मोटर द्वारा हम सब कालियार-कोविल आये। यहां एक मठमें ठहरे। मठके अध्यक्ष—महन्तजी अच्छे-सुहृद् एवं उदारात्मा थे। यहां भी श्रीशंकर एवं भगवती-उमाके सुन्दर एवं विशाल मंदिर हैं। मंदिरोंके चतुर्दिक् गोपुर अत्युन्नत एवं विविध-चित्रकलाओंसे पूर्ण हैं। मंदिर के समीप रमणीय-सरोवर है। उसके मध्यमें सुन्दर उपवन है। नौका द्वारा सरोवरकी सैर कर हम लोग पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराज सहित उस उपवनमें गये। यहां हम चार दिवस रहे। प्रतिदिन-शास्त्र-चर्चा, सत्संग एवं प्रवचन होता रहा।

यहांसे मोटर-बस द्वारा नव-ग्रहदेवताओंके स्थान पर गये। कहते हैं कि-इनकी मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने स्थापना की थी। एक फर्लाङ्ग दूर समुद्रके जलमें बड़े-बड़े उन्नत-पाषाणोंकी मूर्तियोंके रूपसे वे देवता दर्शन दे रहे हैं। श्रीपूज्य महामण्डलेश्वरजी सहित हम सब महात्मा भगवान्के पावन-नामोंका संकीर्तन करते हुए—वहां पहुँचे। अर्चन-वन्दन करके वापस किनारे पर आए। तब श्रीमहामण्डलेश्वर महाराज अपनी ऐनक ढूंढने लगे। किसी महात्मा ने कहा—महाराजजी! जब आप यहांसे गये थे, तब ऐनक आपके नेत्रों पर विद्यमान थी। सम्भव है कि—वहां डुबकी लगाते समय समुद्र के जलमें गिर गई होगी। कई महात्मा वहां पहुँचे, खूब ढूंढी, परन्तु ऐनक नहीं मिली। श्रीस्वामीजी महाराजने हँसकर कहा—उसे इन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ग्रह-देवताओंने जबरन् ग्रहण कर ली। अब वह नहीं मिल सकती। गृह्णन्तीति ग्रहाः यह उनका अन्वर्थ नाम है।

उसी समय ग्रहोंके विषयमें पू० मण्डलेश्वरजी महाराजसे किसी महात्माने इस प्रकार प्रश्न किये—

प्रश्न—महाराजजी ! क्या आपने लोग ग्रहोंको भी मानते हैं ?

उत्तर—सबको आत्मारूपसे मानते हैं, सबमें भगवद्भाव रखते हैं।

प्रश्न—क्या वेदोंमें भी ग्रहोंकी मान्यता उपलब्ध है ?

उत्तर—हाँ ! हाँ ! वेदोंमें भी ग्रह-शान्तिकी प्रार्थना मिलती है। 'शं नो ग्रहाश्चान्द्रमसाः, शमादित्यश्च राहुणा।' (अथर्व० १९।९।१०) इत्यादि मन्त्र इसमें प्रमाण हैं।

प्रश्न -जो (वैदिक-धर्मानुयायी) ग्रहोंको मानते हैं, उन्हें ही ग्रह हैरान करते हैं, अन्य युरोपादि-देशवाले उन्हें नही मानते हैं, तो उनको वे सताते नहीं। यह बड़ा अच्छा न्याय रहा, परिचित-कुत्ता परिचितको ही काटने दौड़ता है-अपरिचितके सामने गुम-सुम हो जाता है।

उ०—ग्रह सबको सताते हैं, परन्तु स्वतन्त्ररूपसे नहीं। क्योंकि—यह सिद्धान्त है कि—'ग्रहा वै कर्मसूचकाः' अर्थात् ग्रह शुभाशुभ-कर्मों के ज्ञापक हैं। अशुभ-कर्मोंको निमित्त बना कर रोग-संकट आदि प्रदान करते रहते हैं।

इस प्रकारके युक्तियुक्त उत्तर सुनकर वह प्रश्नकर्ता महात्मा चुप हो गया, पश्चात् वहां कुछ विश्राम कर मोटर द्वारा हम सब श्रीरामेश्वर-धाम गये।

श्रीरामेश्वर एवं धनुष्कोटि-तीर्थ।

श्रीरामेश्वरजीका रमणीय एवं विशाल मंदिर है। साथमें भगवती श्रीपार्वतीदेवीका भी मंदिर है। बड़े-बड़े गोपुर हैं। अनेकों

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परिक्रमाएँ हैं, उनमें विविध नामवाले तीर्थ-कूप हैं। श्रद्धालु यात्रीगण इन पचासों तीर्थ-कूपोंके जलसे स्नान करते हैं। समीपमें ही विशाल समुद्र है। वहां भी एक अग्नि-तीर्थ है। जिसमें स्नान किया जाता है। श्रीमहाराजजी सहित हम सब महात्मा वहां स्नान कर पूजनकी सामग्री लेकर मंदिरमें गये। प्रेमसे आरती, पूजा, भेट, महिम्न-स्तोत्र पाठ आदि किये। श्रीरामेश्वर-धाममें हम १८ दिवस रहे। शिवरात्रिका पुनीत-पर्व रामेश्वरमें ही बड़े धूम-धामसे मनाया। श्रीरामेश्वर-भगवानकी स्थापना, मर्यादा-पुरुषोत्तम-भगवान् श्रीरामने ही अपने करकमलोंके द्वारा की थी। इसलिए भगवान्का 'रामेश्वर' रामका ईश्वर ऐसा अन्वर्थ नाम पड़ा। राम, शिवके भक्त हैं तो शिव रामके। परस्पर शिव एवं रामका अभेद है। यहां शिवरात्रिका उत्सव करीब एक सप्ताह तक मनाया जाता है। रात्रिमें मंदिरके चारों तरफ भगवान्का जलूस भ्रमण करता है। आगे अनेक-प्रकारके बाजे बजते हैं, पीछे अनेक हाथी घोड़े विशाल-झण्डे आदि चलते हैं। प्रथम श्रीगणेशजी चांदीके रथमें या रजतनिर्मित-मूषिक वाहन पर आरूढ़ होकर चलते हैं, पश्चात् देव-सेनापति श्रीकार्तिकेय-स्वामी की सवारी चलती है, उसके बाद भगवती महाशक्ति-दुर्गा भवानीकी, पश्चात् देवाधिदेव भगवान् शंकरकी और अन्तमें वीर-भद्रजीकी सवारी निकलती है। सभी देव, अच्छे अच्छे चांदी-सुवर्णके विविध वाहनोंमें विविध-वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित होकर भक्तोंको भक्तिवर्धक-मनोहारी दर्शन देते हुए भ्रमण करते हैं। साथमें कई हजारोंकी तादादमें धर्म-प्रेमी भगवत्स्नेही नर-नारियोंकी भीड़ रहती है। दोनों तरफ दर्शनार्थी भक्त भी दर्शनकी प्रतीक्षा करते हुए खड़े रहते हैं। सबके अन्तमें चारों-वेदोंका सुमधुर-एक स्वर से पाठ करते हुए-एक दूसरेका हस्तावलम्बन किये हुए-वेद-पाठी-ब्राह्मणोंकी क्रम-बद्ध पंक्ति जाती हुई दिखाई देती है। यह सब दृश्य मनका आह्लादक, भक्तिवर्धक एवं नयनाभिराम होता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दक्षिणके सेठ भक्तोंने मण्डलीके निवासके लिए एक स्वतन्त्र एकान्तस्थानका अच्छा प्रबन्ध किया था। यहां हम सब करीब १८ दिवस रहे। रामेश्वरसे धनुष्कोटि-तीर्थ पर गये। धनुषकी कोटि जैसा ही इसका दर्शन है। एक तरफ हिन्द-महासागर शान्त एवं गम्भीर-रूपसे, तो दूसरी तरफ चंचलरूपसे अरब महासागर दर्शन देता है। दोनोंके संगम पर स्नान किया जाता है। धनुष्कोटिसे वापस रामेश्वर आये। यहां पर गुजरात-देशके किसी श्रद्धालु भक्तने पूज्यपाद श्रीमहामण्डलेश्वर जी महाराजसे इस प्रकार प्रश्न किये, और श्रीस्वामीजीने उनके उत्तर इस प्रकार दिये।

प्रश्न—भगवन् ! यह संसार क्या है ? कैसा इसका स्वरूप है ?

उत्तर—संसार वह है–जो किसीकी पकड़में न आ सके, इसलिये इसे कोई भी प्रथम, न पकड़ सका है, न वर्तमानमें पकड़ सकता है. और भविष्यमें न पकड़ सकेगा। क्योंकि–इसका क्षणभंगुर, स्वप्नवत् अदृष्ट दृष्ट एवं विनष्ट स्वरूप है। जैसे प्रथम, स्वप्न सर्वथा अदृष्ट होता है, निद्राकालमें दृष्ट होकर जाग्रत-दशामें विनष्ट हो जाता है. वैसा संसार है। इसलिये जो इसको पकड़नेके लिए जोर लगाता है, इसके पीछे पागल होकर दौड़ता है, इसकी ही चिन्तामें अपने जीवनको समाप्त कर देता है, वह बुद्धिमान् नहीं, किन्तु बुद्धिका दिवालिया कहा जा सकता है। जब रावण, कंस, आदि अनेक बलवानोंने इसको पकड़ना चाहा, इसके कनक कामिनी काया आदि पदार्थोंको सदाके लिए अपने आधीन करनेके लिए बड़े-बड़े प्रयत्न किए, परन्तु वे भी सफल नहीं हो सके, अन्तमें हाथ मल कर रोते ही रह गए, तब इस वर्तमान युगके मानवोंकी तो बात ही क्या करनी ? अतः इसे पकड़नेके लिए मत दौड़ो, इससे सदा उपराम रहो, इसके इष्टानिष्ट-द्वन्द्वोंमें राग-द्वेष कर अपनेको दुःखी मत बनाओ।

प्र०—प्रभो ! आचार्यदेव ! परमात्मा क्या है ? उसका कैसा स्वरूप है ? कृपया इसे भी समझाइये।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उ०—जिसे कोई भी छोड़ नहीं सकता, वह परमात्मा है। जो समस्त चराचर-विश्वके अन्तर्बहि अविनाशी-सर्वात्मा रूपसे पटमें तन्तुकी भांति व्याप्त है, उसे भला कौन छोड़ सकता है? तथापि जो उस महान्-आनन्दनिधि-परमात्मा को छोड़ देता है, वह महामूर्ख माना जाता है। उससे विमुख रहना, उसकी पूर्णसत्तामें विश्वास न रखना ही, उसका छोड़ना है। वस्तुतः वह सबका अपना आप है, सर्वत्र हाजिरा-हजूर है, सदा प्राप्त है, उसकी प्राप्ति करनी है—अप्राप्तकी भ्रान्ति हटाकर। इसलिये वह न हेय हैं, न उपादेय है, आत्म-भिन्न पदार्थ तो हेय एवं उपादेय हो सकते हैं। अतः इसे मत छोड़ो, इसका शान्तचित्तसे विचार एवं अनुसंधान करते रहो, तभी ही बुद्धिकी सफलता है।

प्र०—स्वामिन्! ज्ञानी और भक्तमें क्या फरक है?

उ०—कुछ नहीं, जो सच्चा भक्त है, वह अज्ञानी नहीं हो सकता, और जो यथार्थमें ज्ञानवान् है, वह भक्ति-शून्य भी नहीं रह सकता। इसलिए गीतामें श्रीभगवान्ने ज्ञानीको भक्त कहा है, भक्तोंकी गणनामें श्रेष्ठरूपसे-आत्मारूपसे ज्ञानीका वर्णन किया है। अतएव ज्ञानीके हृदयमें भक्तिकी निर्मल-गंगा प्रवाहित रहती है, और भक्तका हृदय ज्ञानके प्रकाशसे देदीप्यमान रहता है। ज्ञान एवं भक्तिका सामञ्जस्य ही साधकको निःश्रेयसके शिखर पर पहुँचाता है।

प्र०—भगवन्! कृपानिधे! तब ज्ञान और भक्तिमें भी कुछ फरक नहीं होना चाहिये।

उ०—हां, हां, वस्तुतः कुछ फरक नहीं, भक्ति अनन्य-रूपा है, तो ज्ञान-अद्वैत रूप है, दोनोंका लक्ष्य एक ही है। अतएव सिद्धान्तमें दोनोंका तादात्म्य-सम्बन्ध माना गया है। ज्ञानके बिना भक्तिकी सिद्धि नहीं, और भक्तिके बिना ज्ञानकी निष्ठा नहीं। भक्ति तथा ज्ञान मिश्री और दूधकी भांति घुले मिले हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्र०—भगवन्! आचार्यप्रवर! तब यह ज्ञानी है, यह भक्त है, ऐसा भेदका व्यवहार क्यों होता है ?।

उ०—कुछ अवान्तर-भावोंके भेदसे ऐसा व्यवहार होता है। ज्ञानी कहता है–'अहं ब्रह्मास्मि' मैं छोटासा नहीं, महान् हूँ. पूर्ण हूँ, मुझमें ईश्वर सहित समस्त विश्व अध्यारोपित है, इसलिए मैं ही सब कुछ हूं, मुझसे अतिरिक्त कुछ नहीं, इस प्रकार वह अपनी महान् 'मैं' में सबको मिला देता है, एक अद्वयरूपसे आप ही परिशिष्ट रह जाता है। और भक्त कहता है–हे इष्टदेव! प्रभो! मैं कुछ नहीं, तू ही तू है, वह उस महान् 'तू' में अपनी तुच्छ मैं को मिला देता है, तू ही तू रह जाता है। इसलिए रसिक-भक्तोंने भी गवाहीके रूपमें कहा है–

जब मैं था, तब हरि नहीं, अब हरि हैं, मैं नाहीं।
प्रेमगली अति सांकरी, तामें दो न समाहीं॥
प्रेम प्रकट जब होत है, रहत न पावत आन।
तू तू ही रह जात फिर, मैंका मिटत निशान॥
लाली मेरे लालकी, सब जग रही समाय।
लाली देखन मैं चली तो मैं भी हो गई लाल॥

मदुरा-मीनाक्षी।

रामेश्वरसे हम सब रेल द्वारा मदुरा नगरमें आये। प्रथम ब्रह्मानन्दाश्रममें कुछ रोज ठहरे। पश्चात् सौराष्ट्र-ब्राह्मणोंके श्रीमान् लक्ष्मण अय्यर, पद्मनाभ अय्यर, राजगोपाल अय्यर आदि प्रमुखोंके आमन्त्रणसे विवेकानन्दाश्रममें ठहरे। मदुरामें सौराष्ट्र-ब्राह्मणोंकी विशेष बस्ती है। ये लोग महमूद गजनवीके सोमनाथ पर आक्रमणके समय सौराष्ट्रसे भागकर यहां आकर ५०० या ७०० वर्ष हुए होंगे, बस गये हैं। इनकी भाषा भी तामिल-भाषासे विलक्षण है। इसमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुजराती-महाराष्ट्री आदि अनेक-देशोंकी पदावलि भी कुछ-कुछ परिवर्तनके साथ मिली हुई है। सौराष्ट्र-ब्राह्मण, बड़े श्रद्धालु-धर्मनिष्ठ-वाणिज्यादि-कार्योंमें भी दक्ष, पुरुषार्थनिष्ठ एवं प्रायः धनवान् हैं। यहां हम लोग २५ रोज रहे। यहांकी देवियां गीता आदिके श्लोकोंका तथा विविध-स्तोत्रोंका इतना अच्छा मधुर एवं आकर्षक उच्चारण करती हैं कि–उनकी मिष्ट-वाणीको सुनते ही रहें, ऐसा चित्त हो जाता है। बम्बई आदिमें समग्र-गीता पारायणके लिए तीन घण्टे लगते हैं तो यहांकी देवियां इसे दो घण्टेमें कर डालती हैं, इतनी शीघ्रताके साथ पारायण करने पर भी उच्चारणकी मधुरता एवं प्रत्येक वर्ण-श्रवणकी स्पष्टता कभी भी भंग नहीं होती। यहां संकीर्तनका एवं वेदान्तके सत्संगका खूब प्रचार है। स्थानीय-भक्तोंने प्रतिदिन-रात्रिमें नगरके मध्यमें एक विशाल-स्थान पर पूज्य श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजके प्रवचनोंका भी आयोजन किया था। कई हजारोंकी संख्यामें भावुक नर-नारी प्रवचनका अलभ्य-लाभ लेनेके लिए आते थे। प्रथम संकीर्तन होता था, उसके बाद श्रीस्वामीजी महाराजका संस्कृतमें या हिन्दीमें प्रवचन होता था। प्रथम स्वामीजी १० मिनट बोलते थे, पश्चात् उसका अनुवाद स्थानीय श्रीमान् पण्डित-पद्मनाभ अय्यरजी तामिल भाषामें कर देते थे। इस प्रकार प्रवचनके लिए २॥ घण्टा लग जाता था। यहांकी जनता जैसी धर्मनिष्ठ एवं भावुक है, वैसी ही अद्वैत-वेदान्तके पावन-संस्कारोंसे भी अच्छी संपन्न है। प्रवचन-स्थल पर एक तरफ देवियां बैठती थीं तो दूसरी तरफ पुरुष। दोनोंके शिर खुले रहते थे, दक्षिणमें उत्तर-भारत की भांति देवियां विधवाओंको छोड़कर शिर पर वस्त्र नहीं रखती हैं। इसलिए प्रवचनके मञ्चपर बैठे हुए महात्माओंको दोनों तरफ प्रायः परिष्कृत-बालोंकी कृष्ण-वर्णकी आभा ही चमचमाती हुई दीख पड़ती थी।

यहांका महाशक्ति-जगदम्बा भगवती मीनाक्षीदेवीका मंदिर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बड़ा ही विशाल एवं आकर्षक है। यहां ऐसी सुन्दर स्थापत्य-कला देखनेमें आती है कि-जिसे देखकर मन प्रसन्न हो जाता है। मदिरमें ही एक अच्छा सरोवर है। कहते हैं कि–मदूराके पाण्ड्य नरेशके यहां साक्षात्-भगवती दुर्गा-भवानीदेवीने कन्यारूपमें अवतार लिया था। उसका नाम मीनाक्षी रक्खा था। मीनकी तरह उसकी बड़ी सुन्दर लुभावनी चमकदार आंखें थीं। राजा-रानी पूर्व-जन्ममें देवी भगवती के भक्त थे। और भगवतीसे अपने यहां कन्यारूपसे जन्म लेनेका वरदान प्राप्त कर चुके थे मीनाक्षी राजकुमारी भगवतीका अवतार होनेके कारण इतनी सुन्दरी एवं मनोहारिणी थी कि–जो भी कोई उसे देखता था, वह टकटकी लगाकर विस्फारित नेत्रोंसे देखता ही रह जाता था। जब वह षोडशवर्षकी युवती हुई, तब राजा रानीको उसके विवाहकी बड़ी चिन्ता हुई। परन्तु जब अन्वेषण करने पर भी उसके लायक कोई राजकुमार दृष्टिगोचर नहीं हुआ, तब माता-पिताकी चिन्तानिवारणार्थ मीनाक्षीदेवीने अपना परिचय दिया। और कहा कि–मैं वही साक्षात् भगवती दुर्गा भवानी हूँ, जिसकी तुमने आगेके जन्ममें भक्ति-पूर्वक आराधना की थी। मेरा विवाह तो उन कैलासपति भगवान् आशुतोष श्रीशंकरसे हुआ ही है। अतः आप इसके लिए चिन्ता न करें। राजा-रानीने विस्मयके साथ प्यार भरी वाणीसे कहा, कि–यदि तू वही भगवती है तो हमें उस महान्-दिव्यस्वरूपका प्रत्यक्ष दर्शन दे और अपने आराध्य-भगवान्का भी दर्शन करा, तब तो हम जानें कि–तू वही दुर्गादेवी है। भगवती मीनाक्षीने कहा–मैं दर्शन करा सकती हूँ, परन्तु उसके बाद तुम्हारी कन्यारूपसे मैं नहीं रहूँगी, अन्तर्हित हो जाऊंगी। भावुक राजा-रानीने विचार कर कहा कि–अच्छा! हमें भगवान् एवं भगवतीके साक्षात् दर्शन चाहियें, परन्तु हमारी अतिप्रिय कन्याकी भी स्मृतिके लिए कुछ होना चाहिये। तब भगवतीने अपने माता-पिताको अलभ्य दर्शन देकर कृतार्थ किया,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और चिरस्मृतिके लिए अपना जैसा सुन्दरतम विग्रह था, वैसी ही पाषाणकी दिव्य-मूर्ति प्रकट कर दी।

तबसे राजाने भगवती मीनाक्षीका विशालतम भव्य-कलापूर्ण मंदिर बनाना प्रारम्भ किया, कई करोड़ोंका व्यय किया, और राजाकी ५-७ पीढ़ी में इसकी समाप्ति हुई। वह मंदिर आज भी ज्योंका त्यों अखण्डित-रूपसे अवस्थित है, दूरसे ही इसके चतुर्दिक्-अवस्थित-समुन्नत गोपुर दीख पड़ते हैं। भगवतीके कई लाखोंके हीरे-माणिक मोती आदिके आभूषण तथा चांदी सुवर्णके सिंहासन, हिण्डोला वाहन आदि विद्यमान हैं। भावुक-धर्मप्रेमी भक्त इस मंदिरका अवलोकन कर तथा भगवती मीनाक्षीदेवीका तथा भगवान् सुन्दरेश्वर महादेवका दर्शनकर अति आह्लादित होते हैं।

चेट्टनाड आदिके भक्त-धनी सेठ-गृहस्थोंने हमारी मण्डलीके आराध्यदेव स्फाटिक-लिङ्गमूर्ति-चन्द्रमौलीश्वर-भगवान्का डेढ हजार तोला चांदीका बड़ा ही सुन्दर मन्दिर बनवाकर श्रीपूज्यमहामण्डलेश्वर महाराजको दक्षिण-तीर्थ-यात्राकी स्थायी स्मृतिके लिए मदूरामें आकर उसे समर्पण किया। इसमें दक्षिणके ढंगकी मनोरम-चित्र-कलापूर्ण तिरुवाक्षी सिंहासन, नन्दी, कमल, सर्प आदि अच्छे बने हुए थे। जिसको रखनेके लिए मदूराके श्रीमान् लक्ष्मण अय्यरजीने काष्ठ की मजबूत दो पेटियां बनवा दीं थीं।

मदूराका संस्कृत नाम मधुरा है। समीपमें एक नदी भी बहती है। यहांसे तीन मीलकी दूरी पर एक पर्वत पर कार्तिकेय-स्वामीका बड़ा ही भव्य तथा विशाल मंदिर है। तथा २० मीलकी दूरी पर अलगर कोविल नामका विष्णु भगवान्का भी बड़ा भव्य मंदिर है। स्थानीय-भक्तोंने श्रीपूज्य-महामण्डलेश्वर महाराज सहित हम सभी महात्माओंको इन दोनों मंदिरोंके विधिवत् दर्शन कराये। यहां पर किसी श्रद्धालु-भक्त-देवीने वर्ण-व्यवस्थाके विषयमें कुछ प्रश्न किये, और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीपूज्य-महामण्डलेश्वर महाराजजीने उनके इस प्रकार उत्तर दिये—

प्रश्न—गुरुमहाराज ! वैदिक-सनातन-धर्ममें वर्ण-भेद क्यों माना गया है ? जो कभी वर्ण-विद्वेषका कारण बन जाता है।

उत्तर—काल्पनिक-भेदके द्वारा वास्तविक-अभेद बतलानेके लिए—परस्पर सहायक होनेके लिए तथा प्रेम-सद्भाव बढ़ानेके लिए। अतएव हमारे प्रामाणिक वेदोंमें एक ही शरीरके मुखादि-चारों अंगों की उपमा द्वारा ब्राह्मणादि चारों वर्णोंका वर्णन किया है। मुखादि अंग भिन्नभिन्न होने पर भी पृथक्-पृथक् कार्य करने पर भी वस्तुतः एक ही शरीरसे अभिन्न हैं, एक-दूसरेके सहायक हैं, पोषक हैं। आंख एक फल देखती है, मुख उसे खाना चाहता है, पैर उसी समय फलकी तरफ दौड़ते हैं, हाथ उसे तोड़कर स्वच्छ कर टुकड़े कर प्रेमसे मुखको खिलाता है, मुख भी स्वार्थी नहीं बनता, फलका स्वाद लेकर तुरन्त ही उसे पेट-सेठ की बखारमें भेज देता है, वह भी संग्रही नहीं बनता, संग्रही होने पर उसे तुरन्त ही संग्रहणी-रोग लागु हो जाता है, इसलिये वह सभी अंगोंकी पुष्टिके लिए शीघ्र ही उसकी सप्लाई कर देता है। उसी प्रकार ब्राह्मण ज्ञान एवं चारित्र्य द्वारा, क्षत्रिय बल एवं संरक्षण द्वारा, वैश्य धन एवं परोपकार द्वारा तथा शूद्र सेवा एवं सहानुभूति द्वारा परस्पर अभेद भाव रखकर समाजका हित एवं राष्ट्रकी श्रीवृद्धि करते रहें। अपने-अपने स्थान पर सभी श्रेष्ठ हैं, सबका एक-सा महत्त्व है, न कोई ऊंचा है, न कोई नीचा है। पैरमें कांटा गड जाता है तो आंखें रोने लगती हैं, मुख चिल्ला उठता है, हाथ तुरन्त उसको निकाल कर फेंक देता है। उस प्रकार किसी भी वर्णकी कुछ भी क्षति होने पर अन्य वर्णोंको भी व्याकुल होकर तत्पर बनकर उसे हटाना चाहिये। वास्तविक-अभेद भाव समझकर प्रेम एवं सद्भाव बढ़ाना चाहिये।

प्र०—स्वामिन् ! यह वर्ण-भेद जन्मसे है कि—गुणकर्मसे है ?।

उ०—दोनोंसे है, जन्मके लिए भी माता-पिताके शुद्ध-संस्कारों

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की आवश्यकता है. और गुण-कर्मोंकी तो खासकर आवश्यकता है ही। जिनके बिना अपना तथा समाजका कुछ भी हित नहीं हो सकता। इसलिए किसी विद्वान्ने कहा है कि—

'नीचोच्चभावो गुणकर्मजन्यो, न जन्मना कस्यचिदस्ति लोके।
स्तेनोऽपि वाल्मीकिरभून्महर्षिः विप्रोऽपि दैत्यो दशकन्धरोऽभूत् ॥'

अर्थात् लोकमें भी जन्मसे ही कोई ऊंच या नीच नहीं माना जाता. किन्तु गुण-कर्मोंके द्वारा ही ऊंच-नीच भावका व्यवहार होता है। डाकू वाल्मीकि अच्छे गुण-कर्मोंके द्वारा महर्षि हो गया और दूषित-गुणकर्मोंके द्वारा ब्राह्मण-रावण भी दैत्य कहलाया।

प्र०—भगवन्! गुरुदेव! इस समय तो संस्कार एवं गुणकर्म सर्वत्र लुप्तसे हो गए हैं? क्या किया जाय?

उ०—लुप्त हो गये हैं, नष्ट तो नहीं हुए, उन्हें उद्बुद्ध बनाने चाहियें?

प्रश्न—भगवन्! दूसरे देशोंमें तो ऐसा वर्ण-भेद देखनेमें नहीं आता, भारतमें ही वर्ण-भेद क्यों माना जाता है?।

उ०—सभी देशोंमें वर्ण-भेद माना जाता है, परन्तु अपनी-अपनी परिभाषा पृथक्-पृथक् होती है। समस्त जगत्में मनुष्योंकी चार श्रेणी देखनेमें आती हैं। एक श्रेणी वह है-जो विद्यामें, अध्ययनमें, शिक्षाप्रसारमें एवं आध्यात्मिक-शान्तजीवनमें विशेष रुचि रखती है। द्वितीय श्रेणी वाले राज्य-शासनमें, सत्ता-अधिकारमें, राष्ट्र-रक्षणमें विशेष रुचि रखते हैं। तृतीय-श्रेणी वाले धनोपार्जनमें कृषि वाणिज्य विविध-उद्योगोंमें विशेष रुचि रखते हैं। और चतुर्थ श्रेणी वाले लोग परिश्रम-सेवा द्वारा जीवननिर्वाहमें विशेष रुचि रखते हैं। इन श्रेणी वालोंका हमारे यहां क्रमशः नाम हैं, शिक्षक-ब्राह्मण, रक्षक-क्षत्रिय पोषक-वैश्य एवं सेवक शूद्र। इसलिए महाभारतके शान्ति-पर्वमें कहा है कि—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'न विशेषोऽस्ति वर्णानां, सर्वं ब्राह्ममिदं जगत् ।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि, कर्मभिर्वर्णतां गतम् ॥ (१२८।६)

अर्थात् वर्णोंमें स्वाभाविकी कुछ विशेषता नहीं है, यह समस्त जगत् ब्रह्मस्वरूप ही है, ब्रह्मने हो इसे प्रथम सर्जन किया था, कर्मोंके द्वारा ही यह विभिन्न-वर्णताको प्राप्त हुआ है। ऐसा श्रीमद्भागवतमें भी कहा है—

'यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकं।
यदन्यत्रापि दृश्येत, तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥' (७।११।३५)

अर्थात्-जिस मनुष्यका जो जो तत्तद्वर्णाभिव्यञ्जक-लक्षण गुण-कर्मोंके द्वारा कहा गया है, वह यदि अन्यमें देखनेमें आये, तो उसे भी उस-उस नामसे ही निर्दिष्ट करना चाहिये। इस प्रकार गुणकर्मानुसारिणी वर्ण-व्यवस्था-सर्वत्र मानी जाती है।

पलनी, कुत्तालं एवं दक्षिणकाशी ।

मदुरासे हम सब पलनी क्षेत्र गये। यहां कार्तिकेय-स्वामीका पर्वत पर विशाल एवं रमणीय मंदिर है। चारों तरफ प्रदक्षिणा है, यहांसे दूर-दूरका सुन्दर-दृश्य दीखता है। ऊपर चढनेके लिए पत्थरों की सीढियां, तथा अनेक विश्रान्तिस्थान बने हुए हैं। यहां प्रतिदिन दर्शनार्थी कई सहस्र-भक्तोंका आगमन होता रहता है। सीढियों पर चढ़ते हुए भक्त-लोग, मयूर-वाहन वाले षड्मुख-स्वामीको 'हरो-हरो' नामकी द्रुतगतिशालीश्वाससे पुकार लगाते हैं। यहां हम लोग साधु-स्वामीके मठमें ठहरे थे। साधु-स्वामी सच्चे साधु, परोपकारी-उदार हृदय-वीतराग महात्मा हैं। प्रतिदिन-अभ्यागत-साधु गरीब आदि सभी यात्रियोंको प्रेमसे भोजन कराते हैं। कोई भी क्यों न हो ? विष्णु रूप समझकर सबका मधुर एवं विनम्रवाणीसे स्वागत करते हैं। साधु स्वामीजीने बड़ा आग्रह कर पूज्य महामण्डलेश्वर महाराजको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

१५ रोज तक यहां रोके रक्खा। मण्डलीका श्रद्धाके साथ सन्मान सत्कार किया। वे प्रातःकाल प्रस्थानत्रयी-भाष्यके स्वाध्यायमें स्वयं उपस्थित होकर एकाग्रतासे श्रवण करते थे। तथा सायं आरती-आचार्य पुष्पाञ्जलि एवं महिम्न-स्तोत्र पाठमें भी महात्माओंके साथ सम्मिलित होते थे।

यहांसे हम सब कुत्तालं गये। यहां एक मनोहर जल-प्रपात है। पर्वतके ऊपरसे करीब ५०० फुट नीचे जलका प्रवाह, छोटी-सी नदी जितना गिरता रहता है। उसके नीचे खड़े होकर समग्र शरीर पर तेल लगाकर हजारों यात्री-नरनारी स्नान करते हुए बड़े आह्लादका अनुभव करते हैं। समीपमें ही भगवान् शंकरका भव्य सुन्दर मंदिर है। पर्वतके ऊपर भी एक सुन्दर छोटा-सा मंदिर तथा जल प्रपात है। यह बड़ा ही चित्ताकर्षक एकान्त-शान्त-भजन स्थल है। अनेक-विध-हरे भरे वृक्षोंकी घनघटासे यह स्थल, अतीव सुहावना लगता है। यहांका प्राकृतिक सौन्दर्य नेत्र और हृदय दोनोंकी खूब तृप्ति करता है। साधक का चित्त बोल उठता है कि–यहां ही स्थिरतासे बैठकर अपनी साधना को सिद्ध कर लिया जाय, इधर-उधर भटकनेसे क्या होगा?। करीब सात मीलकी दूरी पर एक दूसरा वैसा ही प्रपात है. यहां भी पृथक्-पृथक्रूपसे चार-पांच धाराएँ गिरती रहती हैं। दश मीलकी दूरी पर पर्वत पर कार्तिकेय-स्वामीका एक भव्य मंदिर है।

प्रातःकालमें ही श्रीपूज्य महामण्डलेश्वर-महाराज सहित हम सब महात्मा लोग एवं भण्डारी नौकर आदि भी तीर्थ-देव-दर्शन आदि के लिए चल पड़ते थे, और इधर उधर घूम-घामकर ११॥ बजे तक वापस निवास स्थान पर लौट आते थे। उस समय रामनाथ भण्डारी १५ मिनटमें ही सबके लिए उपमा चाह बनाकर जलपानकी हरिहर कर देता था। पश्चात् वह अपने साथियोंके साथ मिलकर रोटी-भात दाल-शाक आदि भोजन बनानेके लिए प्रवृत्त होता था। भोजन तैयार कर भगवानको भोग लगा कर करीब २॥ बजे भिक्षाके लिए हरिहरकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आवाज लगा देता था। भिक्षाके बाद कुछ आराम कर फिर सायं ४ बजेके करीब तीर्थ दर्शन स्नानादिके लिए चल पड़ते थे, और सायं ६॥ बजे लौट आते थे। पश्चात् आरती-आचार्य पुष्पाञ्जलि आदि होती थी। इस प्रकार प्रायः तीर्थ-भ्रमणमें एक बार ही महात्माओंके लिये भोजन बनता था।

कुत्तालंके समीप ही तीन मीलके फाँसले पर दक्षिण काशी है। यहां भगवती-विशालाक्षी-देवीका तथा विश्वनाथ-भगवान्‌का भव्यमंदिर है। इन सब तीर्थस्थलोंका विधिवत् दर्शन कर हम सब 'अम्बासमुद्र' नामक नगरमें गये। इसके समीप ताम्रपर्णी-नदीके तट पर एक 'पापनाशं' नामका सुन्दर तीर्थ स्थान है। उसके आगे दो मील दूर कल्याण-तीर्थ नामका एक सरोवर है। ऊपरसे जलका प्रपात इसमें गिरता रहता है, और जलप्रवाह भी बहता रहता है। कहते हैं—यहां भगवान् शंकरका पार्वतीके साथ विवाह हुआ था। दक्षिणमें विवाह का नाम कल्याण तथा पत्नीका नाम संसार है। यह पर्वतीय-वृक्षावलि युक्त रमणीय प्रदेश है। इस वनमें ही महात्माओंके लिए वृक्षोंके नीचे परोठा आदिका भोजन बना था, तथा बड़ी २ चट्टानों पर बैठकर सबने भिक्षाकी हरिहर की थी। यहांसे १५ मीलकी दूरी पर ताम्रपर्णी नदीके जलको विशाल बाँध-बांधकर रोका गया है। समीपमें विद्युत् उत्पादन का एक अपने ढंगका विशाल कारखाना भी है। यहांसे अनेक नगर एवं ग्रामोंमें विद्युतकी सप्लाई की जाती है। भक्त-सेठोंने कार-मोटरों के द्वारा इन सभी द्रष्टव्य-स्थलोंका प्रेमसे दर्शन हम सबको कराया था। उस समय एक कारवाले इंग्लिशमैन सेठने धर्मके विषयमें इस प्रकार प्रश्न किये, और पूज्यपाद श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजने ऐसे युक्तियुक्त प्रामाणिक-उत्तर दिये।

प्र०—भगवन् ! महात्मन् ! धर्म क्या है ? उसका पालन क्यों करना चाहिये ?।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उ०—धर्म, सनातन है, समुद्रके समान महान् एवं उदार है, सबको अपनेमें मिलाता है, सबका हित चाहता है। जिसके द्वारा सबको अभ्युदय एवं निःश्रेयसकी प्राप्ति हो, वही धर्म है, इसकी रक्षाके लिए भगवान् इस धराधाम पर बार २ अवतार लेते हैं। अतएव सच्ची शान्ति एवं शाश्वत-सुख धर्मके पालनसे ही प्राप्त होता है। धर्म हमें सच्चारित्र्य एवं संयमकी शिक्षा देता है, जीवन क्षेत्रमें सफल होनेके लिए जिनकी बड़ी आवश्यकता है। एक समय था—जब नीति और चारित्र्यकी शिक्षा पानेके लिए विदेशोंसे लोग भारतमें आते थे। उस समय भारत सबका गुरु था, महान् था, उसका चारित्र्य-बल बहुत ही उन्नत था। आज वही भारत, अपने धर्मकी सच्ची शिक्षासे विमुख होकर सबका गुलाम हो गया है, विदेशियोंका अन्धानुकरण कर रहा है, यह बड़ी शर्मकी बात है, तथा चरित्रहीनताका प्रतीक है।

अब कुछ लोग यह अनुभव कर रहे हैं कि—हमारा पतन हो गया है, और कहते हैं कि—हमें उठना चाहिये। परन्तु प्रश्न यह है कि—उठनेके लिए पहल कौन करे? मैं कहता हूँ कि—पहल अपनेसे ही करनी चाहिये। दूसरोंके दोष न देखकर अपनी ही त्रुटियोंको देखना चाहिये, अपनेको ही सुधारना चाहिये, जब आप अच्छा भला बन गया तो मानो सकल-विश्व अच्छा बन गया। मान लो कि-हम दूसरोंकी भलाई नही कर सकते हैं तो कमसे कम हमें दूसरोंकी बुराई तो नहीं ही करनी चाहिये। हम पूर्ण ब्रह्मचारी नहीं बन सकते हैं तो कमसे कम व्यभिचारी तो नहीं ही होना चाहिये। और हम पूर्ण त्यागी नहीं हो सकते हैं—तो कमसे कम हमें अन्य गरीबोंका शोषण कर धन-कुबेर बननेकी झूठी-तृष्णा तो छोड़ ही देनी चाहिये, यही मानवताकी पुकार है।

प्र०—स्वामिन्! गुरुदेव! धर्मका सामान्य प्रत्यक्ष-गम्य क्या स्वरूप है? जिसे साधारण जन भी समझ सके।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उ०—इसके लिए महाभारतमें कहा है—

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं, श्रुत्वा चावधार्यतां ।
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत् ॥
(अर्थात्) आत्मनश्चानुकूलानि परान् प्रति समाचरेत् ।

धर्मका सार सुनो, और सुनकर धारण करो। जो बातें हमें प्रतिकूल जान पड़ती हैं, उनका अन्योंके प्रति आचरण मत करो, अर्थात् जिन बातोंको हम अपने लिये अनुकूल मानते हैं, उन्हींका ही अन्योंके प्रति प्रयोग करो। इस वचनसे सामान्यतः धर्म एवं अधर्मका प्रत्यक्ष-गम्य स्वरूप सिद्ध हो जाता है। उदाहरण रूपसे समझें कि—आपके समक्ष कोई झूठ बोलता है, आपको कोई ठग जाता है, एवं आपकी कोई निन्दा एवं अपमान करता है, तो आप तुरन्त ही उसके प्रति नाराज हो जाते हैं, उसे आप अच्छा भद्रमानव नहीं समझते हैं। इससे आपने यह प्रामाणित कर दिया कि—झूठ, ठगाई, निन्दा एवं अपमान आपके प्रतिकूल हैं। अतएव ये अधर्मरूप हो गये। तथा कोई सत्य बोलता है, प्रामाणिकताका व्यवहार करता है, किसीकी निन्दा आदि नहीं करता, आप उसकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। इससे सिद्ध होता है कि—सत्य, प्रामाणिकता, एवं निन्दा आदिका अभाव आपके अनुकूल हैं। बस यह धर्म हो गया। तथा किसी दुराचारी एवं दुर्व्यसनी व्यक्तिको देखकर आपके हृदयमें उसके प्रति प्रतिकूल-भाव उठते हैं, एवं सदाचारी एवं संयमी मानवको देखकर उसके प्रति प्रशंसनीय भाव उठते हैं। इससे यह निर्णय हो जाता है कि—दुराचार एवं दुर्व्यसन पाप है, और सदाचार एवं संयम पुण्य है। इस प्रकार आप जिनको प्रतिकूल समझते हैं, उनका अन्योंके प्रति आचरण न करना, किन्तु जिनको आपने अपने लिए अनुकूल समझ लिया है, उनकाही आचरण करना धर्म है। इस प्रकार धर्म एवं अधर्मका निर्णय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आपका क्या ? सबका हृदय ही कर देता है। यहां धर्म अधर्मका प्रत्यक्षगम्य सामान्य स्वरूप है, जिसे सब समझ सकते हैं।

इस प्रकारके उत्तर सुनकर वह कारवाला सेठ बहुत ही प्रसन्न हुआ, और धन्य-धन्य कहने लगा।

पद्मनाभ कन्याकुमारी एवं जनार्दन।

दक्षिण काशीसे रेल-द्वारा पूज्यपाद महामण्डलेश्वरजी महाराज सहित हम सब केरल (मलबार) देशके ट्रावनकोर नगरमें गये। बीचमें गाडीमें बैठे २ ऊंचे २ पर्वतोंका एवं सुन्दर-घटादार-वृक्षोंका हिमालय जैसा शीतल आह्लादक-मनोहर दृश्य देखनेमें आता है। इसी ही नगरमें भगवान् शेषशायी पद्मनाम-विष्णु नारायणका अपने ढंगका विशाल एवं रमणीय मंदिर है। यहांका राजा अपनेको 'पद्मनाभदास' कहलानेमें गौरव मानता है। मंदिरके तीनों ही द्वारोंमें भगवान्के पूर्ण-विग्रहका दर्शन होता है। मंदिरमें जाकर हमने भगवानका अर्चन-वन्दन आदि किया। उस समय पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराज भक्त्युद्रेकवशात् भगवानकी स्तुतिके अनेकों श्लोक बोलने लगे। उनमेंसे ये तीन प्रशस्त-श्लोक सेम्पलके रूपमें यहां प्रदर्शित किये जाते हैं—

कनकरुचिदुकूलः कुण्डलोल्लासिगण्डः,
शमितभुवनभारः कोऽपि लीलावतारः।
त्रिभुवनसुखकारी शेषशायी मुकुन्दः,
परिकलितरमाङ्गो मंगलं नस्तनोतु॥

लक्ष्मीपते! कमलनाभ! सुरेश! विष्णो!,
वैकुण्ठ! कृष्ण! मधुसूदन! पुष्कराक्ष!।
ब्रह्मण्य! केशव! जनार्दन! वासुदेव!
देवेश! देहि कृपणस्य करावलम्बम्॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यो लोकं सकलं पुनाति, निगमा यं प्राहुरेकान्ततो,
व्याप्तं येन जगत्, जगन्ति सततं यस्मै नमस्कुर्वते ।
यस्मादाविरभूदशेषममरा यस्य प्रसादार्थिनो,
यस्मिन्पर्यवसास्यति स्फुरदिदं तस्मै नमो विष्णवे ॥

अर्थात् जिसके सुवर्णकी कान्तिके समान उज्ज्वल-पीत वस्त्र हैं, जिसके गाल कुण्डलोंकी दिव्य-आभासे सुशोभित हैं, जिसने भुवनोंके दुष्ट-राक्षसरूपी भारका शमन किया है। जो कोई लीलामात्रसे ही अवतारवान्-साकार विग्रह वाला बना हुआ है। जो त्रिभुवनको सुखी करता है. एवं जिसके पादादि-अंग, भगवती रमा-लक्ष्मी के द्वारा संमर्दित हैं, अथवा जिसके अंगमें रमा आश्लिष्ट है, ऐसा शेषकी शय्या पर शयन करने वाला भगवान् मुकुन्द-नारायण रमापति, हमारे मंगलोंकी अभिवृद्धि करते रहें। हे लक्ष्मीपते ! हे कमलनाभ ! अर्थात् जिसकी नाभिमें कमल है. हे देवेश्वर ! हे विष्णो ! हे वैकुण्ठ अर्थात् जिसकी अपरिमित-शक्तिमें किसीभी प्रकारका कुण्ठा-प्रतिरोध नहीं है। हे कृष्ण ! हे मधुसूदन ! हे कमलनयन ! हे ब्रह्मण्य ! अर्थात् ब्रह्म यानी वेद एवं ब्राह्मणकी रक्षा करने वाले ! हे केशव ! हे जनार्दन ! हे वासुदेव ! हे देवाधिपते ! मुझ दीनको आप अपने करकमलका कृपया सहारा दीजिये। जो भगवान् विष्णु-नारायण, इस समस्त लोकको अपने पावन-नामादिके द्वारा पवित्र करता है। जिसे समस्त वेदादि शास्त्र, अन्तिम तात्पर्य रूपसे प्रतिपादन करते हैं। जिससे यह निखिल जगत् व्याप्त है। जिसे देवादि-सकल जगत् निरन्तर नमस्कार करता रहता है। जिससे यह अशेष विश्व प्रादुर्भूत हुआ है। बड़े-बड़े इन्द्रादि देव भी जिसकी कृपाकी हरदम अभिलाषा रखते हैं, एवं जिसमें यह नामरूपसे प्रतीयमान सम्पूर्ण विश्व विलीन हो जाता है, उस विश्वात्मा सर्वाधिष्ठान भगवान-विष्णुको मेरा नमस्कार है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पद्मनाभसे हम सब मोटर-बस द्वारा भगवन्नामका संकीर्तन करते हुए एवं 'ॐ नमः पार्वतीपतये' का जय-घोष करते हुए कन्या-कुमारी गये मार्गमें बड़ा ही सुन्दर हरा-भरा दृश्य देखनेको मिलता है। जिधर देखो उधर-नालिकेर, सुपारी, कदली, कालीमिरचकी लताएँ आदिके बगीचे ही बगीचे दीख पड़ते हैं। कन्याकुमारीके तीनों तरफ समुद्र लहरा रहा है। भगवती महाशक्ति-गिरिराजकिशोरी-महेशमुखचन्द्रचकोरीपार्वतीदेवीका यहां कन्यारूपसे अतीव मनोहारी दर्शन होता है। भगवतीके मस्तकमें एवं नासिकामें सुन्दर हीरे देदीप्यमान-दीपकी भांति चमक रहे हैं। भगवती कन्या कुमारीदेवीकी षोडश-वर्षीया-तरुण-कुमारी जैसी अति-सुन्दर-अद्भुत-प्रतिमा है कि-जिसके दर्शनमात्रसे हृदय आपसे आप भक्तिरसमें परिप्लुत हो जाता है। ऐसा भास हो जाता है कि—यह कुमारीदेवी अभी ही हंसकर मधुर-वाणीसे बोल उठेगी। दक्षिणके प्रायः सभी मंदिर ही ऐसे भव्य हैं कि-देवताओंके दर्शन करनेसे पहले ही वे दर्शकोंके हृदयमें एक अपूर्व तृप्ति और शान्ति उत्पन्न कर देते हैं। इनमें प्रवेश करने पर अद्भुत आध्यात्मिकता तथा दिव्य-प्रमोदका भान सहसा हो जाता है। भारत की महान-स्थापत्य कला जिसे देखनी हो, वह दक्षिणके इन मंदिरोंमें प्रत्यक्ष देखी जा सकती है। यह बड़ा ही रमणीय स्थल है। यहां सूर्य एवं चन्द्रका उदयास्त समुद्रमें ही दीख पडता है। अतएव शाकुन्तल-नाटकमें कवि-कुलगुरु कालिदासने कहा है कि—

'यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनां,
आविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां,
लोको नियम्यत इवैष दशान्तरेषु॥

देखिये, एक तरफ पश्चिम दिशामें औषधियोंका पति चन्द्रमा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अस्तमित हो रहा है, तो दूसरी तरफ पूर्व-दिशामें सूर्यदेव अरुणोदय-पूर्वक अपना ज्योतिर्मय स्वरूप प्रकट कर रहा है। इस प्रकार एक साथ ही सूर्य एवं चन्द्ररूप तेजोद्वयकी अभ्युदय एवं पतनरूपी सम्पत्ति और विपत्ति, इस जगत्के प्रति संसारकी अवस्था-विशेषोंमें परिवर्तन शीलता रूप ईश्वरीय-नियमका ज्ञापन कराती हुई-सी दीख रही हैं। अर्थात् इस जगत्में एक ही समयमें किसीका अभ्युदय होता है तो किसीका पतन। इसलिए हमारे समान सम्पत्तिके समय न गर्व करना चाहिये, एवं विपत्तिके समय न शोक करना चाहिये, ऐसा सूर्य और चन्द्र बोधन करते हैं।

कन्याकुमारीसे वापस पद्मनाभ ही आना पड़ता है। मार्गमें शुचीन्द्र-महादेवका अतीव सुन्दर एवं विशाल मन्दिर, तथा नागर कोविलका मंदिर आता है। यहां भी दर्शन करना चाहिये। शुचीन्द्रमें श्रीहनुमान्-महावीरजीकी विशाल-मूर्ति है। और नागर-कोविलमें नागदेवकी मूर्ति है। पद्मनाभसे गाड़ी द्वारा हम लोग जनार्दन गये। यह स्थान भी रमणीय है, एवं समुद्र तट पर है। पद्मनाभके समान यहां भी बम्बई वाले मूलजी जेठाकी धर्मशाला है। जनार्दन विष्णु भगवान् यहां किशोर-वयसे बड़ा ही आकर्षक दिव्य दर्शन देते हैं। समीपमें पत्थरोंके घाट वाला एक बढ़िया सरोवर भी है।

जनार्दनमें किसी बिहारके सद्गृहस्थ यात्री भक्तने इस प्रकार प्रश्न किये, और पूज्य श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजने उनके उत्तर इस प्रकार दिये—

प्र०—भगवन्! इस समय संगठन की बड़ी आवश्यकता है। अतः इसका ही उपदेश देना चाहिये?

उ०—वेदान्तका उपदेश भी संगठन का ही उपदेश है। वेदान्त कहता है कि—तुम, हम, सब एक ही हैं, आपसमें कुछ भी भेद नहीं। सभी शरीरोंमें पांचों भूत भी समान हैं। एक ही धरा धाम पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हम सब बस रहे हैं, एक ही पृथिवी तत्त्वसे सबके शरीरोंकी रचना हुई है. और पुष्टि हो रही है। एक ही जलका सभी समानरूपसे सेवन कर रहे हैं, एक ही सूर्य-चन्द्रादिका प्रकाश पाकर सभी आह्लादित हो रहे हैं, एक ही प्रकारकी जठराग्नि सभी प्राणियोंके उदरमें प्रदीप्त हो रही है और एक ही वायु सबको समानरूपसे जिला रही है। एक ही आकाशरूपी सामियानाके नीचे हम सभी बैठकर आनन्द ले रहे हैं, और समस्त शरीरोंमें एक ही भासक एवं प्रेरक चिदात्मा भी है। इसलिए हमें आपसके ईर्ष्या-द्वेष एवं अभिमान छोड़कर एक बनना चाहिये, नेक होना चाहिये, और प्रेम एवं सद्भाव रखकर मिलकर रहना चाहिये।

अतएव हमारे वैदिक सनातन धर्मका आदेश है कि–मिलने पर हमें दोनों हाथोंकी पांचों अंगुलियां मिलाकर मस्तक झुकाकर परस्पर प्रणाम या अभिवादन करना चाहिये, इसका तात्पर्य है कि–तुम्हारेमें एवं हमारेमें भौतिक-दृष्टिसे या आत्मदृष्टिसे कुछ भेद नहीं, अभेद ही है, अनन्यता ही है। अन्यतामें अभिमान-द्वेषादि दोष रहते हैं, अनन्यतामें नहीं। अपने पर अपनेसे अभिमान कैसा ? द्वेष और वंचकता भी क्योंकर होगी ?। अन्यके प्रति बुरे भाव हो सकते हैं, अनन्य-स्वयंके प्रति नहीं। अतः अनन्यमें प्रेम सद्भाव एवं विनय ही रहती हं। इसलिए विष्णु-पुराणमें कहा है कि—

'एकः समस्तं यदिहास्ति किञ्चित्, तदच्युतो नास्ति परंततोऽन्यत्।
सोऽहं स च त्वं स च सर्वमेतत्, आत्मस्वरूपं त्यज भेदमोहम् ॥'
(२।१६।२३)

यहां जो भी कुछ है, वह सब एक ही है, वही अच्युत-नारायण-भगवान है, उससे व्यतिरिक्त कुछ नहीं। जो मैं हूँ, जो तू है, जो यह सब है, वह आत्मस्वरूप ही है, इसलिए तत्त्वज्ञान द्वारा अज्ञान भ्रान्ति

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का एवं भेदका त्याग कर। एवं वेदान्तके महान् आचार्य भगवत्पाद श्रीशंकर स्वामीने भी यही कहा है—

'त्वयि मयि चान्यत्रैको विष्णुः, व्यर्थं कुप्यसि सर्वसहिष्णुः।
सर्वस्मिन्नपि पश्यात्मानं, सर्वत्रोत्सृज भेदाज्ञानम्। भज गोविन्दं!

तुझमें मुझमें एवं औरोंमें भी एक ही विष्णु-परमात्मा हैं। अतः तू व्यर्थका द्वेष-करना छोड़ दे. सहिष्णु बन, सबमें एक ही आत्माको देख भेद और उसके कारण अज्ञानको छोड़, और प्रेमसे आनन्दसे गोविन्दका भजन कर।

प्र०— भगवन्! कृपानिधान! मनको अमन कैसे बनाया जाय, कृपया इसका कुछ साधन बतलाइये।

उ०—नमन और मननसे मन अमन हो जाता है। नमन और मनन इन दो पदोंमें, न, मन, एवं मन, न ऐसे पदच्छेद द्वारा मनके मनस्त्वका छेदन बोधित होता है। नमनका अर्थ है देहादिके तुच्छ-अहंकारका त्याग, और मननका अर्थ है-सच्चित्सुखघन-सर्वात्मा अद्वय-परब्रह्मका अजस्र अनुसंधान। जब विद्या द्वारा सदानन्द पूर्ण ब्रह्मभावका उदय हो जाता है, तब आविद्यक-मनोभावका अर्थात् विच्छेद हो जाता है। अतएव आचार्य मधुसूदन स्वामीने कहा है—

'सदा सदानन्दपदे निमग्नं, मनो मनोभावमपाकरोति।'

प्रश्न—भगवन्! गुरुदेव! ब्रह्मवेत्ता-जीवन्मुक्तके क्या लक्षण हैं, कृपया बतलाइये।

उत्तर—ब्रह्मवेत्ता-जीवन्मुक्त वह है-जिसके भीतर ब्रह्मभावमयी चिदानन्दपूर्णा परमपावनी-मंदाकिनी गंगा सदा प्रवाहित रहती है। ब्रह्मवेत्तामें देहादिके अहंममभाव, तथा जीवके कर्तृत्व-भोक्तृत्वभाव कभी नहीं रहते। वह मिथ्या संसारके लाभ हानिसे कदापि प्रभावित नहीं होता। तथा मान अपमान, एवं निन्दा स्तुतिसे भी लेशमात्र

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

व्यथित नहीं होता। वह इस नामरूपात्मक-जगत्को देखता हुआ भी नहीं देखता, क्योंकि—उसकी पावन-निर्द्वन्द्व-दृष्टिमें एकमात्र-आनन्दघन ब्रह्म ही भरा हुआ रहता है। इसलिए वह निरन्तर स्तनंधय-बालवत् मस्त-प्रसन्न एवं विकसित-वदन रहता है। वह शरीरकी आवश्यकताओं की भी परवाह नहीं करता। वह सदा निर्भय रहता है। भय उसे होता है, जिसे किसी बातकी कामना हो। ब्रह्मवेत्ता सदा निष्काम एवं पूर्ण-तृप्त है। इच्छा ही भयकी जननी होती है। वह जीनेकी भी इच्छा नहीं रखता, इसलिए वह देहकी मृत्युसे भी भयभीत नहीं होता। तथा वह मानकी एवं स्तुतिकी इच्छा नहीं करता, इसलिए उसे अपमानसे एवं निन्दासे भी भय क्यों होगा ?। वह एक क्षणमात्र भी ब्राह्मी चेतनासे विमुख नहीं रहता। अतएव उसके शरीरका समग्र व्यवहार-खाना पीना आदि लीलामात्र ही होता है। क्योंकि—वह इस संसारमें कदापि स्वारस्य-बुद्धि नहीं रखता, वह इससे असंग-उपरत रहता है। 'मन मगन भया फिर क्यों बोले ?, हंसा मान सरोवर पाया, फिर ताल-तलैया क्यों डोले ?।

प्रश्न—भगवन् ! आचार्यदेव ! संसारमें जहां देखो, वहां, बेचैनी, द्वेष एवं विविध कलह हो रहे हैं, उनकी निवृत्ति कैसे हो ? कुछ उपाय बतलाइये।

उत्तर—इनका कारण खोजना चाहिये, कारण है—अज्ञान और मिथ्याज्ञान। उनकी निवृत्ति जबतक न हो, तबतक इन-उपद्रवोंकी भी निवृत्ति नहीं हो सकती। और इन अज्ञान एवं मिथ्याज्ञानका निवारण करनेके लिए यथार्थ-ज्ञानकी आवश्यकता होती है। जिस प्रकार अन्धकारमें रज्जुको सर्प समझने वालोंके लिए प्रकाशकी ही आवश्यकता होती है, तद्वत्। यदि मनुष्य यह समझ जाय कि—मैं जो वस्तुतः हूँ, वही तो अन्य सब है, ऐसा अनन्य-ज्ञानका प्रकाश प्राप्त कर लेने पर वह संसारके इन सब उपद्रवोंसे शीघ्र ही मुक्त हो जाता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। वेदान्तका एक-अद्वैतवाद ही ऐसा है-कि जो मनुष्यमात्रको एक सूत्रमें पिरोकर, परस्पर प्रेम सद्भाव, एवं सहानुभूति बढ़ाता है, और द्वेष एवं कलहको दूर भगा देता है, जिसका 'एकजीववाद-एकात्मवाद, विश्वको सच्ची शान्ति देनेके लिए पर्याप्त है। वेदान्तकी यही शिक्षा है कि—

यस्तु सर्वाणि भूतानि, आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं, ततो न विजुगुप्सते ॥ (ई० उ०)

जो सब जीवोंको अपने आत्मामें देखता है, और सब जीवोंमें अपने स्वरूपको ही देखता है, उसके अन्दर किसीके प्रति जुगुप्सा (घृणा) निन्दा, द्वेष प्रभृति-कुत्सित भाव नहीं रहते।

अतएव मस्त ज्ञानी सन्त भी तो यही गाते हैं कि—

फकत तफावत है नाम-रूप हीका,
दर असल सब एक ही है यारो ! ।

तिन्नेवेली-पोल्लाची एवं त्रिचुर।

जनार्दन-क्षेत्रसे छोटे–नारायण, बड़े–नारायण, तोताद्रिमठ आदि स्थलों में इधर-उधर घूमधामकर हम सब तिन्नेवेली आये। यह नगर ताम्रपर्णी-नदीके तट पर है, यहां शैवोंकी प्रधानता है। अनेक शिव मंदिर हैं। पूज्य श्रीमहामण्डलेश्वरजी महाराजका यहांके शैव-गृहस्थोंने खूब स्वागत सेवा की। अनेक जलूस निकाले। स्थानीय भक्त नर-नारी 'काशी विश्वनाथ महादेव की जय' 'श्रीमहामण्डलेश्वर महाराजकी जय' की जयध्वनि प्रेमसे पुकारते थे। यहांके शैव भी कुछ वैष्णवोंके समान कट्टर दिखाई दिये। जिस प्रकार कुछ वैष्णवमानी शिवनाम लेनेमें हिचकते हैं, उस प्रकार यहांके शैव भी विष्णु राम-कृष्ण आदिके नाम लेनेमें संकोच रखते हैं। यहां भी हम दश दिन रहे, ताम्रपर्णी-नदीका तट बड़ा ही सुहावना है, इस पावन नदीमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कमर भर स्वच्छ जल बहता था, इसलिए स्नान करनेमें बड़ा ही आनन्द आता था।

यहांसे पुनः मदुरा होकर वहां कुछ रोज ठहरकर हम सबने आद्य जगद्गुरु-भगवत्पाद श्रीशंकर स्वामीकी जन्म-भूमि कालटीके लिए प्रस्थान किया। बीचमें पोल्लाची नगरमें दो रोज एक भावुक-धनी भक्तके यहां ठहरे। पोल्लाचीसे मोटर द्वारा मलबारदेशके त्रिचुर नगरमें गये। यहां दो घण्टा मोटरने विश्रान्ति ली। बारह बजे महात्माओंने भी एकान्तमें जाकर कुछ जल-पान करनेका विचार किया। साथमें पोल्लाचीसे ही लड्डू पूरी शाक आदि बनाकर लाये थे। किसीने बताया—देखो सामने ही भगवान् शंकरका अतीव विशाल मंदिर है। वहां जाइये, एकान्त स्थान मिल जायगा। हम सब पूज्य महा-मण्डलेश्वर महाराज सहित 'ॐ नमः पार्वतीपतये' के जय-घोषके साथ वहां पहुँच गये। मंदिरके द्वार पर जाते ही वहांके एक द्वारपाल-ब्राह्मणने हम सबको रोक दिया, भीतर नहीं जाने दिया। उसको तथा अन्यान्य-मंदिरके अधिकारियोंको हमारे साथके सोमेश्वर भट्ट आदिने तामिल-भाषामें खूब समझाया, और परिचय भी दिया कि—ये काशी-हरिद्वारके परिव्राजकाचार्य-महापण्डित-महामण्डलेश्वर महाराज हैं, तमाम वेदादि-शास्त्रोंके विद्वान् हैं काशी हरिद्वारके अद्वैत शांकर-मठोंके ये अध्यक्ष हैं। इनके साथमें ५० के करीब योग्य-विद्वान् सदाचारी यति ब्रह्मचारी शिष्यवर्ग है, यात्राके लिए कालटी तीर्थ मोटर द्वारा जा रहे हैं केवल जलपानके लिए इन्हें एकान्त स्थल की आव-श्यकता है, वृक्षकी एकान्त-छायामें एक घण्टा बैठकर वापस चले जायेंगे, ये महानुभाव आपके अतिथि हैं, इनका सत्कार करना आपका धार्मिक कर्तव्य है. आप लोगोंसे ये और कुछ नहीं मांगते, आपके विशाल मंदिरका एकान्त-वृक्षकी छाया एक घण्टाके लिए माँगते हैं। तब तक हम सब धूपमें करीब १५-२० मिनट द्वार पर ही खड़े रहे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारी मण्डलीमें एक दण्डी महात्मा भी थे-वे अपने दण्डका बार २ प्रदर्शन भी करते रहे। तथापि यहांके दुराग्रही-अहंमन्य लोगों ने मंदिरके भीतर जाने ही नहीं दिया। कुछ महात्मा लोग उत्तेजित हो उठे, उस समय पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराजने उनको शान्त किया, और प्रसन्नता भरी भव्य-गंभीर मुख-मुद्रासे हम सबको कहा-भीतर जानेके लिए जबरदस्ती मत करो, ये लोग भीतर नहीं जाने देना चाहते हैं तो वहां क्यों जाना चाहिये ?। देखो ! इस द्वारके सामने ही एक विशाल पिप्पलकी छाया वाला चौतरा है, उसके ऊपर बैठकर जल-पान शुरू करो। उसके कुछ दूर पर ही बाजार था। अतः इस चौतरेके पास लोगोंकी बड़ी भीड़ जमा हो गई। भण्डारी रामनाथ महात्माओंको पत्तलोंमें पूरी लड्डू आदि बांटने लगा तो इधर पूज्य श्रीमहामण्डलेश्वर महाराज स्वयं ही अपने पावन कर कमलों द्वारा-चारों तरफ घेर कर देखने वाली जनताको प्रेमसे हंसते हुए एक-एक पूरी एवं एक-एक लड्डू बांटने लगे। यहांके लोग भी खड़े २ हो उसी समय हिन्दुस्थानी लड्डू पूरी मजेके साथ खाने लगे। और अपनी गुड-गुड भाषामें क्या जाने क्या ? एक दूसरोंके प्रति नेत्रादिओंका इशारा करते हुए-बोलते रहे। मंदिरके अधिकारी-ब्राह्मणगण भी बाहर निकल कर यह तमाशा देखने लगा।

उसी समय एकवृद्ध-महात्मा अन्य महात्माओंके प्रति इस प्रकार कहने लगे कि-देखोजी ! केरल देशके ये पुजारी ब्राह्मण-लोग कितने कूप-मण्डुक-संकुचित हृदयके एवं निष्ठुर-प्रकृति के हैं। इतना समझाने पर भी इन लोगोंने अपना दुराग्रह नहीं छोड़ा, क्या ये सनातन-धर्मी कहे जा सकते हैं ?, सनातन-धर्म कितना उदार एवं महान् धर्म है, वह अतिथि-सत्कार का कितना बड़ा महत्त्व बतलाता है। हमलोगों को इन्होंने क्या समझ रक्खा है ?। एक महात्माने कहा-जाने दो जी, ये वे ही ब्राह्मणोंके वंशज हैं, जिन्होंने अपने ही देशमें एवं वंशमें प्रकट

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होने वाले महाविद्वान् साक्षात् कैलासपति-शंकर के अवतार, भगवत्पाद-आचार्यस्वामीको माताके दाहके लिये मांगने पर भी अग्नि नहीं दी थी, अतएव आचार्य महाराज ने इस अवज्ञाके फलरूप कुपित होकर श्राप भी दिया था। इसलिये ये कहां से अच्छे होंगे ?, जैसे बाप, वैसे बेटे। महापुरुषों की अवज्ञा पुण्य यश एवं आयु का नाश कर देती है। इन्हीं धर्मके ठेकेदार-पुजारी- ब्राह्मणोंके घृणाभाव से ही इस देशके गरीब-हिन्दु-लोग कई लाखोंकी तादादमें ईसाई हो चुके हैं। और दनादन हो रहे हैं। उसी समय हमारे दण्डी जी महाराज बोल उठे कि-हमारे उत्तर-भारतके मंदिरोंवाले पुजारी-ब्राह्मण, इतने उदार विनय शील एवं सरस प्रकृति के होते हैं कि–किसी भी देश का कोई भी साधु क्यों न हो, ? वैरागी संन्यासी उदासी आदि—मन्दिर में जाने पर वह उन ब्राह्मणोंके द्वारा बड़ा सन्मान पायगा, साधु भोजन मांगेगा तो तुरन्त ही उसे पवित्र-भोजन खिलायेंगे, अनुकूल आश्रय देंगे उसके सामने हाथ जोड़कर नम्रता प्रदर्शित करेंगे औरों की तो क्या बात ? परन्तु इस मलबार देशके सैकड़ों नहीं, हजारोंकी तादाद में साधु लोग, उत्तर-भारत के अनेकों मठ-मंदिरों में आनन्द के साथ सम्मान-पूर्वक आश्रय पाकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। देखो ! इन दोनों के बीच में कितना जमीन आसमान-सा अन्तर है।

इस प्रकार के संवाद सिलसिले में पूज्य श्री महामण्डलेश्वरजी महाराज ने उपेक्षाके स्वर में कहा कि–सन्तो ! जाने दो, इस बात को, ऐसा ही संसार है। संसार में सभी प्रकार के लोग बसते हैं, अच्छे से अच्छे भी होते हैं, और रद्दी से रद्दी भी। संसार में गुणदोष-दृष्टि रखनी ही–रागद्वेष की जननी होने के कारण-दोष है। गुण-दोष-उभय दृष्टिका त्याग ही एकमात्र गुण है। चतुर्थाश्रमी संन्यासी को जगत् के सभी इष्टानिष्ट-दृश्य में एवं प्रसंग में रागद्वेषवाली तुच्छदृष्टि रखनी ही नहींचाहिये, किन्तु प्रयत्नतः गुणदोष की नितान्त-उपेक्षाकर समभाव-वाली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्दमयी- अविकृत-ब्रह्मदृष्टि ही सम्पादन करनी चाहिये । श्री पूज्य स्वामी जी महाराज का ऐसा पावन एवं हितकर उपदेश सुनकर सभी महात्मा सन्तुष्ट हुए-और दण्डी जी महाराज भी ठीक है, अच्छा है, ऐसा बोलते हुए कान पकडने लगे । इतने में वे दोनों बसें होर्न बजाती हुई वहां ही आगई, और सभी महात्मालोग 'ॐ नमः पार्वतीपतये' का जय घोर करते हुए बसों पर सवार होकर कालटी तीर्थ की ओर चल पड़े ।

कालटी-तीर्थ

जगद्गुरु-भगवत्पाद-आद्य-आचार्य श्रीशंकर-स्वामी जी की यह पावन-जन्म-भूमि है । यहां अपने सब स्वामी आगमानन्द जी के मठ में ठहरे । यहां स्वच्छ एवं मधुर-सलिला-पूर्णा नदी बहती है, इस का तट बड़ा ही सुन्दर हरा-भरा है । नदीके तटपर ही भगवान-श्याम सुन्दर-श्रीकृष्णचन्द्र का रम्य मन्दिर है । कहते हैं-इसी कृष्ण-मूर्तिको आचार्य भगवत्पाद ने अपने पावन करकमलों द्वारा प्रतिष्ठित की थी । आचार्यपाद श्रीकृष्णके अनन्य भक्त थे, भगवान् के दिव्य-सुन्दरतम-साकार-विग्रह का ध्यान किया करते थे । आचार्य-शंकरका अद्वय-ज्ञान भक्ति से ओत प्रोत है । उन्होंने ज्ञान के साथ कर्मके सम-समुच्चयका खंडन किया है, पर प्रेम-भक्ति का कहीं भी विरोध नहीं किया । क्योंकि-भक्ति क्रियारूपा नहीं है,किन्तु भावरूपा है । और श्रुतियोंमें एवं स्मृतियोंमें ईश्वर-प्रणिधान (भक्ति) का अनुशासन प्रसिद्ध है । आचार्य स्वामी-श्रौत-स्मार्त थे । अतएव भगवान् श्रीकृष्णके साकार-विग्रहमें भाष्यकार आचार्य शंकर की अटूट-श्रद्धाभक्ति थी । प्रबोध-सुधाकरके-निम्न-लिखित श्लोकों से यह बात सिद्ध होती है ।

कन्दर्पकोटिसुभगं, वांछितफलदं दयार्णवं कृष्णम् ।
त्यक्त्वा कमन्यविषयं नेत्रयुगं दृष्टुमुत्सहते ॥

जो करोड़ों-कामदेवोंसे भी सुन्दर हैं, वांछित-फलके देने वाले

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं, दया के समुद्र हैं, उन श्रीकृष्ण-चन्द्र को छोड़कर ये नेत्रयुगल, और किस विषय को देखने के लिए उत्सुक होते हैं।

चेतश्चञ्चलतां विहाय पुरतः सन्धाय कोटिद्वयं,
तत्रैकत्र निधेहि सर्वविषयानन्यत्र च श्रीपतिम्।
विश्रान्तिर्हितमप्यहो क्व नु तयोर्मध्ये तदालोच्यतां,
युक्त्या वाऽनुभवेन यत्र परमानन्दश्च तत्सेव्यताम्॥

अरे चित्त! चञ्चलता छोड़कर अपने सामने तराजू के दोनों पलड़ों को रख, उनमें से एकमें समस्त विषयों को, और दूसरेमें भगवान् श्रीपति कृष्णको रख। उन दोनों में से किसमें अधिक शान्ति और हित-कल्याण है, इसका विचार कर, और युक्ति तथा अनुभवसे जिसमें परमानन्द की प्रतीति हो, उसीका सेवन कर।

कृपापात्रं यस्य त्रिपुररिपुरम्भोजवसतिः,
सुता जह्नोः पूता चरणनखनिर्णेजनजलम्।
प्रदानं वा यस्य त्रिभुवनपतित्वं विभुरपि,
निदानं सोऽस्माकं जयति कुलदेवो यदुपतिः॥

त्रिपुरारि-शिव और कमलासन-ब्रह्मा, जिनकी कृपाके पात्र हैं, परम पावन श्रीगंगाजी जिनके चरण-नखका धोवन (चरणामृत) है, तथा त्रिभुवनका अधिपतित्व जिनका दान है, वे सर्वव्यापक और हम सबके आदिकारण तथा हमारे कुलदेवता यदुनाथ हैं, ऐसे श्रीकृष्ण-चन्द्र सदाविजयी हो रहे हैं।

इस प्रकार प्रबोधसुधाकर-ग्रन्थमें श्रीकृष्णके दिव्यबाल-स्वरूप का वर्णन करते हुए आचार्य श्री शङ्कर-भगवत्पादने श्रीकृष्ण की बड़ी ही मार्मिक-स्तुति की है।

कृष्ण मन्दिर के समीप ही आचार्य-भगवत्पाद शंकरके तथा मातेश्वरी शारदा-भगवतीके बड़े ही सुन्दर-मन्दिर हैं। इन सभी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मंदिरोंमें जाकर श्री पूज्यमहामण्डलेश्वर जी महाराज सहित हम सब ने, दर्शन-अर्चन वन्दन आदि विधिवत् किये। उस समय भक्तिविह्वल हृदयसे श्रीस्वामी जी महाराज कई बार यह श्लोक बोलने लगे—

शास्त्रं अद्वैत-मीमांसा, देवी मे शारदाऽम्बिका।
आचार्याः शङ्कराचार्य्याः सन्तु मे जन्मजन्मनि॥

भगवत्पादके मंदिर में बैठकर श्रीपूज्य मण्डलेश्वर महाराज, आचार्य स्वामीजीके जीवनवृत्तका आश्चर्यरूपसे संक्षेपतः इसप्रकार परिचल देने लगे कि—

अष्टवर्षे चतुर्वेदी, द्वादशे सर्वशास्त्रवित्।
षोडशे कृतवान् भाष्यं, द्वात्रिंशे मुनिरभ्यगात्॥

अष्टम-वर्ष में ही चारों-वेदों का अध्ययन, बारहवें वषमें समग्र-शास्त्रों की अभिज्ञता, षोडशवर्षमें भाष्य रचना, यह सचमुच आश्चर्य-परम्परा है। और ३२ वर्ष की वयमें आचार्य भगवान् कैलासधाम पधार गये।

आचार्य-महाराजमें अलौकिक-मेधाशक्ति, एवं अद्भुत-कवित्व-कौशल था, उनका निर्द्वन्द्व-निर्भय-कर्मठ-जीवन था। उन्होंने संन्या-सियोंकी संघरूपसे प्रतिष्ठा, तथा अनेक मठोंकी स्थापना की। वैदिक-सनातन आर्य-धर्मकी पुनः प्रतिष्ठा विशिष्ट-जाग्रति, एवं श्रीवृद्धि की। आचार्य-स्वामीने प्रस्थानत्रयीके प्रसन्न-गंभीर नितान्त श्लाघनीय भाष्यों की, तथा अनेक छोटे-बड़े ग्रन्थोंकी एवं विविध स्तोत्रों की रचनाकर विश्वका महान्-उपकार किया है। आचार्य महाराज केवल महान् ब्रह्मवेत्ता ही थे, यह बात नहीं, किन्तु साथमें महान् योगेश्वर भी थे। कैलासपति-भगवान् शंकरके साक्षात् अवतार थे।

अहो! धन्यातिधन्य है-उस महापुरुषके शान्त-संयमी-तपस्वी-विश्व-हितकर-दिव्य-प्रभावशाली-जीवनको, जिन्होंने अत्यल्प-समयमें ही विपक्षी-दलसे समाक्रान्त-वैदिक सनातनधर्मरूपी वाटिकाकी रक्षा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को, एवं अपने प्रशंसनीय-अद्भुत-प्रभावसे इसे हरी-भरी करके श्रुति गुह्य रहस्यमय-रत्नोंसे समलंकृत कर दी।

उस समय पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज द्वारा कहे गये-आचार्य महाराजकी स्तुतिके ये दो प्रशस्त श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय लगे, वे ये हैं—

वेदान्तार्थविभासकाय गुरवे शान्ताय संन्यासिने,
नानावादिनगेन्द्रसंघपवये, योगीन्द्रवन्द्याय च।
मोहध्वान्तदिवाकराय भगवत्पादाभिधां बिभृते,
तस्मै भाष्यकृते नमोऽस्तु सततं पूर्णाय बोधात्मने॥
विदिताखिलशास्त्रसुधाजलधे !, महितोपनिषत्कथितार्थनिधे !।
हृदये कलये विमलं चरणं, भव शंकरदेशिक ! मे शरणम्॥

जो वेदान्तार्थके विभासक शान्त-संन्यासी गुरु हैं, अनेक प्रतिवादी रूपी-पर्वतोंके संघको नष्ट करने वाले महान-वज्ररूप हैं, श्रेष्ठ योगियोंके द्वारा वन्दनीय हैं, मोहरूपी-अन्धकारके नाशक दिवाकर सूर्य हैं, एवं भगवत्पाद ऐसे नामको धारण करनेवाले पूर्ण-बोधरूप हैं, ऐसे भाष्यकार आचार्य महाराजको सतत मेरा नमस्कार हो। जो समस्तवेदादि शास्त्ररूप-अमृतमय-सागरोंके अभिज्ञाता हैं, पूजनीय-उपनिषदोंके वास्तविक-अर्थोंके उपदेशकी निधि हैं, ऐसे आचार्य शकर के विमल-चरणोंका मैं ध्यान करता हूँ, और उनकी कल्याणकारी शरणागतिकी प्रार्थना करता हूं।

आचार्यके मंदिरके समीप ही नदी पर एक अच्छा पत्थरोंका पक्का घाट है। कहते हैं कि-इसी ही स्थल पर अपनी स्नेहवत्सला माता जीसे संन्यासकी अनुमतिके लिए-बालक शंकरने एक विचित्र लीलाका प्रदर्शन किया था। स्नान करते समय एक कल्पित मगर आता है, और बालक-शंकरका सहसा पैर पकड़ कर नदीके मध्यमें ले जाता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है, वहां बालक-शंकर चिल्लाता है, और माताको पुकार कर कहता है कि—अम्ब ! देख, यह दुष्ट मगर मुझे पकड कर ले जा रहा है, मुझे इससे शीघ्र छुड़ा। माता ऐसा आकस्मिक दृश्य देखकर अतिविह्वल हो—चिल्ला उठती है, और शीघ्र सहायताके लिए तथा बालककी रक्षाके लिए पुकारती है, परन्तु जब कोई नहीं आता है, तब धीरेसे बालक-शंकर मातासे कहता है कि—मातः ! यह मगर-कहता है कि—यदि तेरी माता, तुझे संन्यासी होनेकी आज्ञा दे, तो मैं तुझे जीवित छोड़ सकता हूँ। माताने शीघ्र ही 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।' इस न्यायके अनुसार कह दिया कि—अच्छा ! पुत्र ! मैं तुझे संन्यासकी अनुमति देती हूँ, यदि तुझे मगर छोड़ देता है तो। माताके ऐसा कहने पर मगर गायब हो जाता है, और बालक-शंकर शीघ्र ही तट पर आ जाता है। उस समय बालक-शंकर अपनी माताजीसे कहता है कि—माताजी ! अब आप अपने वचनको सत्य कीजिये, और मुझे संन्यासी होने की अनुमति दीजिये। माता तुरन्त ही अपने-प्रिय-पुत्र-शंकरको दोनों हाथोंसे उठाकर छातीसे लगाकर मोह-वश कहती है-नहीं, नहीं, तात ! तू मेरा इकलौता पुत्र है, तेरे बिना मैं जीवित कैसे रह सकती हूँ ? अतः मैं तुझे किसी भी प्रकार यहांसे जाने नहीं दूंगी। उस समय बालक-शंकरने माताके मोह निवारणार्थ इस प्रकार बड़ा ही मार्मिक उपदेश दिया था—

प्रबलानिलवेगवेल्लितध्वजचीनांशुककोटिचञ्चले।
अपि मूढमतिः कलेवरे कुरुते कः स्थिरबुद्धिमम्बिके ! ॥
कति नाम सुता न लालिताः, कति वा नेह वधूरभुञ्जि हि।
क्व नु ते क्व च ताः क्व वा वयं, भवसङ्गः खलु पान्थसंगमः ॥
भ्रमतां भववर्त्मनि भ्रमान्न हि किञ्चित् सुखमम्ब ! लक्षये।
तदगाप्य चतुर्थमाश्रमं प्रयतिष्ये भवबन्धमुक्तये ॥

(शंकर-दिग्विजय)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थात् वह कौन मूर्ख है ? जो आंधीके वेगसे हिलाये गये चीनी-अंशुक (चीनदेशका पतला रेशमी वस्त्र) की ध्वजाके कोनेके समान चंचल इस क्षणभंगुर शरीरमें स्थिरताकी भावना करता है, अर्थात् इस अनित्य शरीरको जो नित्य मानता है, वह मूर्ख ही माना जाता है। देख, विचार कर, अनेक-जन्मजन्मान्तरोंमें इस जीवने कितने पुत्रोंका लालन-पालन नहीं किया ?, कितनी स्त्रियोंका भोग नहीं किया गया, अब वे लड़के कहां, वे स्त्रियां कहां ?, और हम कहां ?। इस संसारमें एक दूसरोंका समागम मुसाफिरोंके मिलने-जुलनेके समान है। इस भवमार्गमें अविद्या-भ्रमसे भ्रमण करने वाले मनुष्योंको कुछ भी शाश्वत-सुख मिलता दीखता नहीं । इसलिये मैं चतुर्थ-आश्रम-संन्यासको ग्रहण कर भवबन्धनसे मुक्ति पानेके लिये प्रयत्न करूंगा।

इस प्रकार के उपदेश से बालक-शंकरने माताको मोह-शोक रहित बनाकर, संन्यासकी अनुमति प्राप्त की थी।

प्रतिदिन श्रीमहामण्डलेश्वरमहाराज मध्यान्ह २॥ बजे नियमतः शौच जाकर स्नान करते हैं। श्रीस्वामीजी को जल में तैरना बड़ा अच्छा आता है। कभी कभी गहरे जलमें निश्चेष्ट होकर हाथ-पैर शिर एवं उदर सीधा रखकर तखतपर लेटने के समान घण्टों लेट जाते हैं। ऐसा देखकर बड़ा आश्चर्य मालूम होता है एक रोज स्वामी जी, सेवक महात्मा स्वामी रामानन्दजी के साथ पूर्णा-नदीपर स्नान के लिए गये, सहसा कपड़े उतार कर नदी में कूद पड़े, और उस महात्मा से कहा-कि-मैं तैरकर सामने पार जाता हूँ, चार घन्टे के बाद लौटुंगा, दिगम्बर-वेश में चार-पांच मील घूम आऊंगा। मेरे पीछे कोई मत आना। स्वामीजी महाराजने वहां से लौटकर सुनाया कि-बावाजीका ऐसा हृष्ट-पुष्ट तगडा पहलवान जैसा शरीर-जिसमें सिर्फ कौपीनही लगी हुई थी-देखकर कई सैकड़ों आदमी पीछे पीछे-चलने लग गये थे। पांच मील के बाद एक ग्रामके समीप एकान्त स्थल पर मैं बैठ गया। ग्रामके तथा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इधर-उधर के कई लोग वहां जमा हो गये। कोई आकर सामने केला रखता है, कोई नारियल तो कोई कुछ परन्तु मस्त-बाबा जी किसी से कुछ भी नहीं बोलता, न किसी के सामने ही देखता है। लोग बड़े विस्मित थे कि-इतना मोटा-ताजा बाबा यहां अकस्मात् किधर से टपक पड़ा। लोग अपनी गुड़-गुड़ भाषामें कुछ न कुछ अनुमान लगाकर बाबा के विषय में बोलते थे। पौन घन्टा बैठकर फिर मैं वहां से चल पड़ा। लोग पीछा नहीं छोड़ते थे। जब मैं दूर निकल गया, तब मुश्किल से लोग वापस लौटे।

यहां एक शंकरन् नम्बुद्रि नामका अध्यापक मिला। वह इस देशकी सामाजिक-रीति-रिवाज की बातें बताने लगा। उसने कहाकि-यहांके ब्राह्मण, असवर्ण-नायर-कन्याओंसे भी विवाह करते हैं विवाहित लड़कियां अपने माता पिताके ही घर रहती हैं, पति के घर नहीं जातीं, उनका पति महेमानके रूपमें कुछ रोज के लिए वहां आता जाता रहता है। लड़का माताकी जातिका कहलाता है। ब्राह्मण-पिताका लड़का ब्राह्मण नहीं कहा जाता। उस समय वहां एक विद्यार्थी लड़केने कहा कि-मेरा पिता मैनन है तो मैं पनिकर हूँ मैनन पानिकर आदि नायरों की विशेष संज्ञाएं हैं। लड़के की बात सुनकर कुछ महात्मा हँसने लगे, एक महात्मा उसकी बात काटते हुए आश्चर्य से कहने लगे कि-ऐसा कभी हो सकता है-पिता हो कुछ और, और पुत्र हो कुछ और। पिता-पुत्र में जातीयताकी विषमता कैसे हो सकती है ?। तब शंकरन् नम्बुद्रि ने कहा कि- इस देशमें ऐसा ही होता है-पिता होता-है- यज्ञोपवीतधारी ब्राह्मण, और पुत्र होता है-यज्ञोपवीतरहित ब्राह्मणेतर नायर। और यहां पिता की सम्पत्ति का मालिक पुत्र नहीं होता, किन्तु मामा की सम्पत्ति का मालिक भानजा होता है, मामा अपने भानजों को पालता है, पिता नहीं। औरों की तो क्या बात ?, किन्तु त्रावनकोर आदिके राजाओं में भी ऐसी ही प्रथा है। राजाकी गद्दी पर उसकाबेटा नहीं बैठसकता, किन्तु उसका भानजा गद्दीपर बैठकर राजाहो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सकता है। राज-कन्याओं का भी वहां के ब्राह्मणों से विवाह होता है। राजा की बहिन ही रानी नाम से कही जाती है, परन्तु उसका पति कोई ब्राह्मण होता है।

उसकी ऐसी बातें सुनकर पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज मुस्कराते हुए कहने लगे कि–सन्तो! संसार ऐसा ही होता है, जिसकी एक-सी स्थिति नहीं, और जिसमें एक-सी व्यवस्था नहीं। 'मायायां सर्वसम्भवात्' वेदान्त का यह प्रसिद्ध न्याय है, अर्थात् मायिक-जगत् में घटित-अघटित सब कुछ सम्भव हो सकता है, इसमें आश्चर्य की क्या बात है? अतएव नैषधीय-काव्य में कहा है—

भिन्नस्पृहाणां प्रति चार्थमर्थं, द्विष्टत्वमिष्टत्वमपव्यवस्थम्।

अर्थात् लोगोंकी स्पृहाएँ पृथक्-पृथक् होती हैं। अतएव कोई किसी पदार्थको अच्छा समझता है तो कोई उसी ही को खराब कहता है। अतः जगत्में कोई भी ऐसी दृढ़ व्यवस्था नहीं है कि–एक व्यक्ति को अच्छी लगने वाली बात, अन्य व्यक्तिको अच्छी ही लगनी चाहिये।

कोयंबत्तुर एवं मैसूर।

कालटी क्षेत्रकी विधिवत् यात्रा करके वहांसे पांच मील पैदल चलकर हम सब 'इचमाली' स्टेशनसे गाड़ी पर सवार होकर कोयंबत्तुर-नगरमें आये। यहां श्रीमान् पलनीवाले साधु-स्वामीजीने किसी धार्मिक-सेवक सद्गृहस्थके एकान्त-बंगलेमें हम सबके निवासके लिए आगेसे ही प्रबन्ध कर रक्खा था। यहां हम पांच दिन रहे, प्रतिदिन शास्त्रचर्चा-सत्संग आदि होता रहा। इस नगरके बाहर एकान्तस्थल पर भगवान् आशुतोष श्रीशंकरका भव्य-विशाल मंदिर है। समीपमें एक छोटी-सी नदी भी बहती है। वहां जाकर हमने स्नानादि किया, और मंदिरके दर्शन भी किये।

यहांसे हम सब मोटर द्वारा मैसुर गये। वहां स्वामी श्रीशंकरा-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नन्द-भारतीजीके गीता-सदनमें ठहरे। स्वामीजीने आगेसे प्रेम-भरा आमन्त्रण दे रक्खा था। स्वामीजी मैसुरमें एवं समीपस्थ अनेक-स्थलोंमें गीताका अच्छा प्रचार करते हैं। स्वामी शंकरानन्द भारती जी संस्कृतके अच्छे विद्वान् एवं कवि हैं। नम्रता एवं विनयकी साक्षात् मूर्ति हैं। यहां पर भी पूज्य महामण्डलेश्वर महाराजका गीता पर प्रवचन होता रहा। स्वामी शंकरानन्द-भारतीजीने पूज्यपाद-महामण्डलेश्वरजी महाराजकी स्तुतिके अनेक-प्रशस्त-श्लोक तत्काल बनाकर सभामें सुनाये। उनमेंसे ये दो श्लोक सेम्पलरूपसे यहां दिये जाते हैं –

वेदे वेदाङ्गराशौ स्मृतिवरनिचये दर्शने चेतिहासे,
व्यासोक्ते सत्पुराणे सुकृतिकृतिचये सर्वराद्धान्तसिन्धौ।
स्नाता धीर्यस्य सारग्रहणपरवशा शुद्धसत्त्वाभिरामा,
सोऽय राराजते श्रीयतिवरतिलको मण्डलेशो महेशः ॥
निष्पीड्याखिलवेदशास्त्रमसकृत्सम्पाद्य सारामृतं,
संयोज्यामलयुक्तिमाक्षिकरसं दर्व्या स्ववाण्या तु यः ॥
अर्थिभ्यः सततं ददाति सुकृती निर्व्याजकारुण्यतः,
सोऽयं संयमिराट् महेश्वरयति देंदीप्यते संसदि ॥

अर्थात् वेदोंमें, तदङ्ग-निरुक्त आदिके समुदायमें, स्मृतियोंमें, दर्शन-शास्त्रोंमें, भारतादि-इतिहासोंमें, व्यास-प्रणीत अनेक पुराणोंमें, अच्छे यशस्वी आचार्यों की भाष्य-वार्तिक आदि कृतियोंमें, तथा अन्यान्य-समस्त सिद्धान्त-सागरमें जिनकी प्रज्ञा अन्तर्निहित होकर, सारतत्त्व को ग्रहणकर शुद्ध-ज्ञानके प्रकाशसे सदा परम प्रसन्न रहती है, ऐसे वे यतिवरोंमें श्रेष्ठ-महामण्डलेश्वर-ज्ञानमूर्ति- आचार्यपाद श्रीमान् महेश्वर-स्वामी सभामें अत्यन्त-प्रभावशाली-व्यक्तित्व के साथ विराजमान हो रहे हैं। अखिल-वेदादि शास्त्रों का बार बार आलोचन रूप निष्पीडन करके प्राप्त किये हुए-सारामृत को निर्मल-युक्तिरूपी मधुसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संयुक्त करके, अपनी वाणीरूपी कड़छी से जो पुण्यवान् महापुरुष, अपनी निर्निमित्त करुणाद्वारा-अर्थी-जिज्ञासुओं को निरन्तर देते रहते हैं। वे ही ये संयमी-यतियों के महाराजा-महामण्डलेश्वर-पूज्य-महेश्वरयति, इस सभामें अपनी श्रद्धास्पद-तेजस्विनी-आभाद्वारा देदीप्यमान हो रहे हैं।

मैसूर-नगरके बाहर-चामुण्डा-पर्वत की उपत्यका (तलहट्टी) में श्रीपद्मनाभ स्वामी का एकान्त स्थलपर बड़ा ही सुन्दर आश्रम बना हुआ है पद्मनाभ-स्वामी को जब यह मालूम हुआ कि-मैसूर में श्री महामण्डलेश्वर महाराज पधारे हैं, तब तुरन्त ही वे अपने भक्त समुदाय के साथ फल-फूल माला आदि लेकर दर्शनार्थ वहां गीता-सदन में पधारे। और आग्रह करने लगे कि-मेरे उस आश्रम में आप पांच दिन के लिए अवश्य पधारिये। आपकी तथा सभी सन्तों की चरण-धूलिसे उसे अवश्य ही पवित्र कीजिये। मैं विश्वास करता हूँ कि-मुझ अकिञ्चन के इस आमन्त्रणको आप उदाराशय-महापुरुष अवश्य ही स्वीकार करेंगे। इसलिये सौजन्य-मूर्ति-वीतराग-वयोवृद्ध-ब्रह्मनिष्ठ-पद्मनाभ स्वामीजी का यह प्रेमभरा हुआ आमन्त्रण स्वीकृत हो गया। और हम सब पूज्य श्री महामण्डलेश्वर जी महाराज सहित उस आश्रम में पांच-दिन रहे। वहां श्रीपद्मनाभस्वामी की संस्कृत-ज्ञा-एक-शिष्या देवी, ब्रह्मविद्वर-सदाशिव-ब्रह्मेन्द्र-सरस्वती-प्रणीत-'सर्वं ब्रह्ममयं रे! रे! सर्वं ब्रह्ममयं' 'खेलति पिण्डाण्डे भगवान् खेलति पिण्डाण्डे' इत्यादि-संस्कृत-भाषा के भजन इतने अच्छे-आकर्षक-ढंगसे मस्तानी मधुरवाणी से गाती थी कि-मानों वसन्त-समयकी आम्रकुञ्जमें कोई कोकिला कूज रही हो। श्री पूज्य स्वामीजी महाराज प्रतिदिन इन भजनों को मस्त हुए सुनते रहे उस आश्रमके चारों तरफ चन्दनके हरे भरे वृक्ष ही वृक्ष लहरा रहे हैं। कुछ लोग कहते हैं कि-चन्दन वृक्ष में उसकी मनोरम सुगन्धि में आसक्त हुए-सर्प ही सर्प लिपटे रहते हैं, परन्तु हमने वहां चन्दन के कई वृक्ष देखे, परन्तु हमें तो एक भी सर्प देखने को नहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मिला। लोगों की यह उक्ति मिथ्या ही सिद्ध हुई।

वहां से हम दश-मील की दूरी पर स्थित श्रीरँगपट्टन मोटर द्वारा गये। यह भी एक पुण्य-क्षेत्र है। इसमें इन्दिरा-रमण भगवान् श्री विष्णुका भव्य मंदिर है। वहां से वापस आकर रविवार को हम कृष्णमहासागर देखने गये। यह स्थान भी मैसूर से करीब १० मील दूर होगा। इसमें कावेरी-नदी के जल का अवरोध किया गया है। विशाल सागर-जैसा ही इसका मनोरम दृश्य है। बहुत ही ऊँचा-लम्बा चौड़ा इसका बांध बांधा गया है। इसके नीचे 'कन्नंबाडीकट्टे' नामक स्थल में वृन्दावन कुंज बना हुआ है! रात्रि में ही इसका मनोरम-प्रदर्शन होता है। बहुत लोग इसे देखने जाते हैं। स्थानीय-भक्त लोग हमें भी उस समय वहां ले गये। दूर से ही इसका मनोहर-रंग-विरंगा-कुञ्ज-जैसा ही दृश्य दीख पड़ता है। इसमें-विविध रंगकी अनेक जल-धाराएँ-हर हर करती हुई बहती दीख पड़ती हैं। अनेक रंगोंके फौवारे उड़ते हुए कुञ्जकी भ्रान्ति उत्पन्न कर देते हैं। उन जलोंके नीचे विद्युत् के रंग-विरंगी कांच वाले-बड़े बड़े लट्टु लगा दिये गये हैं। इसलिये कांचों का रँग विद्युत्-प्रकाश द्वारा जलमें संसृष्ट होकर जलको विविध रँगमय बना देता है। भावुक-भक्त हृदयको यहां ऐसा भास होजाता है कि-नन्दनन्दन रसिक शेखर व्रजेन्द्र-भगवान् श्यामसुन्दर अपनी प्रेयसी-दिव्य-सौन्दर्य-लावण्य-माधुर्यमयी भगवती-रामेश्वरी श्रीराधाजीके साथ इसी ही कुञ्जसे अभी ही प्रकट होकर हमें दर्शन देकर निहाल कर देंगे। इसलिये इसका 'वृन्दावन कुञ्ज' ऐसा नाम सार्थक है। मैसूरमें एक विदुषी भक्तादेवीने श्रीपूज्य महामण्डलेश्वर महाराजसे भक्तिके विषयमें इस प्रकारके प्रश्न कर ऐसा समाधान प्राप्त किया।

प्रश्न—भगवन्! आचार्यदेव! भक्तिकी क्या महिमा है?

उत्तर—भक्तिकी बड़ी महिमा है, 'भक्ति स्वतन्त्र सकल सुख-खानी, बिनु सत्संग न पावहिं प्रानी।' संसारके वैषयिक-सुख परतन्त्र हैं, क्षणभंगुर हैं, एवं दुःखमय हैं। परन्तु भक्तिका निर्मल सुख-स्वतन्त्र

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है, शाश्वत है, और अखण्डैकरस है। 'कलौ भक्तिः कलौ भक्तिः भक्त्या कृष्णः पुरः स्थितः।' कलियुगमें भक्ति ही कल्याणकारिणी है, एवं कलिके उग्रदोषोंसे रक्षा करती है। भक्तिके प्रभावसे ही भगवान् भक्तके समक्ष प्रकट हो जाते हैं। 'नातिनिर्विण्णो नातिसक्तो भक्तियोगोऽस्य सिद्धिदः।' जो मानव संसारसे न अत्यन्त विरक्त है, न उसमें अत्यन्त आसक्त है, परन्तु जिसमें कुछ कुछ आसक्ति है तथा कुछ कुछ विरक्ति है, ऐसे मध्यम-वृत्तिवाले मानवोंके लिए भक्तियोग, अभीष्ट-सिद्धियोंका दाता है।

जिस प्रकार भगवान् व्यापक हैं, सर्वमय हैं, उसी प्रकार भक्ति भी व्यापक एवं सर्वमयी है। प्रथम माता-पिता में भक्ति होनी चाहिये। घरके इन देवोंको निर्मल-प्रेम एवं सेवा द्वारा सन्तुष्ट कर उनकी शुभाशीर्वादमयी-कृपा प्राप्त करनी चाहिये। पश्चात् आचार्य गुरुदेवकी भक्ति संपादन कर उनके बताये हुए शास्त्रीय-कल्याणमार्गमें अग्रसर होना चाहिये। उसके बाद देशभक्तिका नम्बर आता है। अपने तुच्छ-स्वार्थोंका-एवं सुखोंका भी बलिदान कर देशका एवं समाजका हित चाहना एवं करना देशभक्ति है। इस प्रकार भक्तिका क्षेत्र केवल मंदिरोंमें ही नहीं, किन्तु समग्र विश्वमें फैल जाता है। निखिल-चराचर विश्वमें उस विश्व-नियन्ता-सर्वात्मा-भगवान्की अनुभूति कर 'निज प्रभुमय देखहिं जगत्, कासन करहिं विरोध' के अनुसार निर्दोष-सेवामय-प्रेममय-प्रभुमय-जीवन बना देना ही भक्तिका प्रशस्त लक्ष्य है। भक्ति एक-अंकके समान है, और अन्यान्य साधन शून्यके समान हैं। अंकके साथ रहने पर ही शून्योंकी कीमत रहती है, न रहने पर कुछ नहीं। उसी प्रकार भक्तिके होने पर ही विवेकादि-साधनोंकी सफलता है, नहीं तो भक्ति शून्य वे साधन निष्फल हो जाते हैं। इसलिये भक्तिका महत्त्व, शास्त्रोंमें एवं लोकमें भी प्रसिद्ध है।

प्रश्न—गुरुमहाराज ! अनन्य-भक्ति किसे कहते हैं ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उत्तर—अनन्य यानी उस प्रियतम-इष्टदेवसे भिन्न—अन्य कोई भी पदार्थ द्रष्टव्य एवं चिन्तनीय न रहे, वही भक्तिमें अनन्यत्व है। आंखें सर्वत्र उसे ही देखें, परमप्रेमास्पद-परमानन्दस्वरूप सर्वात्मा भगवान् ही सदा आंखोंके सामने रहें। वे आंखें ही न रहें, जो तदन्यको देखना चाहें। वह हृदय ही टूक-टूक हो जाय, जिसमें उसके अतिरिक्त अन्यका भाव हो, चिन्तन हो। अनन्य-प्रेमसे लबालब भरा हुआ हृदय वह है—जो भीतरमें आप ही आप बोल उठता है कि—हे आराध्य-देव ! मुझे केवल तेरी ही जरूरत है, अन्यकी नहीं। तू ही एकमात्र शिवं सत्यं सुन्दरं है, अन्य नहीं, इसलिए मैं तुझे ही चाहता एवं रटता हुआ, तुझमें ही फना होना चाहता हूं। तेरी तन्मयता इतनी बढ जाय कि—मैं तू हो जाऊँ और तू मैं बन जाय। तुझसे मैं अन्य न रहूँ, एवं तू मुझसे अन्य न रहे। तुझमें एवं मुझमें अभेदभावकी प्रतिष्ठा हो जाय। मेरी यह तुच्छ-मैं, उस महान् तू में जल में बर्फकी भांति गल मिल जाय। यही अनन्य भक्तिका स्वरूप है'

प्रश्न—कृपानिधे ! महात्मन् ! भक्ति लाभके क्या साधन हैं ?

उत्तर—सत्संग संयम एवं विश्वास। आदर्श-चारित्र्यशील-भक्तोंके सत्संगसे ही भक्तिका उदय होता है। जैसा संग वैसा रंग, यह प्रसिद्ध है। इसलिये सत्संगका बड़ा महत्त्व है। अतः सत्संग यह प्रथम एवं प्रधान साधन है। संयम द्वितीय साधन है। विवेक-विचार द्वारा इन्द्रियोंकी स्वाभाविकी-विषय लोलुपताका निवारण करे। निश्चय करे कि—विषय लोलुपता ही उग्र दुःख है। विषयासक्त-मानव कभी सुखी नहीं हो सकता। 'कामस्य वशगो नित्यं दुःखमेव प्रपद्यते।' विषयोंकी कामनाओंके आधीन रहने वाला मानव सदा दुःख ही का अनुभव करता है। अतः विषय-तृष्णाका त्याग किये बिना कोई भी मानव, शान्ति एवं भक्ति प्राप्त ही नहीं कर सकता। इस प्रकार धन-तृष्णा, मान-प्रतिष्ठाकी तृष्णा, आदि दुःखदायिनी तृष्णाओंका भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नितान्त त्याग करे, यह त्याग भी एक प्रकार का मनः संयम है। तृतीय साधन है—विश्वास। सर्वात्मा महान् विश्वनियन्ता-भगवान्के अस्तित्व में पूरा विश्वास रक्खे. एवं तस्यैवाहं. ममैवासौ. अर्थात् उस भगवान् का ही मैं हूँ. और वे भगवान् मेरे ही हैं. ऐसी दृढ विश्वासमयी-शरणागतिकी भावना हरदम रक्खे। विश्वास बिना भक्तिकी सिद्धि नहीं होती। अतः सत्संग नन्दन-वन है, संयम कल्पवृक्ष है, एवं विश्वास कामधेनु है। जब साधक, इस दिव्य-नन्दनवनके कल्पवृक्षकी शीतल-मधुमयी छायामें बैठकर कामधेनुका अनुग्रह प्राप्त कर लेता है, तब उसी समय आनन्दमयी-अमृतमयी-भक्तिमाताका प्राकट्य हो जाता है।

बेंगलूर।

मैसूर में १५ दिवस रहकर पश्चात् वहां से बेंगलूर गये। यहां प्रथम अनन्त-स्वामी मठमें १० दिन रहे। स्वामी हरिहरानन्द भारती जीने तथा उनके-भक्त गृहस्थोंने मण्डलीका अच्छा सेवा सत्कार किया, पश्चात् स्वामी ब्रह्मानन्दजी के मठमें ८ दिन ठहरे। यहां से तीन दिन के लिए योगनन्दीश्वर-भोगनन्दीश्वर क्षेत्रमें गये। यह स्थान ऊंचे पर्वत पर है। यहां मंसूरीके समान विशेष शैत्यका अनुभव होता है। अच्छा अरण्य जैसा रमणीय एकान्त स्थल है। यात्रामें भी सर्वत्र सत्संग, प्रवचन, भक्तों के प्रश्नोत्तर होते ही रहते थे।

बेंगलूरमें किसी व्यापारी सेठ-भक्तने कहा कि—भगवन्! यहां एक शंकर-मठ है, इसमें शृंगेरी-मठके आचार्य-स्वामी कभी कभी पधारते हैं। हम लोग भी श्रद्धापूर्वक दर्शन-पूजन-भेंट आदि करने जाते हैं। परन्तु वहां बड़ा ही भेद-भाव का वर्ताव किया जाता है। जो ब्राह्मण होता है. वह तो आचार्य के समीप जाकर उनके हाथ से दी हुई विभूति (भस्म) प्रसादरूपसे पा सकता है। और जो ब्राह्मणेतर होते हैं—जैसे हम लोग व्यापारी सेठ आदि—उनको दूर ही अछूतों की तरह रखते हैं, आचार्य के समीप जाने नहीं देते, न आचार्य उनको साक्षात्

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भस्म-प्रसाद देते हैं। कहिये-भगवन्! साधु-महात्माओं के दरबार में ऐसा जाति मूलक-पक्षपात क्यों होना चाहिये?, साधु-महात्मा तो अद्वैतवादी एवं समदर्शी होते हैं, सिद्धान्तरूपसे अभेदभावका प्रतिपादन करते हैं। अतएव उन्हें तो किसी भी वर्णका अभिमान नहीं ही रखना चाहिये। तथापि उनका ऐसा भेदभाववाला पक्षपातमूलक व्यवहार देखकर हमारा श्रद्धालु-चित्त भी वहां जानेके लिए हिचकता है। देखिये-महाराज! हम लोग उन ब्राह्मणोंका आदर करते हैं, परन्तु वे लोग हमें शूद्र शूद्र कहकर हमारा अनादर करते हैं। शास्त्र का प्रमाण देते हैं कि-'कलावाद्यन्तयोः स्थितिः' अर्थात् कलियुगमें ब्राह्मण एवं शूद्रका ही स्थिति है, यानी क्षत्रिय एवं वैश्य सबके सब कबके मर चुके हैं। तब हमारा चित्त बड़ा उद्विग्न हो जाता है। आप प्रत्यक्षतः देख सकते हैं कि-हम लोग रूपसे, रंगसे, ढंगसे, आकृति से, बुद्धिसे, आचारसे किसी भी गुण एवं कर्मसे उनकी अपेक्षा कम हों तो हम लोग इस प्रकारकी तुच्छताके भाजन हो सकते हैं। परन्तु हम उनसे न्यून तो किसी भी प्रकारसे सिद्ध नहीं हो सकते, अधिक नहीं तो समान तो सिद्ध हो सकते हैं। हमारे गृहोंकी देवियों को भी देखिये, उनमें भी सुन्दरता आदिके विषयमें किसी भी प्रकार न्यूनता नहीं दीख पड़ेगी, अधिकता ही दीख पड़ेगी। आचारके विषयमें तो हम यहांके कई जैन्टलमैन-ब्राह्मणोंको जानते हैं—जो होटलोंमें जाकर मांस-मदिरा उड़ाते हैं, अण्डे खाते हैं, जब देखो, तब उनके मुंहसे सिगरेटका धुआं ही निकलता रहता है, संध्या-गायत्रीतो जानते ही नहीं। फिर भी वे जातीयताके मिथ्या-अभिमान में इतने अकड़े रहते हैं, और दूसरोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते रहते हैं कि-न पूछो बात। इस प्रकारकी बातें वह सेठ पूज्य-श्रीमहामण्डलेश्वर जी महाराज से कहता रहा। और श्री स्वामीजी गंभीर होकर चुपचाप सुनते रहे।

उस समय पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज, हमारे सामने देख

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर विषाद भरी वाणीसे कहने लगे कि-इस दक्षिण देशमें ब्राह्मण एवं नौनब्राह्मणका भेदभाव बड़ा उग्र प्रतीत होता है, जो कि कभी द्वेष-वैर-विरोधका बढ़ाने वाला हो जाता है, यह बड़े खेदकी बात है। और यह बड़े संतोषकी बात है कि-हमारे उत्तर-भारतमें ऐसी उग्रता नहीं है। चारों ही वर्ण परस्पर प्रेम-सद्भाव रखकर मिले-जुले रहते हैं। पुनः श्रीस्वामीजीने उस सेठके सामने देखकर कहा कि-उस शंकरमठकी शिकायत हमसे नहीं, उन आचार्य महाराजसे ही करनी चाहिये। हमारे यहां तो किसी भी प्रकारका वैसा पक्षपात या भेद-भावबाला व्यवहार नहीं किया जाता। किसीका किसी भी प्रकारसे अनादर एवं किसीके प्रति घृणाभाव नहीं किया जाता। सबके प्रति समानरूपसे प्रेम-सद्भाव ही रक्खा जाता है।

उस समय हमारी मण्डलीके वयोवृद्ध-प्रस्थान-त्रय भाष्यके विद्वान-स्वामी श्री शान्तानन्द जी, पूज्य महामण्डलेश्वर-महाराजकी अनुमति लेकर सामने बैठे हुए स्थानीय-सभी भक्तोंके प्रति-दशनाम परमहंस-संन्यासी-संप्रदायका यथावत् परिचय करानेके उद्देशसे इस प्रकार कहने लगे कि-आद्य-जगद्गुरु आचार्य भगवान् श्रीशंकरस्वामी का दो संप्रदाय हैं-एक परमहंस संप्रदाय, और द्वितीय दण्डी संप्रदाय। एक तरफ प्रशंसनीय उदार-भाव देखे जाते हैं, तो दूसरी तरफ वैसे कट्टर-संकुचित-भाव। उस एकमें द्विजरूप-वर्णत्रयको संन्यास दिया जाता है, तो उस द्वितीयमें केवल ब्राह्मण-जाति वालोंको ही। उस एक सम्प्रदायके प्रणेता हैं-वार्तिककार सुरेश्वराचार्य, और द्वितीय संप्रदाय के प्रणेता हैं-पद्मपादाचार्य। अतएव श्रीसुरेश्वराचार्यजीने बृहदारण्यक भाष्य-वार्तिकमें वर्णत्रयके संन्यासका बड़े जोरदार शब्दोंसे प्रतिपादन किया है, और उस वार्तिककी टीका प्रणेता स्वामी आनन्दगिरिजीने अच्छे ढंगसे उसका समर्थन किया है। इसलिए हमारी इस दशनाम परमहंस-परिव्राजक-संन्यासी संप्रदायमें वैसे जातीयता-मूलक संकुचित भाव नहीं होते, किन्तु प्रशंसनीय-उदारभाव ही देखे जाते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारे दशनाम-परमहंस-संप्रदायके आचार्य-श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ महामण्डलेश्वर महाराज होते हैं। समग्र भारतमें दशनामके आधार पर जिनकी संख्या दश की है। जो अन्यान्य-शंकराचार्योंके जैसा ही गौरव रखते हैं। दशनामकी काशी-हरिद्वार-हृषीकेश आदि पुण्य-तीर्थक्षेत्रोंमें दश-अद्वैत पीठें हैं। उनके ऊपर दश महामण्डलेश्वर महाराज अधिष्ठित होते हैं। जो बड़े विद्वान्-प्रखरवक्ता, सदाचारी तेजस्वी-प्रभावशाली-वैदिक-सनातनधर्मके प्रचारक होते आये हैं, और वर्तमानमें भी हैं। उनमेंसे एक ये हमारे आचार्यप्रवर-पूज्य महाराज हैं—जो हरिद्वार कनखलके प्रसिद्ध बंगला मठकी पावन-अद्वैत-पीठके अधिष्ठाता हैं। ये वेदादि-समस्त शास्त्रोंके उद्भट-पण्डित हैं, महनीय अद्वैत-सिद्धान्तोंके यशस्वी प्रचारक हैं। इनकी कैलासपति-दक्षिणामूर्ति श्रीशंकर जसी कैसी सुन्दर-आकर्षक तपस्विनी-तेजस्विनी भव्य-श्रद्धेय पवित्र मूर्ति है। इत्यादि प्रशंसाकी बातें-श्रद्धाके वशीभूत हुए-स्वामीशान्तानन्दजी महाराज जब विशेषरूपसे कहने लगे—तब श्रीपूज्य स्वामीजी महाराजने निषेधात्मक इशाराकर एवं मुस्कराकर कहा कि—बस कीजिये, आपके प्रवचनका समय अब समाप्त हो गया। ठीक ही तो है-श्रेष्ठ-महापुरुष, अपनी प्रशंसा एवं अन्योंकी निन्दा सुनकर बड़े संकोचका अनुभव करते हैं।

उस समय वहां एक वयोवृद्ध-गौड सारस्वत-ब्राह्मण-बैठे हुए थे-जो प्रथम किसी सरकारी बड़े पद पर नियुक्त थे—अब रिटायर्ड हैं—उन्होंने भी कहा कि—महाराज! यहांके द्राविड ब्राह्मण, हम गौड सारस्वतोंको भी शूद्र-जैसे ही समझते हैं, अतएव वे हमारे विद्यार्थी बालकोंको राजकीय वेद पाठशालामें वेद पढ़नेके लिए नहीं घुसने देते हैं। देखिये, उनका कितना घृणास्पद-संकुचित मानस है।

उस समय आसनसे उठते हुए श्रीमहामण्डलेश्वर-महाराजने कहा—क्षमा करें, अब हमारा भ्रमण करनेका समय हो गया है, इसलिए रात्रिमें आठ बजे जब हमारा प्रवचन होगा, तब मैं एकता संघ-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ठ्ठन आदिके विषयमें जोरदार व्याख्यान दूंगा। आप सब सज्जन श्रवणके लिए आते ही हैं, आपके सभी प्रश्नोंके उत्तर उस प्रवचनमें दे दिये जायेंगे।

श्रीपूज्य महामण्डलेश्वर महाराजने प्रवचनमें एकताके विषयमें बड़ा अच्छा व्याख्यान दिया। श्रीस्वामीजीने कहा—जिस समाजमें एवं राष्ट्रमें परस्पर प्रेम सद्भाव एवं एकता नहीं होती, द्वेष वैमनस्य पृथक्ता एवं घृणाभाव होते हैं, उस समाजका कभी अभ्युदय नहीं होता, उस राष्ट्रका पतन ही पतन बना रहता है। आप सब विचारकर देख सकते हैं कि—हमारा प्यारा यह आर्यावर्त-देश, विदेशी-विधर्मियोंका गुलाम क्यों हो गया ? क्या कारण है ?। यही प्रत्यक्ष कारण है—परस्पर प्रेम सद्भावका अभाव, संघट्ठनका अभाव। अतएव किसी विख्यात कविने यह क्या ही अच्छा कहा है कि—

परतन्त्र-भारत क्यों बना ? हम भी पड़े क्यों कष्टमें ?।
उत्तर यही है—ऐक्य का आदर नही है देश में ॥
ऐ भारतियो ! इस विषैली-फूटका शिर फोड दो।
सम्बन्ध-अविचल-प्रेमयुत-अब एकता से जोड़ दो ॥

जो कोई दूसरोंका अनादर करता है, उसका कभी कोई आदर नहीं करता। वही नीच है-जो दूसरों को नीच समझता है। दूसरों को घृणा की दृष्टि से देखने वाला-चाहे वह चतुर्मुख-ब्रह्मा भी क्यों न हो ? वह कभी महान् नहीं माना जाता। जो कोई दूसरों का सन्मान करता है, वह दूसरों का ही नहीं, अपना भी सन्मान करता है। जो कोईदूसरों से प्रेम-सद्भाव रखता है, वह दूसरों के लिए ही नहीं, किन्तु अपने लिए भी प्रेम-सद्भाव के प्रशस्त-बीज बोकर सहायता एवं सुख-शान्ति रूपी इष्ट-फलोंको प्राप्त करता है। अतएव महाभारत के उद्योग पर्वमें कहा है कि—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं, न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः।
न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति, न वै भिन्नाः प्रशमं रोचयन्ति ॥
(३६।५८)

'धूमायन्ते व्यपेतानि, ज्वलन्ति सहितानि च।
धृतराष्ट्रोल्मुकानीव ज्ञातयो भरतर्षभ! ॥' (३६।६०)

अर्थात् जिस समाज के एवं देश के लोग, परस्पर वैमनस्य, द्वेष एवं घृणा भाव के कारण भिन्न-भिन्न बने हुए हैं। वे न कभी धर्म का पालन कर सकते हैं, न सुखी हो सकते हैं, न गौरव प्राप्त कर सकते हैं, न शान्ति। जिस प्रकार पृथक् पृथक् हुए उल्मुक (कुछ जले हुए काष्ठ) जलते नहीं, किन्तु प्रभूत धुआँ निकालकर अशोभनीय हो जाते हैं, और दुःखदायी अन्धकार को बढ़ाते हैं। वे ही उल्मुक जब परस्पर संमिलित हो जाते हैं, तब प्रज्वलित हो उठते हैं, और अन्धकार दूर कर सुखद-प्रकाश फैलाते हैं उस प्रकार इन ब्राह्मणादि-ज्ञातियोंके विषय में भी समझना चाहिये। इसलिए भिन्न-भिन्न हुए मानवोंका विनाश एवं पतन रूपी अनिष्ट फलके अतिरिक्त-उन्हें इष्ट-लाभ कुछ भी नहीं मिलता। अतएव विनाशकारी इस भिन्नताका परित्याग कर-अभ्युदय कारी एकता का ही आश्रय लेना चाहिये। हिन्दी के विचारशील किसी कवि ने एकता के विषय में यह क्या ही अच्छा कहा है कि—

एक ही समान पाया जीवन धराके मध्य, रंग ढंग एक ही है, एक ही जमात के।
एक ही समान पाप पुण्य भोगते हैं सदा, एकही स्वभाववाले और एक गातके।
एक ही समान बन रहते हैं सकल मिल, एकही बने हैं सदा साथी दिन रात के।
फिर यह कैसा ऊँच-नीचका विचार कहो, छूत किस बातके, अछूत किस बातके ॥

भगवान् श्रीरामका आदर्श एवं प्रेरणामय जीवन देखिये, जिन्होंने मनुष्यों की तो बात क्या? किन्तु भालु एवं बन्दरों से भी प्रेम किया। और उन्हें अपने वशमें बनाकर उनकी सहायता से दुश्मन का विजय किया। जगद्गुरु-आचार्य-आद्य शंकर स्वामी कितने उदार-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विचार के थे कि-जिन्होंने-'चाण्डालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु गुरुरित्येषा मनीषा मम ।' (जिसकी बुद्धि ब्रह्म में स्थिर है, वह चाण्डाल हो या द्विज हो, वह गुरु है, ऐसी मेरी सम्मति है) यह कह कर भारत को एकता एव उदारता का सुखद-संदेश दिया ।

'कलावाद्यन्तयोः स्थितिः' यह वचन किसी धूर्त एवं द्वेषीका बनाया हुआ है, अतएव वह कभी प्रामाणिक नहीं हो सकता । कोई प्रतिपक्षी 'न कलौ ब्राह्मणाः सन्ति' (अर्थात् कलियुग में ब्राह्मण नहीं हैं, सब के सब मर गये ।) ऐसा वचन बनाकर कहेगा तो क्या उसे ब्राह्मण लोग मानेंगे, कदापि नहीं । इस लिये ब्राह्मणों को ऐसा पूर्वोक्त दूसरों का अपमान एवं दुःखजनक-वचन कदापि नहीं हीं बोलना चाहिये । एवं मिथ्या-अभिमानके वशमें होकर अन्योंसे घृणाभाव भी नहीं रखना चाहिये । वस्तुतः शास्त्र-दृष्टि से देखा जाय तो ब्राह्मण कौन हो सकता है ? प्रामाणिक शास्त्र कहता है-कि—

ब्राह्मणानां हि ब्राह्मण्यं, ब्रह्मचर्यादभिव्यज्यते ।
संप्राप्य ब्रह्मनिष्ठत्वं, ब्राह्मण्यं पूर्णमाप्यते ॥

अर्थात् ब्राह्मणोंका ब्राह्मणत्व, ब्रह्मचर्यके पालनसे अभिव्यक्त होता है, और ब्रह्मनिष्ठता को प्राप्तकर पूर्ण रूप से ब्राह्मणत्वकी प्राप्तिहोती है । अतः सच्चा ब्राह्मण वह है-जो सबसे-प्राणीमात्र से अपने समान प्रेम रखता है, जिसे देह-जाति आदिका लेश भी अभिमान नहीं है, जो विद्या-एवं विनयसे संपन्न है, सर्वभूतहिते रत है, सत्य-हित-प्रिय भाषी है, संयमी है, जिसका त्यागमय-पवित्र सदाचारी सात्त्विक जीवन है । ऐसा ब्राह्मण श्रद्धेय है, वन्दनीय है परिशिष्ट-जो नाममात्रके शमादि गुणविहीन एवं संध्यादि धर्म कर्म हीन-अहंमन्य हैं, समाजमें द्वेष एवं घृणाके कुत्सित भाव फैलाते हैं, और देशमें वैमनस्य बढ़ाते हैं, वे पवित्र ऋषियोंके वंशज ब्राह्मण नहीं किन्तु रावण के वंशज हैं, एवं समाज संघट्टन तथा देशाभ्युदयके विघातक शत्रु हैं । ऐसा समझकर उनकी नितान्त उपेक्षा ही कर देनी चाहिये ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकारका श्री पूज्य महामण्डलेश्वरजी महाराजका निष्पक्ष-पात-एवं समाज हितकारी पृथक्ताकी निन्दाका एवं एकताकी प्रशंसाका प्रवचन सुनकर सभी श्रोतागण बहुत ही प्रसन्न हुए, एवं धन्य धन्य बोलने लगे।

प्रतिदिन सायंकाल चन्द्र-मौलीश्वर-भगवान् शंकरकी आरती पूजा तथा उसके बाद श्रीपूज्य-महामण्डलेश्वरजी महाराजकी पुष्पाञ्जलि भी बड़े धूमधामसे होती थी। उस समय स्थानीय-धार्मिक-भक्त नर-नारियोंकी हजारोंकी संख्यामें उपस्थिति होती थी। भावुक-देवियां शुक्ल-वर्णकी सुगन्धी पुष्पमालाओंका बड़ा ही सुन्दर निम्नोन्नत-आकारका मुकुट बनाकर तथा अनेकों सुन्दर-मालाएँ बनाकर श्रीपूज्य स्वामीजी महाराज को पहिनातीं थी। पुजारी ब्रह्मचारी प्रेमसे कर्पूर निराजन करता था. दो महात्मा चमर ढूलाते थे। सभी महात्मा लोग आचाय स्तुतिके श्लोक बोलते थे। उस समयका दृश्य बड़ा ही आनन्द-दायक एवं भक्तिवर्धक हो जाता था। पश्चात् मधुरस्वरसे महिम्न-स्तोत्रका पाठ एवं शिवनामावलिका कीर्तन होता था। अन्तमें सभीको भगवान्का प्रसाद बांटा जाता था। और कुछ जिज्ञासु-भक्त-गण अनेक विध प्रश्न कर उनके मनः तुष्टिकर उत्तर भी पाते थे।

बम्बई से हरिद्वार-कनखल।

बेंगलूरमें २२ रोज रहकर पश्चात् बम्बई आये। मार्गमें स्वामी हरिहरानन्द-भारतीजीका संन्यास-संस्कारके निमित्त दो रोजके लिए तुङ्गभद्रा-नदी पर उतरे। बम्बईमें चातुर्मास किया। प्रथम कुछ रोज गुलालवाडीमठमें ठहरे। पश्चात चौपाटी पर मरीनामेनशनमें दो मास रहे। प्रतिदिन भूलेश्वर भगतवाड़ीमें पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज का गीता पर प्रवचन होता था। श्रीब्रचीबाई, राधाबाई, मोतीबाई आदि देवियोंकी प्रेरणा एवं सहायतासे ६००० की संख्यामें 'श्रीशंकर-सूक्तसुधा' का प्रयाग कुम्भमें महात्माओंको एवं जिज्ञासुओंको अमूल्य बांटनेके लिए भगवती प्रेसमें मुद्रण किया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बम्बईमें किसी जिज्ञासु-मारवाड़ी सेठने श्रीस्वामीजी महाराज से इस प्रकारके अनेक विध प्रश्नकर-ऐसा यथार्थ समाधान प्राप्त किया था—

प्रश्न—भगवन् ! यह भस्म-धारणका क्या रहस्य है, एवं क्या महत्त्व है ?

उत्तर—भस्म यह वैराग्यका चिह्न है, और अद्वैत-सिद्धान्तकी प्रतीक है। भस्म लोकमें खाक नामसे प्रसिद्ध है। यह सबको प्रत्यक्ष है कि–यह शरीरादि-समस्त जगत् भी आखिर खाक हो जाता है। जिस रूपमें इसे हम देखते हैं वह रूप इसका अवश्य ही मिट जाता है। इसलिए भस्म धारणके समय महात्मा लोग, संसारसे वैराग्य-भावको प्रदीप्त करनेके लिए वेदका यह मन्त्र बोलते हैं—'ॐ अग्निरिति भस्म, वायुरिति भस्म, जलमिति भस्म, स्थलमिति भस्म, व्योमेति भस्म, सर्वं ह वा इदं भस्म, मन एतानि चक्षूंषि भस्मानि।' अर्थात् अग्नि भी भस्म है, वायु भी भस्म है, जल भी भस्म है, स्थल-भूमि भी भस्म है, आकाश भी भस्म है, यह सब कुछ भौतिक जगत् भी भस्म है, मन और ये चक्षुरादि-इन्द्रियां भी भस्म हैं। इस प्रकार शरीरादि-नामरूपात्मक-द्वैतप्रपञ्चमें भस्मकी भावना करनेसे वैराग्य-उद्दीप्त होता है, और मन शान्त स्थिर एवं ब्रह्मध्यानके योग्य बन जाता है।

उपनिषदोंमें 'भासनात् भस्म' इस व्युत्पत्तिसे भस्मका ब्रह्म भी अर्थ किया है। अतः यह शुभ्र-भस्म निर्भेद-अद्वय-चित्सुख-पूर्ण ब्रह्मका भी ज्ञापन कराती है। जिस प्रकार भस्म हो जाने पर उसमें काष्ठ-गोमय आदिका प्राक्कालिक कुछ भी भेद-दर्शन नहीं रहता। सबका एक-सा शुभ्रवर्ण हो जाता है। उसी प्रकार अद्वय-ब्रह्मभाव प्राप्त हो जाने पर भेद-भाव–जो समस्त भयशोकादि-अनर्थोंका मूल है–की निवृत्ति हो जाती है। इसलिए–भस्म-धारणकी महिमा शास्त्रोंमें इस प्रकार कही है कि—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'एतानि तानि शिवमन्त्रपवित्रितानि,
भस्मानि भूतदुरितक्षपणक्षमाणि ।
भाले स्थितानि हृदयस्थतमोपहानि,
लुम्पन्ति दैवलिखितानि दुरक्षराणि ॥

'ॐ नमः शिवाय' 'त्र्यम्बकं यजामहे' इत्यादि शिवमन्त्रसे पवित्रकी हुई यह भस्म, पांचभूतोंके बने हुए-शरीरोंके रागद्वेषादि रूप समस्त पापोंके निवारणके लिए समर्थ होती है। ललाटमें धारणकी हुई यह भस्म हृदयके अज्ञानान्धकार एवं तामसिक-भावोंका विनाश कर देती है, और दैव (प्रारब्ध) के लिखे हुए ललाटके खोटे-अक्षरों को भी मिटा देती है।

भस्मकी तीन रेखाएँ—भक्ति ज्ञान एवं वैराग्यका, ब्रह्मा विष्णु एवं महेश्वरका तथा महाकाली महासरस्वती एवं महालक्ष्मी (क्रमशः बलशक्ति, विद्याशक्ति एवं श्री-शोभा, प्रभाव-तेजस्विता-शक्ति) का बोधन कराती हैं।

प्रश्न—महात्मन्! यतिवर! आप लोग काषाय वस्त्र क्यों धारण करते हैं? ऐसा रग पसन्द करनेका भः कुछ अभिप्राय है क्या ?।

उत्तर—हां! हां! इस रंगका भी बड़ा अच्छा अभिप्राय है। जलते हुए अंगारोंका यह रंग है। अतः यह ज्ञानाग्निका ज्ञापन कराता है, अंगारोंमें यदि अग्निका वह देदीप्यमान शुक्ल-भास्वररूप मिश्रित-लाल वर्ण न रहे तो वे अंगारे ही नहीं रहते, काले कोयले हो जाते हैं। उसी प्रकार काषाय-वस्त्रधारी वही सच्चा परिव्राजक संन्यासी है कि—जिसके अन्दर प्रतिक्षण ज्ञानाग्नि धधकती हो। जैसे अंगारोंसे कभी धुंआ नहीं निकलता, वैसे ही ज्ञाननिष्ठ-यतिके हृदयमें संसारके रागद्वेष कभी उठते ही नहीं। अर्थात् ज्ञाननिष्ठा-शून्य रागद्वेषवाला संन्यासी कोयलेके समान तुच्छ है—यह कभी श्रद्धेय नहीं होता, काषाय-वस्त्रको यह कलंकित कर रहा है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रश्न—भगवन् ! यह हमारा प्यारा भारत-देश स्वतन्त्र होना चाहिये।

उत्तर—यह अवश्य ही स्वतन्त्र होगा, अपने घरका आप ही मालिक बनेगा, विदेशियोंकी गुलामी अवश्य ही दूर होगी। देशमें एवं समाजमें संघट्टनका बल बढ़ता ही जा रहा है, यही इसके भविष्यके अभ्युदयकी सूचना देता है।

प्रश्न—भगवन् ! अभ्युदय क्या है ? कृपया इसका कुछ विस्तारसे वर्णन कीजिये।

उत्तर—अभ्युदयका अर्थ है-विकास। जिस प्रकार चन्द्रमा सोलह कलाओंसे विकसित हुआ पूर्ण दर्शनीय एवं अभिनन्दनीय हो जाता है। उसी प्रकार देशका अभिनन्दनीय-अभ्युदय भी सोलह कलाओंके पूर्ण-विकास द्वारा होता है। प्रथम इसकी चार कक्षाएँ हैं—(१) सामाजिक-विकास (२) शारीरिक-विकास (३) मानसिक-विकास (४) एवं आध्यात्मक-विकास।

इन चार-कक्षाओंमेंसे भी प्रत्येकका चतुर्धा विकास होता है। सामाजिक-विकासकी भी चार कक्षाएँ हैं (१) समाज सेवा, परोपकार, श्रमदान, भूमिदान, संपत्तिदान आदि। (२) कुटुम्बका सुधार एवं संरक्षण (३) शिक्षाका सुधार घृणा-द्वेष एवं ईर्ष्याके पोषक-जातीयता-सांप्रदायिकता एवं प्रान्तीयतामूलक वैमनस्यकी निवृत्ति एवं प्रेम-सद्भाव-क्षमाभावकी अभिवृद्धि (४) गौसेवा, माता-पिताकी सेवा, साधु-सन्त-विद्वानोंका सत्कार, धर्मकी सेवा, नीति एवं प्रामाणिकताका व्यवहार। एवं शारीरिक-विकासकी भी चार कक्षाएँ हैं (१) आहार की शुद्धि, स्थानकी वस्त्रोंकी एवं शरीरकी स्वच्छता (२) व्यायाम, आलस्यका त्याग, परिश्रम (३) बीड़ी सिगरेट-शराब आदि मादक वस्तुओंका त्याग (४) संयम-इन्द्रियोंका निषिद्ध-विषयोंसे निग्रह। एवं मानसिक विकासकी भी चार कक्षाएँ हैं (१) दुर्गुणोंका परित्याग (२) सद्गुणोंका धारण (३) नियमित-साधन (४) सत्संग एवं सद्विचारके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

द्वारा स्वभावका परिवर्तन। एवं आध्यात्मिक-विकासकी भी चार कक्षाएँ हैं (१) कल्याणकारी दृढ़ निश्चय एवं आस्तिकता (२) बुद्धि की पवित्रता एवं एकाग्रता (३) सर्वात्मा परमेश्वरका निरन्तर चिन्तन (४) वैराग्य, तत्त्वज्ञान एवं अनन्य-भक्तिके द्वारा शाश्वत-शान्तिका एवं विमल-आनन्दका सर्वदा अनुभव। इस प्रकार देशमें जब सोलह कलाओंका पूर्ण-विकास हो जाता है. तब पूर्णमासीके चन्द्रमाकी भांति देशकी नितान्त स्पृहणीय-स्वतन्त्रता विकसित हो जाती है। इससे देशके सभी मानव संतुष्ट एव सुखी हो जाते हैं।

प्रश्न—भगवन्! कृपानिधान! कुछ लोग कहते हैं कि—एकमात्र भगवान् ही गुरु हो सकते हैं. अन्य कोई गुरु नहीं हो सकता, अतः अन्यको गुरुरूपसे नहीं मानना चाहिये, क्या ऐसा उनका कहना यथार्थ है?।

उत्तर—गुरुकी भांति एकमात्र भगवान् ही माता पिता भी हो सकते हैं, 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव' यह प्रसिद्ध है। अतः अन्य कोई भी माता-पिता नहीं हो सकते, अतः अन्यको माता-पिता-रूपसे भी नहीं मानना चाहिये।

प्रश्न—भगवन्! माता-पिताको क्यों नहीं मानना चाहिये?

उत्तर—तब तुल्यन्यायसे गुरुको क्यों नहीं मानना चाहिये?. जिस प्रकार अदृष्ट-भगवान् रूप माता-पितासे पृथक् दृष्ट-माता-पिता माने जाते हैं, उसी प्रकार अदृष्ट भगवान् रूप-गुरुसे पृथक् दृष्ट-गुरु भी मानना चाहिये। इसलिये भगवान्ने गीतामें स्वयं श्रीमुखसे हितोपदेष्टा-प्रत्यक्ष—गुरुओंकी मान्यताके विषयमें कहा है कि—'उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।' (४ ३४) हे अर्जुन! तू उन ज्ञानवान्-तत्त्वदर्शी-गुरुओंके समीप जा, वे तुझे ज्ञानका उपदेश करेंगे। 'देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं' (१७।१४) गीताके इस वचनमें भगवत्पूजनके अतिरिक्त-गुरुपूजनका भी विधान किया गया है। इसलिए

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारे वैदिक सनातनधर्ममें प्रत्यक्ष-गुरुओंके पूजनके लिए गुरुपूर्णिमा पर्व मनाया जाता है। अतः उन लोगोंका-भगवान् ही गुरु हैं, अन्य नहीं,—यह कहना यथार्थ नहीं है।

प्रश्न भगवन! संन्यासी महात्मा स्त्रियों का गुरु कैसे हो सकता है? क्योंकि-स्त्रियों के विषय में कहा है कि—'पतिरेको गुरुः स्त्रीणां' अर्थात् स्त्रियों का एकमात्र पति ही गुरु है, अन्य कोई गुरु नहीं हो सकता।

उत्तर—चतुर्थाश्रमी संन्यासी, इतर-आश्रमियों का बना बनाया गुरु है, उसका गुरुत्व स्वतः सिद्ध है। गुरु यानी कल्याणमार्ग का प्रदर्शक, हितों का उपदेशक-एवं शान्ति का दाता। संन्यासी के समीप चाहे वह पुरुष हो या स्त्री हो, वृद्ध हो, या बालक हो, आर्य हो या तदितर हो, कोई भी क्यों न हो—कल्याण मार्ग के साधनों का उपदेश लेने की अभिलाषा रखकर आता है-उसके लिए प्रार्थना करता है-तो करुणाशील वीतराग विद्वान् संन्यासी महात्मा उसे यथावत् शास्त्रीय उपदेश देकर सन्तुष्ट कर देते हैं। वह श्रद्धालु जन-स्त्री या पुरुष, दुर्गुणों को दूर हटाकर सद्गुणों की शिक्षा देने वाले अपने मनके सन्तापों को मिटाने वाले-शान्ति एवं आनन्द देने वाले-हृदय में भक्ति रसकी शीतल-मधुर मंदाकिनी गंगा बहाने वाले, ज्ञान की ज्योति जगाने वाले एवं पशुता हटाकर मनुष्य को महान् देव बनाने वाले-उन प्रत्यक्ष गुरूओं के प्रति कृतघ्नता निवारण के लिए आदर सन्मान एवं पूज्य भाव रखता है एवं गुरुभाव प्रदर्शित करता है, तो इसमें अशास्त्रीयता कुछ भी नहीं। प्रत्युत वह शास्त्रानुमोदित-शिष्टाचार का पालन कर रहा है। स्त्रियोंका पति भी एक-विलक्षण-प्रकारका गुरु है तो संन्यासी-महात्मा भी उससे विलक्षण-प्रकारका हितोपदेशक रुप गुरु माना गया है। इस लिये संन्यासी का 'जगद्गुरु' यह टाइटल यथार्थ है। माता, पिता, अध्यापक, अन्नदाता भयत्राता आदि अनेक प्रकार के गुरु माने गये हैं, परन्तु उनकी अपेक्षा सद्गुरु का स्थान अति श्रेष्ठ है। पुरुषों के समान

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्त्रियों में भी जिज्ञासा एवं स्वोद्धार की कामना रहती ही है। इस लिए श्रुति ने सामान्यरूप से मनुष्य मात्र के लिए गुरु के समीप गमन का विधान किया है—'तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्' (मुं० उ० १।२।१२) उस सद्ब्रह्मतत्त्व के विज्ञान के लिए वह श्रद्धा एवं जिज्ञासा के साथ श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ- सद्गुरु के समीप जावे।

ऐसे प्रामाणिक एवं युक्ति-युक्त उत्तर सुनकर वह मारवाड़ी सेठ बहुत प्रसन्न हुआ। बम्बई-नगर का जलवायु, स्वास्थ्य के अनुकूल न होनेके कारण श्रीमहाराजजीने सुरत आदिका प्रोग्राम रद्द किया और हम लोग विजयादशमीके रोज बम्बईसे ही सीधे हरिद्वारकेलिए चल पड़े, और द्वादशीको पावन गंगा तट पर सुरतगिरि बंगला-मठमें सकुशल पहुँच गये। इस प्रकार हमारी दक्षिण-तीर्थ-यात्रा निर्विघ्न-सकुशल समाप्त हो गई। यहां आकर पतित-पावनी भगवती-विष्णुपादोदकी-शंकरजटाविहारिणी श्रीगङ्गाजीका दर्शन कर पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज तथा सभी महात्मा आनन्द विभोर हो गये। श्रीस्वामीजी महाराज श्रीगङ्गाजीकी भक्ति विह्वल-वाणीसे इस प्रकार स्तुति करने लगे कि—

'देवि ! सुरेश्वरि ! भगवति ! गंगे !,
त्रिभुवनतारिणि ! तरलतरंगे ! ।
शङ्करमौलिविहारिणि ! विमले !,
मम मतिरास्तां तव पदकमले ॥
गाङ्गं वारि मनोहारि, मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि, पापहारि पुनातु माम् ॥
नराकारं भजन्त्येके, निराकारं तथाऽपरे।
संसारभयसंत्रस्ताः नीराकारमुपास्महे ॥

❀ दक्षिण-तीर्थ-यात्रा समाप्ता ❀

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ॐ श्री उमा महेश्वराभ्यां नमः

पूज्य महामण्डलेश्वर स्वामी महेश्वरानन्द महाराजकी

प्रकाशित अन्य पुस्तकें—

(१) ऋग्वेद-संहितोपनिषच्छतकं-अध्यात्मज्योत्स्नाविवृत्तिसमलंकृतम् (केवलसंस्कृतम्)

(२) शुक्लयजुर्वेद-संहितोपनिषच्छतकं-अध्यात्म-ज्योत्स्नाविवृत्तिसमलंकृतम् (संस्कृतम्)

(३) अथर्ववेदसंहितोपनिषच्छतकं-अध्यात्मज्योत्स्नाविवृत्तिसमलंकृतम् (संस्कृतम्)

इमे ग्रन्था: संस्कृतज्ञेभ्यः पोस्ट-व्ययप्रेषणेनामूल्यं दीयन्ते—

प्राप्तिस्थानं—सुरतगिरि बंगला, (गिरीशानन्दाश्रम)

मु० पो० कनखल (हरिद्वार) जिला सहारनपुर, उ. प्र.

(४) गायत्रीमीमांसा-संध्योपासनं, पुरुषसूक्तदेवार्चनम् (हिन्दी-अनुवादसहितम्)

(५) श्रीहरगोविन्ददासव्याख्यानमंदिरम् (हिन्दी अनुवादसहितम्)

(६) श्रीशंकरसूक्तिसुधा।

(७) गीता-प्रवचनसुधा, पृष्ठ ८५० मूल्य २।।रु० मूल लागतसे भी कम, पोस्ट व्यय-पृथक्-(महामण्डलेश्वर महाराजका गीतापर हिन्दी में प्रवचन)

प्राप्तिस्थान—संस्कृतमहाविद्यालय, संन्यासाश्रम,

विले-पारला, बम्बई नं० २४

मुद्रक—टैम्पल, प्रस, कनखल।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi